ब्रह्मचर्य साधना

लेखक—श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

अनुवादक—श्री स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती
तथा
श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द सरस्वती

प्रकाशक—

योग-वेदान्त आरण्य एकैडेमी
शिवानन्द नगर, ऋषिकेश
(हिमालय)

श्री स्वामी कृष्णा नन्द जी द्वारा डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी, शिवानन्द नगर, पो. ओ शिवानन्द नगर जनपद टिहरी गढ़वाल, उत्तर प्रदेश के लिए प्रकाशित

प्रथम संस्करण (अंग्रेजी में).........1934
प्रथम संस्करण (हिन्दी में).........1959
द्वितीय संस्करण (हिन्दी में).........1980
(प्रतियां 2000)

परम पूज्नीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज प्रधान डिवाइन लाइफ सोसायटी के पैंसठवें (65) जन्म दिवस के शुभ अवसर पर उत्तरी क्षेत्र डिवाइन लाइफ सोसायटी अमर कलो लाजपत नगर-4 नई दिल्ली द्वारा 2000 प्रतियां प्रकाशित।

मिलने का पता :—
शिवानन्द प्रकाशन विभाग
पो० ओ० ऋषिकेश (यू. पी.)

मुद्रक :
हमदर्द प्रिंटिंग प्रैस, नेहरू गार्डन रोड, जालन्धर शहर।

|| ॐ ||

अखण्ड ब्रह्मचारियों की पावन स्मृति में

भगवान कृष्ण

भीष्म—लक्ष्मण—हनुमान

स्वामी दयानन्द—रामदास—स्वामी

विवेकानन्द—सनक—सनन्दन

सनत् सुजात—सनत् कुमार

ज्ञानदेव—शंकर

तथा

अन्य नित्य ब्रह्मचारियों

को

समर्पित

प्रकाशक का वक्तव्य

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के अनुभव पूर्ण उपहार को हिन्दी जनता के समक्ष रखते हुये हमें बड़ा ही हर्ष हो रहा है। जन-साधारण के लिये विशेष कर छात्र-छात्राओं के लिये इस पुस्तक की बड़ी आवश्यकता थी। ब्रह्मचर्य-साधना के संबंध में अनुभव-दृष्टि के आधार पर जितनी बातें यहां दी गई हैं उतना अन्यत्र मिलना शायद ही संभव है।

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की यह विशेषता है कि उनके सभी ग्रन्थ अपने अपने विषयों में अद्वितीय सिद्ध होते हैं। यह पुस्तक "ब्रह्मचर्य-साधना" भी विद्यार्थियों, गृहस्थों, साधकों, पुरुषों, स्त्रियों,—सबों के लिये समान रूप से हितकर है। विद्यार्थियों के लिये तो यह वरदान स्वरूप ही है।

आज अधिकांश व्यक्ति भौतिकवादी सभ्यता का गुलाम बन कर आंतरिक बल, शान्ति, शक्ति, विवेक, वैराग्य तथा ज्ञान को खो रहे हैं; तथा काम, क्रोध, दुख, निराशा, दुर्बलता, रोग, आदि के भीषण ताप से विदग्ध हो रहे हैं। उनके लिये यह पुस्तक साहस, पुरुषार्थ, आशा, नित्य शुद्ध जीवन एवं आत्मसाक्षात्कार का पावन संदेश देती है।

यह पुस्तक मूल ग्रन्थ "Practice of Brahmacharya" का हिन्दी अनुवाद है। श्री स्वामी दिव्यानन्द जी ने इसका हिन्दी अनुवाद कर श्री गुरुदेव के प्रति अपनी अनुपम सेवा प्रदान की है।

श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी ने श्री गुरुदेव के लेखों से द्वितीय अध्याय को संकलित एवं अनूदित किया है। इस संकलन से संयुक्त होकर यह पुस्तक अपने ढंग की निराली सिद्ध होगी।

हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि हिंदी जनता इस पुस्तक से प्रेरणा लेकर ब्रह्मचर्य-जीवन के द्वारा आत्म-साक्षात्कार के मार्ग का अनुगमन करें। सभी अज्ञान एवं मृत्यु के बंधनों से मुक्त होकर ज्ञान एवं अमृतत्व की ज्योति से विभाषित हों। हरि ॐ तत्सत्

अनुवादकीय

ब्रह्मचर्य-साधना ही आध्यात्मिक साधना की मूल भित्ति है। शरीर, इन्द्रिय तथा मन की शुद्धता के बिना मनुष्य ब्रह्म-साक्षात्कार प्राप्त नहीं कर सकता। ब्रह्मचर्य साधना सारी भौतिक तथा आध्यात्मिक संपत्तियों की एकमेव कुंजी है। मनुष्य जीवन में अन्य कोई भी विषय इतना महत्त्व नहीं रखता जितना कि ब्रह्मचर्य। ब्रह्मचर्य महान् तप है। ब्रह्मचर्य महान् धन है। ब्रह्मचर्य आत्मिक-ज्योति का विभासक है। ब्रह्मचर्य की शक्ति ही मनुष्य को देवत्व में परिणत कर डालती है। ब्रह्मचर्य हृदय-पद्म को प्रस्फुटित करता है···जिससे करुणा, दया, धैर्य, शक्ति, शौर्य, सहनशीलता, शुद्धता, अहिंसा, अभय आदि दिव्य गुणों की सुरभि प्रसारित होती है।

ब्रह्मचर्य-साधना के ऊपर अनुभवी एवं व्यावहारिक विवरण एवं उपदेशों को प्राप्त करना आसान नहीं है। इस विषय पर अनुभव सिद्ध पुस्तकों की कमी के कारण युवक गण ब्रह्मचर्य-पथ पर चलने में समर्थ नहीं हो पाते। यह पुस्तक हिंदी जगत के इस भारी अभाव की पूर्ति करेगी।

यह श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज द्वारा लिखित "Practice of Brahmacharya" का सरल भाषानुवाद है। साधकों के हितार्थ इस पुस्तक में द्वितीय अध्याय भी संलग्न किया है जिसमें श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के ब्रह्मचर्य संबंधी लेखों के संकलन हैं। यह पुस्तक विद्यार्थियों लिये वरदान स्वरूप है। पुरुष अथवा स्त्री, युवक एवं वृद्ध, गृहस्थी अथवा संन्यासी सभी इससे यथेष्ट लाभ उठा सकते हैं।

आशा एवं विश्वास है कि हमारे प्रयास से हिन्दी भाषा भाषी जनता पर्याप्त लाभ उठावेगी तथा शुद्धतामय जीवन-यापन का दृढ़ संकल्प लेकर ब्रह्म-साक्षात्कार के पथ को प्रशस्त करेगी।

ईश्वर आप सबों को अपनी परम कृपा प्रदान करे।

स्तोत्र

(१) शिव स्तोत्र

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी
सदा सज्जनानंद दाता पुरारी
चिदानंद संदोह मोहोपकारी
प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥

हे अपरिवर्त्तनशील, कल्याणमय पुरारी, के कल्पों अन्त करने वाले, सज्जनों को सदा आनन्द देने वाले, ज्ञान एवं आनन्द की अवधि; मोह को दूर करने वाले, काम के नाशक····हे प्रभु ! मुझ पर कृपा कीजिये, मुझ पर कृपा कीजिये ।

(२) सद्गुरु स्तोत्र

ॐ नमः शिवाय गुरवे सच्चिदानन्दमूर्त्तये ।
निष्प्रपंचाय शांताय निरालंबाय तेजसे ॥

भगवान शिव को नमस्कार जो परम गुरु हैं, जो नित्य जीवन, ज्ञान तथा आनन्द के स्वरूप हैं, जो सारे प्रपंचों से मुक्त हैं, जो शांति की मूर्ति हैं, जो आलंबन या आधार से रहित हैं, तथा जो ज्योतियों की ज्योति—तेजोमय हैं।

(३) गायत्री मन्त्रः

ॐ भूर् भुवः स्वः तत् सवितुर् वरेण्यम् ।
भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

हम ईश्वर तथा उसकी महिमा पर ध्यान करें, जिसने इस जगत की सृष्टि की है, जो पूजा करने योग्य है, जो सारे पापों तथा अज्ञान का निवारक है, वह हमारी बुद्धि को आलोकित करे ।

(४) शान्ति मन्त्रः

हरिः ॐ। वाङ्मे मनसि प्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरावीर्म एधि वेदस्य म आणीस्थः श्रुतं मे मा प्रहासीरनेनाधीतेनाहो-रात्रान्संदधाम्यृतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि तन्मामवतु वक्तारमवत्ववतु मामवतु वक्तारमवतु वक्तारम् ॥

। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

हरि ॐ। मेरी वाणी मेरे मन में प्रतिष्ठित है मेरा मन मेरी वाणी में प्रतिष्ठित है ब्रह्मन्, तू मेरे लिये प्रगट हो। हे मन तथा वाणी तू मुझे उपनिषदों के सत्य को ग्रहण करने में समर्थ बनाते। सुनी हुई वस्तु पुनः मुझसे विस्मृत न बने मैं अध्ययन में दिन तथा रात एक करता हूँ, मैं सत्य का विचार करता हूँ. मैं सत्य बोलता हूं, वह मेरी रक्षा करे, वह मेरे गुरु की रक्षा करे, वह मेरी रक्षा करे, गुरु की रक्षा करे। गुरु की रक्षा करे।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

—:०:—

भूमिका

लिंग तथा अहंकार के अतिरिक्त इस जगत में कुछ है नहीं। अहंकार ही प्रधान वस्तु है। यही आधार है। लिंग तो अहंकार पर ही आश्रित है। यदि विचार द्वारा या—"मैं कौन हूँ?" के अनुसंधान से अहंकार को नष्ट कर दिया जाय तो लिंग–विचार स्वयमेव विनष्ट हो जायगा। मनुष्य—जो अपने भाग्य का विधाता है–अपनी दिव्य महिमा को खोचुका है, वह अज्ञानवश लिंग तथा अ ंकार का गुलाम बन बैठा है जो अविद्या से उत्पन्न हैं। आत्मज्ञान का प्रादुर्भाव आत्मा के इन शत्रुओं को विनष्ट कर डालता है। ये ही दो डाकू हैं जो असहाय, अज्ञ, क्षुद्र, मिथ्या जीव या मिथ्या अहं को प्रपीड़ित कर रहे हैं।

हाल के कुछ व र्षों में ही—गत पचास वर्ष—विज्ञान का ध्यान मनुष्यांतर्गत लिंग–प्रवृत्ति के स्वभाव तथा उन्नति की ओर आकृष्ट हुआ है। मनोवैज्ञानिक तथा औषधीय विद्यार्थियों ने सभ्य जनता के स्वाभाविक तथा अस्वाभाविक यौन-जीवन के विषय में बहुत ही जाँचपूर्ण खोज की है।

लिंग तथा धर्म के विषयों का निकट संबंध है। सामाजिक प्रगति तथा वैयक्तिक मनोविज्ञान में भी इनका महत्व है। अतः तीनों कालों में समाज के लिए इस विषय की महत्ता प्रमाणित है।

ज्ञान तथा पवित्रता के साथ विषय परायणता नहीं चल सकती। मलों को दूर करना ही जीवन का महान् कार्य है।

विद्युत् कणों में भी कुँवारे तथा विवाहित विद्युत् कण हैं। विवाहित विद्युत-कण जोड़ों में रहते हैं; कुंवारे विद्युत् कण अकेले रहते हैं। ये कुवारे विद्युत् कण ही चुंबकीय विद्युत्शक्ति का निर्माण करते हैं। विद्युत् कणों में भी ब्रह्मचर्य की शक्ति देखी जाती है। मित्र, क्या आप इन विद्युत् कणों से कुछ पाठ पढ़ेंगे? क्या ब्रह्मचर्य के अभ्यास के

द्वारा आप बल तथा आध्यात्मिक शक्ति का विकास करेंगे ! प्रकृति आपकी सर्वोत्तम गुरु तथा पथप्रदर्शक है।

ब्रह्मचर्य के अभ्यास से कोई खतरा या रोग या अनिष्ट की आशंका नहीं है जैसा कि पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक "मानसिक ग्रन्थि" की गलत धारणा रखते हैं। उन्हें इस विषय का व्यावहारिक ज्ञान नहीं है। उनकी यह गलत धारणा है कि अतृप्त लिंग-वृत्ति अनेक मानसिक ग्रन्थि का रूप धारण करती है। "ग्रन्थि" का अन्य कारण है: अत्यधिक ईर्ष्या, घृणा, क्रोध, चिंता तथा उदासी आदि से उत्पन्न मन की मलिन अवस्था ही इसका कारण है।

इसके विपरीत् थोड़ा भी आत्म संयम् अथवा थोड़ा भी ब्रह्मचर्य का अभ्यास मनुष्य को शक्ति प्रदान करता है। यह आंतरिक शक्ति तथा मन की शांति प्रदान करता है। यह मन तथा स्नायुवों को स्फूर्ति प्रदान करता है। यह शारीरिक तथा मानसिक शक्ति को सुरक्षित रखता है। यह स्मृति, इच्छशक्ति तथा मानसिक बल को विकसित करता है। यह अत्यधिक बल, वीर्य, तथा शक्ति प्रदान करता है। यह शरीर का पुनर्गठन करता, कोषों का पुनर्निमाण करता पाचन शक्ति को सबल बनाता तथा जीवन-संग्राम में कठिनाइयों से लोहा लेने के लिए बल प्रदान करता है। पूर्ण ब्रह्मचारी जगत को हिला सकता है। वह प्रभु जीसस की तरह समुद्र की तरंगों को रोक सकता है पर्वतों को चलायमान कर सकता है, ज्ञान देव की तरह प्रकृति तथा पंच-तत्वों पर आदेश चला सकता है। इन तीनों लोकों में ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसे वह प्राप्त न कर ले। सारी सिद्धियां तथा ऋद्धियां उसके चरणों पर लोटती हैं।

वर्णाश्रम धर्म तो आजकल समाप्तप्राय हो चला है। प्रत्येक मनुष्य आज वैश्य अथवा बनिया बन गया है—वह भिक्षा, कर्ज, अथवा चोरी के द्वारा किसी न किसी तरह धनोपार्जन के लिए लालायित है। प्राय

सारे ब्राह्मण तथा क्षत्रिय बनियाँ या वैश्य बन चले हैं। आज कल सच्चे ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय मिलते नहीं। सभी रुपये चाहते हैं। वे अपने वर्णों के अनुकूल धर्म का अभ्यास नहीं करते। मनुष्य के पतन का यह मौलिक कारण है। यदि गृहस्थ अपने आश्रम के अनुसार अपने कर्त्तव्यों का पालन करे, यदि वह आदर्श गृहस्थी बने, तो संन्यास लेने की आवश्यकता नहीं है। गृहस्थी अपने कर्त्तव्य-पालन में विफल हो रहे हैं यही कारण है कि आज संन्यासियों की संख्या बढ़ रही है। गृहस्थ का जीवन उतना ही कठिन है जितना कि संन्यास का जीवन। प्रवृत्तिमार्ग अथवा कर्मयोग का मार्ग उतना ही कठिन है जितना कि निवृत्ति मार्ग या संन्यास का मार्ग है।

बाल्यावस्था में बालक तथा बालिका में कोई विशेष अंतर नहीं रहता। कुमारावस्था प्राप्त करते ही उनमें बहुत अंतर उपस्थित हो जाता है। उनके हाव भाव, ढंग, चाल, बात, दृष्टि, गति, गुण आदि में बड़ा अंतर आ जाता है। यद्यपि महिला मृदु अथवा कोमल दिखाई पड़ती है फिर भी वह क्रोधावस्था में कठोर, कर्कश तथा पुरुषों की भांति बन जाती है। क्रोध, द्वेष तथा घृणा के आवेग में उसकी स्त्रीसुलभ कोमलता नष्ट हो जाती है। स्त्रियों में प्रेम का तत्त्व अधिक है। यदि वे अपने मन को आध्यात्मिक मार्ग में लगावें तो वे सुगमता पूर्वक ईश्वर के दर्शन प्राप्त कर सकती हैं। उनमें स्नेहवृत्ति का अधिक विकास है।

कोष, प्रजा तथा सेना के बिना राजा भी क्या राजा है! सुगन्धि के बिना फूल भी क्या फूल है! पानी के बिना नदी भी क्या नदी है! उसी प्रकार ब्रह्मचर्य के बिना मनुष्य भी क्या मनुष्य है? भूख, काम, भय तथा निद्रा—ये मनुष्य तथा जानवरों में समानरूप से पाये जाते हैं। विचार अथवा ज्ञान ही मनुष्य तथा जानवर के बीच भेद लाता है। वीर्य-रक्षण के द्वारा ही विचार तथा ज्ञान संभव है। यदि मनुष्य विचार हीन है तो वह जानवर ही है। जानवरों में भी मनुष्यों से अधिक आत्म-

संयम है। तथाकथित मनुष्य ही विषयवासना में इतना पतित हो चला है। जिस मनुष्य में काम-वृत्ति गहरी गड़ी हुई है वह वेदान्त को कदापि नहीं समझ सकता वह सैकड़ों करोड़ों जन्मों में भी ब्रह्म साक्षात्कार नहीं कर सकता।

पूर्ण भौतिक तथा मानसिक ब्रह्मचर्य की स्थापना ही वास्तविक संस्कृति है। साक्षात्कार के द्वारा जीव तथा परमात्मा के बीच एकता का साक्षात्कार करना ही वास्तविक संस्कृति है। कामुक सांसारिक मनुष्य के लिये 'आत्मसाक्षात्कार', 'ईश्वर', 'आत्मा', 'वैराग्य', 'संन्यास', 'मृत्यु', 'स्मशान'—ये सभी बहुत ही भयावह जान पड़ते हैं। क्योंकि वह विषयों से आसक्त है। सस्ते शब्द नृत्य, संगीत विलासपूर्ण बातें उन्हें बहुत ही प्रिय हैं। यदि मनुष्य सचाई के साथ जगत के मिथ्या स्वभाव का चिंतन करना शुरू करे तो विषयों के प्रति आकर्षण धीरे धीरे क्षीण होता जायगा। लोग कामाग्नि में झुलस रहे हैं। इस भीषण व्याधि को दूर करने के लिये सभी साधनों का प्रयोग करना चाहिये। सभी व्यक्तियों को चाहिये कि वे इस कामरूपी वैरी को नष्ट करने के लिये सभी साधनों का परिज्ञान रखें। यदि एक साधना से लाभ न हुआ तो उन्हें दूसरा साधन पकड़ना चाहिये। असंस्कृत मनुष्यों में काम पाशवी वृत्ति है। शुद्धता की प्राप्ति तथा सतत ध्यान के अभ्यास से ही ईश्वर साक्षात्कार मिलता है—इसका ज्ञान रखते हुये भी वारम्बार उसी पाशवी क्रिया को करते रहने से मनुष्य में लज्जा आनी चाहिये। प्रतिपक्षी जन कह सकते हैं कि इन विषयों को खुले आम नहीं रखना चाहिये, इन्हें गुप्त रूप से कहना चाहिये। यह गलत है। तथ्यों को छिपाने से क्या लाभ? किसी वस्तु को छिपाना तो पाप है।

करने की शक्ति, तथा अमृतत्व प्राप्त कीजिये। जिसके पास वीर्य पर पूर्ण नियन्त्रण है, वह व्यक्ति उन शक्तियों को प्राप्त कर लेता है जिन्हें अन्य किसी साधन से नहीं प्राप्त कर सकते।

लोग ब्रह्मचर्य के बारे में बहुत बातें करते हैं। परन्तु व्यावहारिक जन तो विरले ही मिलते हैं। ब्रह्मचर्य का जीवन सचमुच ही कठिनाइयों से भरा हुआ है। परन्तु लौह संकल्प, धैर्य तथा संलग्न व्यक्ति के लिये मार्ग सुगम हो जाता है। हम वास्तविक ब्रह्मचारियों को कार्य क्षेत्र में देखना चाहते हैं जो अपने सबल शरीर, आदर्श जीवन, भव्य चरित्र तथा आध्यात्मिक बल से लोगों पर प्रभाव डाल सकें। केवल बातें करने से तो कोई लाभ नहीं होगा। कुछ व्यावहारिक जन आगे बढ़ें तथा आध्यात्मिक तेजस् के द्वारा कुमारों एवं युवकों का पथ-प्रदर्शन करें। सिद्धांत से उदारहण कहीं बढ़कर है।

आज मानव जीवन की औसत अवधि ४० वर्ष की हो गई है जब कि पहले १०० वर्ष की थी। देश के प्रत्येक शुभेच्छु को चाहिए कि वह इस अपमान जनक अवस्था के प्रति सावधानी पूर्वक विचार करे तथा समय रहते ही इसको सुधारने के लिए प्रयत्न शील बने। देश का भविष्य युवकों पर ही अवलंबित है। संन्यासियों, साधुओं, गुरुओं शिक्षकों तथा माता पिताओं का यह कर्त्तव्य है कि वे ब्रह्मचर्य-जीवन को पुनः जनता के जीवन में लाने के लिये प्रयत्नशील बनें।

हे कृष्ण, तू मुझे बहुत प्रिय है क्योंकि तू सत्यमार्ग पर चल रहा है। तू सचाई पूर्वक संग्राम कर रहा है। तू आत्मसाक्षात्कार के मार्ग का अनुगमन कर रहा है। यही कारण है कि मैंने आपको यह सम्मति दी है। तू नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, आत्मा है। हे प्रिय आनन्द! इसका अनुभव कीजिये। इस जन्माधिकार को प्राप्त कीजिये। विविध कार्यों में संलग्न रहते हुये भी इस जन्माधिकार को न छोड़िये। गुहा-जीवन से यह कहीं अच्छा है। यह सक्रिय जीवन है। यह शिव का सम्पूर्ण योग है। यही शंकर तथा बुद्ध का भी योग था।

मेरे प्रिय भाइयो ! याद रखिये आप मांस तथा हाड़ से निर्मित श्वर शरीर नहीं है। आप अमर सर्वव्यापक सच्चिदानन्द आत्मा हैं। ाप सजीव सत्य हैं। आप ब्रह्म हैं। आप आत्मा हैं। आप परम ैतन्य हैं। आप सच्चे ब्रह्मचारी का जीवन-यापन कर इस परमावस्था ो प्राप्त कर सकते हैं।

उपसंहार करते हुये मैं अपने दोनों हाथों को जोड़ कर हार्दिक ार्थना करता हूँ कि आप सभी शांति एवं सम्पत्ति के प्रबल शत्रु काम र विजय पाने के लिये साधना के द्वारा प्रबल संग्राम करेंगे। वास्तविक ब्रह्मचारी ही इस जगत का महान् सम्राट् है। सारे ब्रह्मचारियों को मेरा मूक नमस्कार है। उनकी जय हो ! मेरी प्रार्थना है कि शिक्षक, प्राध्यापक, तथा शिक्षा-विभाग के अधिकारी जन इस महत्वपूर्ण विषय ब्रह्मचर्य की ओर अपना विशेष ध्यान देंगे जिससे कि भावी संतति का उत्थान हो सके।

आपके चेहरों से ईश्वरीय ज्योति विभासित हो !
आप सबों में ईश्वरीय ज्योति अधिकाधिक प्रखर हो !
आपमें दिव्य शक्ति तथा शान्ति सदा के लिये निवास करे !

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

—:०:—

विषय-सूची

प्रथम अध्याय

दूसरा अध्याय

तीसरा अध्याय

चौथा अध्याय

पांचवां अध्याय

छठा अध्याय

सातवां अध्याय

आठवां अध्याय

नवां अध्याय

दसवां अध्याय

परिशिष्ट

(द्वितीय भाग)

—:०:—

प्रिय आत्मन्

पूर्ण ब्रह्मचर्य के बिना आप ठोस आध्यात्मिक उन्नति नहीं सकते। आध्यात्मिक मार्ग में अधूरी साधना को स्थान नहीं है।

सब से पहले शरीर को नियंत्रित कीजिये। तब प्रार्थना, ज कीर्त्तन, विचार तथा ध्यान के द्वारा अपने विचारों को शुद्ध बनाइये

दृढ़ संकल्प कर लीजिये—'मैं आज से ही पूर्ण ब्रह्मचारी बन जाऊंगा

ईश्वर आपको प्रलोभनों पर विजय प्राप्त करने तथा काम-श का संहार करने के लिये आध्यात्मिक बल प्रदान करे। ॐ तत्सत।

—शिवानन्द

ब्रह्मचर्य साधना

पहला अध्याय

ब्रह्मचर्य क्या है ?

ब्रह्मचर्य मन, वचन और कर्म की पवित्रता है। ब्रह्मचर्य अविवाहित जीवन है, ब्रह्मचर्य अव्यभिचार है, केवल जननेंद्रिय को ही काबू में करना ब्रह्मचर्य नहीं है। यह ब्रह्मचर्य की विस्तृत (स्पष्ट) अर्थ में व्याख्या है। ब्रह्मचर्य वेदों और ईश्वर के आशय को निर्दिष्ट (सूचित) करता है। ब्रह्मचर्य में चरित्र निर्माण सम्मिलित है। ब्रह्मचर्य परमावश्यक है। ब्रह्मचर्य एक वांछित पदार्थ है। ब्रह्मचर्य बड़े महत्व की वस्तु है। लोग कहते हैं "ज्ञान शक्ति है।" परन्तु मैं पूर्ण विश्वास के

साथ तथा अपने निजी अनुभव द्वारा यह घोषणा करके कहता हूँ कि चरित्र ही शक्ति है और चरित्र ज्ञान से भी कहीं अधिक श्रेष्ठतर है।

'यम' राजयोग का पहला अंग है। वह है—अहिंसा (किसी प्रकार की हिंसा न करना), सत्य (सत्य बोलना), अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य (अविवाहित पवित्र जीवन-यापन करना), और अपरिग्रह (किसी से कुछ न लेना)—इनमें ब्रह्मचर्य का महत्व सब से अधिक है। ज्ञानयोग में साधक के लिए साधना की नींव दम (आत्म-संयम) है। महाभारत (शान्ति पर्व) में आपको मिलेगा "धर्म की कई शाखायें हैं, परन्तु उन सब का आधार 'दम' है।" जो मनुष्य आधिभौतिक या आध्यात्मिक जीवन में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं, उनके लिए ब्रह्मचर्य का विषय बड़े महत्व का है। बिना ब्रह्मचर्य के मनुष्य सांसारिक कार्यों या आध्यात्मिक अभ्यासों के लिए पूर्ण अयोग्य है।

ब्रह्मचर्य मन, वचन और कर्म से पवित्र (अविवाहित) रहने का व्रत है जिसके द्वारा मनुष्य ब्रह्म को प्राप्त करता है। ब्रह्मचर्य एक दिव्य शब्द है। यह योग का तथ्य (सार) है। अविद्या के कारण हम इसे भूल गए हैं। यह उत्तम योग है जिसके लिए भगवान श्री कृष्ण ने गीता में बड़े जोर के साथ स्पष्ट शब्दों में कहा है कि ध्यान के लिये ब्रह्मचर्य व्रत परम आवश्यक है—(अध्याय ६. श्लोक १४, अध्याय १७. श्लोक १४वें में)। भगवान कृष्ण कहते हैं कि शारीरिक तपों के लिये जो जो आवश्यक वस्तुयें हैं, उनमें ब्रह्मचर्य एक है। पुनः अध्याय ८. श्लोक ११. में

कहा है "योगी जन ध्येय (जिसको वेद वेत्ताओं ने बताया है) को प्राप्त करने के लिये ब्रह्मचर्य का अभ्यास करते हैं।" यही बात कठोपनिषद् अध्याय १-२-१५ में मिलती है।

ईश्वर रस है। रस वीर्य है। रस या वीर्य प्राप्त कर के ही आप नित्यानन्द प्राप्त कर सकते हैं। ब्रह्मचर्य का अर्थ है—वीर्य पर अधिकार, वेदों का अध्ययन, और ब्रह्म चिंतन। जैसा कि महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा है—

कायेन मनसा वाचा सर्वावस्थासु सर्वदा।
सर्वत्र मैथुन त्यागो ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते॥

अर्थात् शरीर, मन और वचन से सब स्थानों और सब स्थितियों में मैथुन से सदा बचे रहना ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्य दो प्रकार का कहा गया है—एक शारीरिक और दूसरा मानसिक। शरीर पर नियन्त्रण रखना शारीरिक ब्रह्मचर्य है। बुरे विचारों पर नियन्त्रण रखना मानसिक ब्रह्मचर्य है। मानसिक ब्रह्मचर्य में कोई भी बुरे विचार मन में प्रविष्ट नहीं होंगे। मानसिक ब्रह्मचर्य शारीरिक ब्रह्मचर्य से कुछ अधिक कठिन है, परन्तु सच्ची लगन और परिश्रम के द्वारा मानसिक ब्रह्मचर्य पर वास्तविक आधिपत्य स्थापित किया जा सकता है। आपको सदा मानसिक ब्रह्मचर्य की भावना अपने सामने रखनी चाहिये। तब आप उसका शीघ्र ही अनुभव करेंगे। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

ब्रह्मचर्य का अर्थ केवल जननेन्द्रिय को ही काबू में रखना नहीं है, परन्तु मन, वचन और कर्म से सारी

इन्द्रियों को भी। निर्वाण पद का द्वार पूर्णब्रह्मचर्य है परमानन्द के राज्य-द्वार को खोलने के लिए पूर्ण (शुद्ध ब्रह्मचर्य एकमात्र कुंजी है। परम शान्ति रूपी धाम क मार्ग ब्रह्मचर्य या पवित्रता से ही आरम्भ होता है।

सांसारिक पदार्थों की इच्छा पूर्ति ही पाप है। स्थूल शरीर तो अलौकिक पदार्थों के विषय में निरन्तर चिंतन करने वाली आध्यात्मिक भावना का एक तुच्छ गुलाम है। मनुष्य की उत्पत्ति इस लिये हुई थी कि वह ब्रह्म या ईश्वर के साथ आध्यात्मिक सम्पर्क रखते हुये जीवन-यापन करे, परन्तु वह उन दुष्ट असुरों के प्रलोभनों के अधीन हो गया जिन्होंने उसको उसके विषय-सुख वाले स्वभाव की ओर प्रवृत्त कर उसे भगवत् चिंतन से दूर कर दिया तथा उसको सांसारिक जीवन यापन करने में जुटा दिया। इसलिये सब विषय सुखों के त्यागने, विवेक और वैराग्य के द्वारा अपने को संसार से दूर रखने, आत्मा के पीछे अकेला जीवन यापन करने तथा ईश्वर की पूर्णता और पवित्रता का अनुसरण करने में ही धर्मानुरूप भलाई है। ब्रह्मचर्य वसंत ऋतु का खिला हुआ पुष्प है जिसकी पंखुरियों में से अमरतत्व निकलता है। धैर्य और वीरता के असाधारण गुण ब्रह्मचर्य रूपी पवित्रता के साथ घनिष्ट संबंध रखते हैं। केवल स्त्री प्रसंग (मैथुन) से बचे रहना ही पर्याप्त नहीं, परन्तु अनियंत्रित भावुकताओं हस्त और वैसे ही अन्य कार्य तथा सब प्रकार के विपरीत मैथुन-अभ्यासों से दूर रहना भी परमावश्यक है। वैसे ही प्रेम संबंधी विचारों तथा विषय भोग संबंधी वृथा चिंतन से सदा दूर रहना भी नितांत अनिवार्य है।

काय-सिद्धि प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य एक आधार है। पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। यह परम आवश्यक है। योग के अभ्यास से वीर्य ओज शक्ति में बदल जाता है। योगी का शरीर पूर्ण स्वस्थ होगा। उसकी चाल में आकर्षण और अनुग्रह होगा। वह (इच्छा मृत्यु) जब तक चाहे उतने ही वर्षों तक जीवित रह सकता है। यही कारण है कि भगवान श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं "तस्मात् योगी भवार्जुन"—अर्थात् हे अर्जुन तू योगी बन।

मैथुन संबंधी विचारों और भावनाओं से मुक्त रहना ही ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य मन, वचन और कर्म से इन्द्रिय-निग्रह है। यह पुरुषों और स्त्रियों दोनों के लिये समान रूप से आवश्यक है। भीष्म, हनुमान, लक्ष्मण, मीराबाई, सुलभा, और गार्गी—ये सब ब्रह्मचारी थे। भगवान शंकर ने कहा है—"ब्रह्मचर्य सब से उत्तम तप है; ऐसा पूर्ण पवित्र ब्रह्मचारी वास्तव में ईश्वर है।"

ब्रह्मचर्य अमरत्व प्राप्त करने के लिये मूल आधार है। ब्रह्मचर्य से आधिभौतिक और आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त होती है। ब्रह्मचर्य शरीर के भीतर रहने वाले काम, क्रोध, लोभ आदि शत्रुओं के साथ युद्ध करने के लिये एक अमोघ शस्त्र है। यह विशिष्ट आनन्द, अखंड और नित्य सुख का देने वाला है। वह अत्यधिक बल, शुद्ध मस्तिष्क, विशालबुद्धि और इच्छाशक्ति, धारणा-शक्ति और उत्तम विचारशक्ति प्रदान करता है। केवल ब्रह्मचर्य के द्वारा ही आप शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त कर सकते हैं।

प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि वह अपने चरित्र को सुधारने का भरसक प्रयत्न करे। आपका सारा जीवन तथा जीवन में सफलता केवल आपके चरित्र निर्माण पर ही भरसक निर्भर है। संसार में सभी महापुरुषों ने जो प्रभुता प्राप्त की है वह केवल अपने चरित्र के ही द्वारा की है। संसार के प्रसिद्ध बुद्धिमान पुरुषों ने जो की ख्याति और मान प्राप्त किया है, वह केवल उनके च के ही द्वारा हुआ है।

ब्रह्मचर्य के अष्ट अंग

ब्रह्मचर्य के निम्नलिखित आठ अंग हैं। तदनु अखंड ब्रह्मचर्य की धारा में आठ अवरोध (विघ्न) आपको इन विघ्नों से पूर्ण विचार, पूर्ण पुरुषाथ अ पूर्ण सावधानी के साथ बचना चाहिये।

(१) दर्शन—किसी स्त्री या स्त्री के चित्र (फो को कामातुर दृष्टि से देखना।

(२) स्पर्शन—स्त्री के पास बैठने, उसको छूने या उ को गले लगाने की इच्छा।

(३) केली—स्त्री के साथ खेलना।

(४) कीर्तन—स्त्री के गुणों की अपने मित्रों के साम प्रशंसा करना।

(५) गुह्य भाषण—स्त्री के साथ एकांत में बातची करना।

(६) संकल्प—स्त्री का चिंतन करना।

(७) अध्यवसायम—स्त्री के साथ विषय-भोग करने का दृढ़ संकल्प।

(८) क्रिया—स्त्री प्रसंग।

जो मनुष्य उपर्युक्त आठ प्रकार की वाधाओं से मुक्त है केवल वही सच्चा ब्रह्मचारी कहा जा सकता है। सच्चे ब्रह्मचारी को चाहिये कि वह इन वाधाओं से सर्वथा बचा रहे।

मनु महाराज का कथन है कि जब तक विद्यार्थी पाठशाला में अध्ययन करते हैं, तब तक उनको चाहिये कि वे अपनी इन्द्रियों पर पूरा पूरा नियंत्रण रखने का अभ्यास करें। उनको चाहिए कि वे मदिरा, मांस, सुगन्धित तैल या इत्र, फूल मालायें, स्त्री, गर्म और तीक्ष्ण पदार्थ, अंजन, जूते, छाता, जूआ, गपशप्प, मिथ्या भाषण, स्त्रियों की ओर देखना, धक्कम धक्का करना और अन्यों के साथ शयन करना आदि आदि बातों से सदा बचे रहें। विद्यार्थी को स्वप्न में भी अपने वीर्य को नष्ट नहीं होने देना चाहिये। यदि वह जाने या अनजाने किसी भी प्रकार से वीर्य नष्ट करता है तो वह अपने कर्तव्य से च्युत होता है। यह उसकी मृत्यु है। यह पाप है। वह एक पतित व्यक्ति है। उसे चाहिये कि वह उचित साधना के द्वारा अपने वीर्य की रक्षा करे। केवल ब्रह्मचर्य और ब्रह्मचर्य के ही द्वारा आप जीवन में शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त कर सकते हैं।

वीर्य

अन्न से रस, रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से चरबी, चरबी से हड्डी, हड्डी से मज्जा, और अन्त में मज्जा से शुक्र या वीर्य बनता है।

जो गुदा (मज्जा) हड्डियों के भीतर छुपा हुआ रहता है, उससे वीर्य उत्पन्न होता है। वह सूक्ष्म स्थिति में शरीर

के सब सूक्ष्म भागों में पाया जाता है। अन्न से रस ब‹
है। रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से चर्बी, चर‹
से हड्डी और हड्डी से मज्जा और मज्जा से वीर्य उत
होता है। ये ही सात धातु इस शरीर और जीवन
आधार हैं। गौर कीजिये कि वीर्य कितना कीमती है। व
अन्तिम सार है। वह सभी सारों का सार है। रक्त की ४
बूँदों से वीर्य की एक बूँद बनती है।

आयुर्वेद के अनुसार रक्त की ८० बूदों से वीर्य व
एक बूंद बनती है, ऐसा माना गया है। जिस प्रका
ईख में रस और दूध में मक्खन सर्वत्र व्यापक रहता है
ठीक उसी प्रकार सब शरीर में वीर्य व्यापक रहता है।
जिस प्रकार दूध से मथ कर मक्खन निकाल लेने के बाद
पतली छाछ रह जाती है, ठीक उसी प्रकार वीर्य क्षय होने
से वह पतला पड़ जाता है। जितना अधिक वीर्य का क्षय
होगा उतना ही अधिक मनुष्य अशक्त होगा। योग शास्त्रों
में कहा है "मरणम् बिंदु पातेन जीवनम् बिंदु रक्षणात्।"
अर्थात् बिंदु (वीर्य) के पतन से मृत्यु और उसके रक्षण
से जीवन प्राप्त होता है वीर्य ही मनुष्य में वास्तविक सार-
भूत शक्ति है। वह मनुष्य के लिए गुप्त निधि है। वह
मुख पर कांति (ब्रह्मतेज) और बुद्धि में तीव्रता प्रदान
करता है।

अंडकोष की थैली में जो दो अंडकोष रहते हैं, उनको
स्राव या रस-ग्रन्थियां कहते हैं। इन अंडकोषों में एक
विशिष्ट पदार्थ रहता है जो रक्त से वीर्य उत्पन्न करता
रहता है। जिस प्रकार मधु-मक्खियां बूँद बूँद करके छत्ते
में मधु एकत्रित करती हैं, ठीक उसी प्रकार इन अंडकोषों

के सूक्ष्म-भाग रक्त की एक-एक बूँद के द्वारा वीर्य को एकत्रित करते हैं। तब यह स्राव दो नाड़ियों के द्वारा शुक्र संबंधी स्थान को ले जाया जाता है। उत्तेजना या प्रकोप की अवस्था में वह विशिष्ट नाड़ियों के द्वारा मूत्र-नली में फेंक दिया जाता है जहां वह शिश्न संबंधी स्राव के साथ मिल जाता है। (इस विषय में विशेष जानकारी के लिए किसी शरीर रचना संबंधी शास्त्र का अवलोकन कीजिए) इस ज्ञान की आवश्यकता है। अब मैं परमावश्यक विभाग साधना की ओर चलता हूँ जिसमें वीर्य रक्षण के आभ्यासिक तरीके बताये गये हैं।

आयुर्वेद के अनुसार वीर्य सातवीं यानी आखिरी धातु है जो मज्जा से बनता है। इन सात धातुओं का निश्चित वर्णन ऊपर कर दिया गया है। प्रत्येक धातु के तीन भाग होते हैं। वीर्य स्थूल शरीर की, हृदय तथा बुद्धि की पुष्टि करता है। जो मनुष्य स्थूल शरीर, हृदय और बुद्धि तीनों का सदुपयोग करता है केवल वही पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य पालन कर सकता है। एक पहलवान या कुश्ती करने वाला जो केवल अपने स्थूल शरीर ही को पुष्ट रखता है परन्तु अपनी बुद्धि और हृदय को उन्नत नहीं करता वह पूर्ण ब्रह्मचर्य कदापि नहीं रख सकता। वह केवल शारीरिक ब्रह्मचर्य ही रख सकता है न कि मानसिक और हार्दिक। वह धातु जिसका सम्बन्ध हृदय और मन से है निसन्देह बह जायगा। यदि कोई साधक केवल जप और ध्यान करता है और यदि वह अपने हृदय को उन्नत नहीं बनाता और यदि वह शारीरिक व्यायाम नहीं करता तो वह केवल मानसिक ब्रह्मचर्य ही प्राप्त कर सकेगा।

वीर्य का वह भाग जिससे हृदय और शरीर की पुष्टि होती है, वह निकल जायगा। (परन्तु एक पूर्ण योगी जो नित्य निरन्तर ध्यान में मग्न रहता है, वह पूर्ण ब्रह्मचर्य प्राप्त करेगा यदि वह शारीरिक व्यायाम न भी करे)।

वृक्ष पृथ्वी से रस प्राप्त करता है। वह रस उस वृक्ष की टहनियां, शाखायें, पत्तियां, फूल, फल आदि में सर्वत्र व्याप्त हो जाता है। फलों, पत्तियों आदि में जो सुन्दरता और चमक दमक है उसका कारण वह रस ही है। ठीक उसी प्रकार वीर्य जो अंडकोषों के सूक्ष्म भागों के द्वारा रक्त से बनता है वह (वीर्य) ही शरीर और उसकी अन्य इन्द्रियों को सुन्दरता और बल प्रदान करता है।

भगवान धन्वन्तरि के शिष्यों में से एक शिष्य ने अपनी आयुर्वेद की शिक्षा समाप्त कर लेने के पश्चात् उनसे कहा, "हे भगवन् अब आप मुझे कृपा कर स्वास्थ्य का रहस्य बतलाइये।" भगवान धनवन्तरि ने जवाब दिया "यह वीर्य ही आत्मा है।" इस सारभूत शक्ति की रक्षा करने में ही स्वास्थ्य का रहस्य प्रस्तुत है! जो मनुष्य इस शक्ति को नष्ट करता है, वह शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक किसी प्रकार भी उन्नति प्राप्त नहीं कर सकता।

यदि वीर्य मनुष्य में निरन्तर अटूट है, तो वह या तो बाहिर निकल जाना चाहिए या पुनः सूख जाना चाहिये। वैज्ञानिक अनुसन्धान (खोज) के द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि धातु जब एकत्रित किया जाकर पुनः शरीर में सुखाया जाता है तो वह रक्त को शुद्ध व सुशोभित कर मस्तिष्क को बल प्रदान करता है। डाक्टर लुई का

कहना है कि शारीरिक और मानसिक बल की वृद्धि तथा बुद्धि की तीव्रता के लिए वीर्य की रक्षा करना आवश्यक है।

एक दूसरे लेखक डाक्टर ई० पी० मित्रा लिखते हैं "वीर्य, चाहे जाने वा अनजाने यदि नष्ट किया जाता है, तो यह साक्षात् जीवन-शक्ति का ही ह्रास है।"

यह सर्वत्र स्वीकार किया गया है कि रक्त के उत्तमोत्तम तत्व के द्वारा ही वीर्य का निर्माण होता है। यदि ये उपर्युक्त सिद्धांत सही हैं तो यह कहा जा सकता है कि मनुष्य की भलाई व उन्नति के लिए पवित्र जीवन परमावश्यक है।

वीर्य की रक्षा के लिए नित्य कौपीन (लंगोट) पहिनना आवश्यक है; इससे अंडकोष की वृद्धि तथा रात्रि में प्रवाह (स्वप्नदोष आदि द्वारा) नहीं होगा। ब्रह्मचारी के लिए यह योग्य है कि वह नित्य खड़ाऊं पहने, क्योंकि इससे वीर्य की रक्षा होगी, नेत्रों को लाभ होगा, आयु दीर्घ होगी तथा शरीर की पवित्रता और कांति बढ़ेगी।

जब वीर्य एक बार नष्ट हो जाता है तो पुनः उसकी पूर्ति आप जन्म भर में भी नहीं कर सकते, चाहे आप कितने ही बादम, दूध, मक्खन, च्यवनप्राश या मकरध्वज आदि पौष्टिक औषधियों का सेवन करें। यह वीर्य जब सावधानी के साथ रक्षित किया जाता है, तो वह एक विचित्र कुंजी का काम देता है कि जिसके द्वारा आप आत्मा-परमात्मा या नित्यानन्द के राज्य-द्वारों को खोल सकते हैं तथा जीवन में सब प्रकार की उच्चतर क्रियाओं में सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

ब्रह्मचर्य-व्रत

ब्रह्मचर्य का व्रत आपको प्रलोभनों से बचने के लिए

सहायता प्रदान करेगा। काम पर आक्रमण करने के लिए वह एक अमोघ शस्त्र है। यदि आप ब्रह्मचर्य व्रत धारण नहीं करते हैं तो आपका मन किसी भी समय लालायित हो सकता है। उस प्रलोभन को दबाने के लिए आपके पास कोई भी शक्ति नहीं होगी और आप अवश्य उसका शिकार बन जायेंगे। जो मनुष्य अशक्त और स्त्री स्वभाव का है, वह इस व्रत को ग्रहण करने से डरता है वह इसके लिए कई बहाने प्रस्तुत करता है और कहता है "मैं संकल्प के द्वारा क्यों अपने को बन्धन में डालूं। मेरी इच्छा-शक्ति बलवान और समर्थ है। मैं किसी भी प्रकार प्रलोभन को दबा सकता हूँ। मैं भक्ति करता हूं। मैं इच्छाशक्ति को बढ़ाने का अभ्यास करता हूं।" उसको आगे जाकर पछताना पड़ता है। उसका इन्द्रियों पर नियंत्रण नहीं होता। जिस मनुष्य के अन्तःकरण में त्याज्य पदार्थ की सूक्ष्म वासना बनी रहती है, केवल वही मनुष्य इस प्रकार के बहाने प्रस्तुत (पेश) करता है। आपका विचार, विवेक और वैराग्य उचित या सही होना चाहिए। केवल तब ही आपका त्याग नित्य और स्थिर हो सकता है। यदि त्याग विवेक और विचार के द्वारा नहीं किया गया है, तो मन केवल उस वस्तु को पुनः प्राप्त करने का अवसर ढूंढ़ता रहेगा जिसका कि उसने त्याग किया है।

यदि आप अशक्त या दुर्बल हैं तो पहिले एक महीने के लिए ब्रह्मचर्यव्रत धारण कीजिए पुनः उसको तीन महीने के लिए बढ़ाइए। आप कुछ बल प्राप्त कर लेंगे; आप उसी व्रत को ६ महीने के लिए बढ़ा सकेंगे। इस प्रकार शनैः शनैः आप इसी व्रत को एक दो या तीन वर्षों तक

तक बढ़ाने के लिए सशक्त हो जाएंगे। अकेले सोइये और नित्य खूब जप, ध्यान और कीर्तन कीजिए। अब आप काम से घृणा करने लगेंगे। आप स्वतंत्रता और अकथनीय और आनन्द का अनुभव करेंगे। आपकी धम-पत्नी को भी आपके साथ नित्य जप, ध्यान और कीर्तन करना चाहिए।

दूसरा अध्याय

दीर्घायु का रहस्य

केवल सदाचार ही के द्वारा आप पूर्ण आयु और नित्यानन्द प्राप्त कर सकते हैं, यद्यपि आप में अन्य गुण न भी हों। चरित्र-निर्माण ही आचार है। आपका चरित्र उत्तम होना चाहिए। अन्यथा आप ब्रह्मचर्य या बल (बल) हीन होकर असामयिक मृत्यु प्राप्त करेंगे। श्रुतियों में मनुष्य की पूरी आयु एक सौ वर्षों की घोषित की गई है। यह केवल ब्रह्मचर्य ही के द्वारा प्राप्त की जा सकती है। यहां आपको एक बात और स्मरण रखने की है: वह यह है कि दीर्घायुष्य का रहस्य, खान-पान के विचार, संयम, अल्पाहार, पवित्रता (ब्रह्मचर्य) और जीवन में आशावाद की दृष्टि पर निर्भर है। तदनुसार पेटू (अधिक भोजन करने वाला), शराबी, आलसी, दुराचारी और निरुद्योगी मनुष्य कभी भी पूरा आयुष् प्राप्त करने की आशा नहीं रख सकता।

"मनुष्य की आयु सौ या सौ से भी अधिक हो सकती है;" यह कोई काल्पनिक उक्ति (कथन) नहीं है। प्राकृतिक और आध्यात्मिक सिद्धांतों के अनुसार, प्रौढ़ावस्था प्राप्त करने के लिए जितना समय की आवश्यकता है, उससे

कम से कम पांच गुणा समय मनुष्य की सम्पूर्ण आयु का होना ही चाहिए। यह एक प्रचलित नियम है जिसका उदाहरण पशु-सृष्टि में दिया जाता है। घोड़ा प्रायः चार वर्ष तक बढ़कर प्रौढ़ हो जाता है और प्रायः १२ से १४ वर्ष तक जीता है; ऊंट प्रायः ८ वर्ष की आयु तक बढ़ता है और प्रायः ४० वर्ष तक जीवित रहता है। पाश्चात्य देश के श्री मिल्टन सेचरेन का कथन है कि मनुष्य प्रायः २० या २५ वर्षों तक बढ़ कर युवावस्था प्राप्त करता है और पुनः यदि कोई असाधारण घटना न हो, पूरे सौ वर्षों से कम नहीं जी सकता। अब इसकी तुलना, हमारे श्रुति पुराणादि हिंदु शास्त्रों में बताए हुए समय तथा पूरे २५ वर्ष तक की ब्रह्मचर्यावस्था के साथ कीजिए। ब्रह्मचारी के लिए पूर्ण वृद्धि का जो समय बताया गया है वह केवल वीर्य रक्षण तथा पूर्ण ब्रह्मचर्य के द्वारा स्थापित किया जा सकता है; अतः राज योग के लेखक महर्षि पातंजलि का कथन है—"ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्य लाभः"

ऐसे भी उदाहरण मिलेंगे कि जिनमें कतिपय चरित्र-भ्रष्ट मनुष्य भी बुद्धिमान हुए हैं तथा दीर्घायु प्राप्त की है। इसका प्रत्यक्ष कारण केवल उनका प्रारब्ध ही कहा जा सकता है। परन्तु यदि उनमें ब्रह्मचर्य और चरित्र की पवित्रता होती तो वे इससे भी अधिक शक्ति-शाली और प्रतापी होते।

ब्रह्मचर्य का तात्पर्य

पवित्र जल, वायु, स्वास्थ्य-प्रद भोजन, शारीरिक-व्यायाम, मैदान के खेल, तीव्र गति से टहलना, नाव चलाना, तैरना, टेनिस आदि खेल खेलना—ये सब ही

उत्तम स्वास्थ्य, शारीरिक बल और मानसिक शक्ति के रक्षण में सहायक हैं। वास्तव में स्वास्थ्य और बल प्राप्त करने के अनेक विधान हैं। ये विधान निश्चयात्मक अत्यन्त आवश्यक हैं। परन्तु इन सब में ब्रह्मचर्य सर्वश्रेष्ठ है। ब्रह्मचर्य के बिना आपके सब व्यायाम निरर्थक हैं। स्वास्थ्य और आनन्द के राज्य-द्वार को खोलने के लिए ब्रह्मचर्य एक मात्र कुञ्जी है। वह परम कल्याण और आनन्द रूपी भवन की नींव है। वह वास्तविक मनुष्यत्व की रक्षा करने वाली एक मात्र उत्तम वस्तु है। वीर्य (प्राण शक्ति) जो आपके जीवन का आधार है, जो प्राणों का प्राण है, जो आपके सुन्दर कपोलों में और चमकीले नेत्रों में प्रकाशित होता है, आपके लिए एक वास्तविक निधि है। इस बात का अच्छी तरह से स्मरण रखिए। जीवन के इस सार-भूत तत्व का महत्व तथा इसकी आवश्यकता को पूर्ण रूप से समझिए। वीर्य ही पूर्ण शक्ति है। वीर्य ही परम धन है। वीर्य ही ईश्वर है। वीर्य ही गति-युक्त ईश्वर है। वीर्य ही इच्छा-शक्ति संचालक है। वीर्य ही आत्म-बल है। वीर्य ही ईश्वर की विभूति है। गीता में कहा है—"पौरुषम् नृषु" मनुष्यों में मैं पौरुषत्व अर्थात् संतान उत्पन्न करने की शक्ति हूँ। वीर्य विचार, बुद्धि और ज्ञान का सार तत्व है।

ब्रह्मचर्य से मनुष्य की मानसिक शक्ति अधिक बढ़ती है। मानसिक शक्ति शारीरिक बल से कोई अधिक श्रेष्ठ है। महात्मा गांधी जी को लीजिए। शरीर से तो वे बड़े दुबले पतले थे परन्तु उनका तीव्र बुद्धि-बल बड़ा ही प्रशंसनीय था। वह केवल उनके ब्रह्मचर्य के ही कारण था।

ब्रह्मचर्य मोक्ष का आधार है। यदि आधार दृढ़ नहीं है तो अधिक वर्षा में मकान गिर जायगा। ठीक इसी प्रकार यदि आप ब्रह्मचर्य में स्थित नहीं है और यदि आप का मन कुत्सित विचारों से चलायमान हो जाता है तो आप का पतन हो जायगा। आप निर्विकल्प समाधि—जो योग रूपी नियन्त्रण की शिखा है, को नहीं प्राप्त कर सकते।

श्रुति का वचन है "नायमात्मा बलहीनेन लभ्य"—यह आत्मा निर्बल व्यक्ति के द्वारा नहीं प्राप्त किया जा सकता। गीता का कथन है"यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरंति"—जो उस ब्रह्म को प्राप्त करना चाहते हैं उन्हें ब्रह्मचर्य का आचरण करना चाहिए। गीता अध्याय ८. श्लोक ११. "त्रिविधं नर्कस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः; कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्"—अर्थात् हे अर्जुन! काम, क्रोध और लोभ ये नर्क के तीन द्वार हैं अतः तू इन तीनों का त्याग कर। गीता अध्याय १६. श्लोक २१।

श्री लंबीचस का कथन है कि जो मनुष्य कामुकता या मैथुन से अपवित्र है, उसकी प्रार्थना देवतागण नहीं सुनते। इस्लाम धर्म के अनुसार भी जब मनुष्य हज करने के लिए मक्का जाता है तो उसके लिए पूर्ण ब्रह्मचर्य की आवश्यकता है। यहूदी धर्म परिषद् के अनुसार भी देव मन्दिर में प्रवेश करने तथा देव दर्शन के पूर्व ब्रह्मचर्य रूपी पवित्रता की आवश्यकता है। प्राचीन भारत, मिश्र और यूनान देशों की धर्म-सभ्यता के अनुसार भी भगवान के पूजन के पूर्व तथा पूजन के समय मनुष्य के लिए ब्रह्मचर्य रूपी पवित्रता, अनिवार्य है। ईसाई धर्म में भी ठीक ऐसा ही है, नामकरण संस्कारादि धर्म-कार्यों में इस पवित्रता की

आवश्यकता है।

ईसाई धर्म का सर्वोच्च आदर्श यही पवित्रता थी। ईसाई धर्म के पादरियों ने भी ब्रह्मचर्य की विशेष प्रशंसा की उन्होंने विवाह प्रणाली को तो अमुख्य ही माना और वह भी केवल उन लोगों के लिए जो कि ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने में असमर्थ थे। यूनान के पादरी सर्वदा ब्रह्मचारी होते हैं; उनका चुनाव योगी संन्यासियों में से ही किया जाता है।

जिस मनुष्य ने थोड़ा बहुत ही ब्रह्मचर्य का अभ्यास किया है, वह किसी भी प्रकार की व्याधि क्यों न हो उसे बहुत सुगमता से हटा देगा। यदि किसी साधारण मनुष्य को ठीक होने में एक माह की आवश्यकता है, तो वह केवल एक ही सप्ताह में पूर्ण स्वस्थ हो जायगा।

ब्रह्मचर्य के अभ्यास से शक्ति प्राप्त होती है। पूर्ण मानसिक और शारीरिक ब्रह्मचर्य के द्वारा योगी सिद्धि (पूर्णता) प्राप्त करता है। उससे वह आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ होता है। जब पवित्रता रहती है, तो मन की वृत्तियों का अपव्यय नहीं होता। मन की एकाग्रता सुगम हो जाती है। मन की एकाग्रता और पवित्रता साथ-साथ रहती हैं। यद्यपि साधु या ज्ञानी अत्यन्त कम भाषण करता है, तथापि सुनने वालों के मन पर उसका विशिष्ट प्रभाव पड़ता है। इसका कारण उसकी ओज शक्ति है, जो उसने वीर्य की रक्षा तथा उसकी शुद्धि के द्वारा प्राप्त की है।

ब्रह्मचर्य के अभ्यास से उत्तम स्वास्थ्य, अन्तः शक्ति, मन की शान्ति, और दीर्घायु प्राप्त होती है। वह मन

और मांस पेशियों को पुष्ट करता है। वह शारीरिक और मानसिक शक्ति को सुरक्षित रखने में सहायता प्रदान करता है। वह साहस और प्राण शक्ति की वृद्धि करता है। वह मनुष्य को दैनिक जीवन-संग्राम में कठिनाइयों का सामना करने के लिए बल प्रदान करता है, अखंड ब्रह्मचारी सारे संसार को चलायमान कर सकता है, वह महात्मा ज्ञानदेव की भांति प्रकृति और पंचमहाभूतों पर शासन कर सकता है।

ऐ मेरे प्रिय मित्रों ! क्या आपने ब्रह्मचर्य की आवश्यकता को समझ लिया है ? क्या आपने उसके वास्तविक अभिप्राय और महत्व को भली प्रकार जान लिया है ? जो शक्ति आप अनेक साधनों द्वारा बड़ी कठिनाई व प्रयत्न के साथ प्राप्त करते हैं, वह शक्ति यदि नित्य नष्ट कर दी जाय, तो फिर आप किस प्रकार से बलवान और स्वस्थ्य रहने की आशा कर सकते हैं ? जब तक पुरुष और स्त्रियां, बालक और बालिकायें सब ब्रह्मचर्य व्रत का भरसक पालन नहीं करेंगे तब तक बलवान और स्वस्थ्य बनना उनके लिए असंभव है।

ब्रह्मचर्य का महत्व

स्वर रहित कोई भी भाषा नहीं हो सकती। बिना टाट, दीवार या अन्य आधार के आप चित्र नहीं खींच सकते। ठीक इसी प्रकार आप बिना ब्रह्मचर्य के उत्तम स्वास्थ्य और आध्यात्मिक जीवन नहीं प्राप्त कर सकते। ब्रह्मचर्य से भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त होती है। ब्रह्मचर्य अमरत्व प्राप्त करने का मूल कारण है। वह शुद्ध

शांतिमय आध्यात्मिक जीवन तथा ज्ञान का आधार है। जिस ब्रह्म-निष्ठा की आकांक्षा संत, जिज्ञासु और योगाभ्यासी साधक करते हैं, उसका ब्रह्मचर्य ही एक अवलंब है। वह हमारे काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि आंतरिक शत्रुओं के साथ युद्ध करने के लिए एक अमोघ शस्त्र है। वह परम सुख, अखंड और अविनाशी आनन्द का देने वाला है। बड़े-बड़े ऋषि, देवता, गंधर्व आदि भी नैष्ठिक ब्रह्मचारी के चरणों की सेवा करते हैं। केवल इस ब्रह्मचर्य की शक्ति के द्वारा ही मनुष्य सुषुम्ना के द्वार को खोल कर कुण्डलिनी शक्ति का उत्थान करता है। आठ सिद्धियां और नव निधियां तो ब्रह्मचारी के चरणों में रमण करती हैं तथा उसकी आज्ञा का पालन करने के लिए सदा उद्यत रहती हैं। यम भी ब्रह्मचारी से दूर भागता है। वास्तविक ब्रह्मचारी के गौरव, महत्व और प्रभुता का कौन वर्णन कर सकता है!

अर्जुन एक वीर योद्धा था, परन्तु रणक्षेत्र में उसने भी शिथिल होकर शस्त्र त्याग दिया। उस समय भगवान श्री कृष्ण ने किस प्रकार स्थिर और शांत चित्त होकर अर्जुन को गीता के सिद्धांतों का उपदेश दिया। यह उनके ब्रह्मचर्य की शक्ति का कारण था।

भीष्म पितामह के कार्यों को देखिए उनमें दिव्य शक्तियां थीं वे अपनी कनिष्ट अंगुली के द्वारा संसार को हिला सकते थे। उन्होंने जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करने का संकल्प किया। उनका प्रथम नाम देवव्रत था; परन्तु देवताओं ने उन्हें 'भीष्म' (भयानक) नाम— 'यथा नाम तथा गुण' की लोकोक्ति के अनुसार—केवल

उनके गुणों ही के कारण दिया। उनमें इच्छा मृत्यु की शक्ति थी। इन्द्रजीत को यह वरदान था कि उसको केवल वही मनुष्य मार सकेगा जिसने कि पूरे १४ वर्षों तक सर्व प्रकार से ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया हो—वह था लक्ष्मण जिसने इन्द्रजीत का अपने ब्रह्मचर्य के बल के द्वारा वध किया। विशाल पर्वत को उखाड़ कर ले आना तथा अन्य बड़े बड़े कार्यों का करना हनुमान के लिए कुछ भी नहीं था। यह सब ब्रह्मचर्य की शक्ति का प्रताप था।

"ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत"—वेदों की घोषणा है कि ब्रह्मचर्य और तप के द्वारा देवताओं ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की। हनुमान किस प्रकार महावीर हो गया? वह यह ब्रह्मचर्य रूपी शस्त्र ही था कि जिसके द्वारा उसने अतीत बल और साहस की प्राप्ति की। वह यही ब्रह्मचर्य रूपी शस्त्र था कि भीष्म पितामह ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की। वह यही आदर्श ब्रह्मचारी लक्ष्मण था कि जिसने तीनों लोकों को जीतने वाले महा शक्तिशाली रावण-पुत्र मेघनाथ को पराजित किया। राजाधिराज पृथ्वीराज की वीरता और महानता का कारण भी उसके ब्रह्मचर्य का बल ही था। तीनों लोकों में ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जो ब्रह्मचारी प्राप्त न कर सके। प्राचीन काल के महर्षिगण ब्रह्मचर्य के मूल्य को पूर्णतया समझते थे; यही कारण है कि उन्होंने ब्रह्मचर्य के महत्व की प्रशंसा सुन्दर सुन्दर छन्दों में वर्णन की है।

पुराणों के अनुसार ऐसा कहा जाता है कि दूरदर्शिता और अलौकिक दृष्टि ब्रह्मचर्यों के प्रायः विशेष अधिकार हैं। श्री बेस्टर मेक का कथन है कि भद्रता से पवित्रता

का नाश होता है। रायो नेग्रो जाति में "शामन्स" के लिए ब्रह्मचर्य की आज्ञा केवल इसीलिए है कि उनका ऐसा विश्वास है कि कोई भी औषधि यदि किसी विवाहित पुरुष के द्वारा दी गई है तो उसका प्रयोग फलदायक नहीं हो सकता।

जिस प्रकार तेल बत्ती के द्वारा ऊपर की ओर गमन कर प्रकाश के साथ जलता रहता है, ठीक उसी प्रकार वीर्य भी योगाभ्यास के द्वारा ऊपर की ओर गमन कर ओज शक्ति में परिवर्तित होता रहता है। इस नरतन रूपी गृह में ब्रह्मचर्य एक चमचमाता हुआ दीपक है।

ब्रह्मचर्य जीवन रूपी एक पूर्ण विकसित पुष्प है जिसके चारों ओर बल, संतोष, ज्ञान, पवित्रता और धैर्य रूपी मधु-मक्खियां भनभनाती हुईं विचरण करती हैं। या यूँ कहिए कि जो मनुष्य ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने वाला है वह उपरोक्त गुणों से संपन्न होगा। शास्त्रों की घोषणा है—"ब्रह्मचर्य के अभ्यास से आयु, तेज, बल, साहस, ज्ञान, धन, यश, पुण्य और प्रेम की वृद्धि होती है।"

ब्रह्मचर्य के द्वारा बुद्धि शुद्ध और तीव्र होती है। शक्ति और धैर्य की प्राप्ति होती है। ब्रह्मचारी तीनों लोकों का अधिपति होता है। ब्रह्मचर्य के बिना किसी प्रकार का योग या आध्यात्मिक उन्नति संभव नहीं। आत्मसाक्षात्कार के लिए ब्रह्मचर्य एक नितांत आवश्यक गुण है।

जिस मनुष्य के पास ब्रह्मचर्य रूपी शक्ति है, वह अमित शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक कार्य कर सकता है। उसके वदन पर ब्रह्मतेज चमकता है। वह मित भाषण अथवा अपनी उपस्थिति मात्र से ही लोगों को प्रभावित

कर सकता है। गांधी जी को देखिए। उन्होंने यह शक्ति, अहिंसा, सत्य और ब्रह्मचर्य के द्वारा प्राप्त की थी। उन्होंने केवल इसी शक्ति के द्वारा सारे संसार को प्रकंपित किया था।

यह कहना यथार्थ है कि एक सच्चे ब्रह्मचारी में अमित बल शुद्ध मस्तिष्क, प्रबल इच्छाशक्ति, तीव्र बुद्धि, उत्तम विचार, धारणा और स्मरण शक्ति होती है। स्वामी दयानन्द ने अपनी इस शक्ति के द्वारा एक महाराजा की गाड़ी को रोक दिया। उन्होंने अपने हाथों से एक तलवार को तोड़ डाला। यह ब्रह्मचर्य का महत्व है। जीसस, शंकर, ज्ञान देव, समर्थ स्वामी रामदास तथा अन्य सभी आध्यात्मिक नेतागण ब्रह्मचारी थे।

——:o:——

तीसरा अध्याय

आधुनिक शिक्षा

यदि आप आधुनिक शिक्षा-प्रणाली की हमारी प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के साथ तुलना करें तो आप को इन दोनों में बड़ा अन्तर मिलेगा। पहली बात तो यह है कि आधुनिक शिक्षा-प्रणाली अत्यधिक व्यय-शाली है। चरित्र निर्माण तथा धार्मिक शिक्षा का तो इसमें पूर्णतया अभाव ही है। गुरुकुल में प्रत्येक विद्यार्थी पवित्र होता था। प्रत्येक विद्यार्थी धार्मिक शिक्षा में निपुण होता था। प्राचीन ज्ञान व शिक्षा-प्रणाली का यह विशेष लक्षण था। प्रत्येक विद्यार्थी को प्राणायाम, मंत्र-योग, आसन, सदाचार-पद्धति, गीता, रामायण, महाभारत और उप-निषदों का ज्ञान होता था। प्रत्येक विद्यार्थी में विनय, आत्म संयम, आज्ञा पालन, सेवा-भाव, आत्म-समर्पण, सद्-व्यवहार, नम्रता, दयालुता तथा मुमुक्षुत्व (आत्म-ज्ञान प्राप्त

करने की शुभेच्छा) आदि गुणों का पूर्ण विकास रहता था।

आजकल कालेजों के विद्यार्थियों में इन सद्गुणों में से एक भी सद्गुण नहीं मिलता। आत्म-संयम किस चिड़िया का नाम है, यह तो वे जानते ही नहीं। विलासी जीवन और आत्म अनुकूलता तो उनमें बचपन ही से प्रारम्भ हो जाता है। अभिमान, धृष्टता और आज्ञा-भंग आदि दुर्गुण तो उनमें कूट-कूट कर भरे रहते हैं। वे पक्के नास्तिक और उग्र अनात्मवादी हो गए हैं। बहुतों को तो यह कहने में लज्जा प्रतीत होती है कि वे ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करते हैं। ब्रह्मचर्य और आत्म-संयम का उनको तनिक भी ज्ञान नहीं है। सुन्दर आकर्षण पोशाक, अभक्ष्य-भोजन, कुसंगति, नाटक सिनेमा देखना, तथा पाश्चात्य रहन सहन के कारण वे दुर्बल और क्रोधी हो गए हैं। ब्रह्मविद्या, आत्म-ज्ञान, आध्यात्मिक विद्या, वैराग्य, मोक्ष बन्धन, आत्मा की शान्ति तथा उसके आनंद से वे नितांत अनभिज्ञ हैं। चालढाल, लोकव्यवहार, विषयासक्ति, लोलुपता तथा विलासिता ने उनके भीतर घर कर लिया है। कालेज के कुछ एक विद्यार्थियों की जीवन-कहानी यदि आप सुनें तो आपको अत्यन्त करुणा उत्पन्न होगी। गुरुकुल में छात्र-गण आरोग्य, बलवान और दीर्घजीवी होते थे। बंगाल के स्वास्थ्य विभाग अधिकारियों की विज्ञप्ति के अनुसार कलकत्ता और ढाका में ७५ फी सदी विद्यार्थी अस्वस्थ हैं तथा बम्बई स्वास्थ्य विभाग के अधिकारियों की विज्ञप्ति के अनुसार करांची में ६० फी सदी विद्यार्थी अस्वस्थ हैं। वास्तव में यह भी अनुसन्धान किया गया है कि समस्त भारतवर्ष में विद्यार्थियों का स्वास्थ्य

अशिष्ट (भ्रष्ट) व शोचनीय है। इसके अतिरिक्त जिन दुर्व्यसनों व दुर्व्यवहारों के कारण उनके स्वास्थ्य का ह्रास हो रहा है, वे दिनों दिन बढ़ रहे हैं। आजकल की स्कूलों और कालेजों में सदाचार की तथा धर्म की शिक्षा नहीं दी जाती। अर्वाचीन सभ्यता ने हमारे बालक बालिकाओं को बिलकुल अशक्त बना दिया है। वे कृत्रिम (बनावटी) जीवन यापन करते हैं। बच्चों के बच्चे उत्पन्न होते हैं। यह कुल मर्यादा की भ्रष्टता है। सिनेमा निंदास्पद हो गया है। वह भावुकता तथा कामोत्पत्ति का प्रेरक है। आजकल सिनेमाओं में, रामायण और महाभारत की कहानियों के रहते हुए भी अधिकतर असभ्य दृश्य तथा अशिष्ट खेलों का ही प्रदर्शन किया जाता है। मुझे पुनः यहां जोर देकर कहना पड़ता है कि भारतवर्ष में जो आजकल शिक्षा प्रणाली प्रचलित है उसमें पूर्णतया तीव्र परिवर्तन करने की तत्काल आवश्यकता है। कहीं कहीं कालेजों में प्रोफेसर लोग अपने विद्यार्थियों को फेशनेबल (शानदार) वस्त्र पहिनने के लिए बाध्य करते हैं। इतना ही नहीं वे उन विद्यार्थियों से घृणा करते हैं जो स्वच्छ व सादे वस्त्र पहिनते हैं। कैसी करुणास्पद अवस्था है! स्वच्छता एक वस्तु है और फैशन एक अन्य! इस प्रकार की फैशन सांसारिक जीवन तथा इन्द्रिय-सुख भोगों में जड़ पकड़ लेती है।

अध्यापकों तथा माता पिताओं के कर्त्तव्य

विद्यार्थियों के सदाचार तथा उनके वस्तुतः चरित्र-निर्माण कार्य में, अध्यापकों और प्रोफेसरों का बड़ा भारी उत्तरदायित्व है। उनको स्वयं पूर्ण सदाचारी और पवित्र

होना चाहिए। उन्हें धार्मिक होने चाहिये। अन्यथा वह ठीक वैसा ही होगा जैसा कहा है—"अंधे की लकड़ी, को अंधे ने ही पकड़ी" अर्थात् अंधा मनुष्य ही अन्य अंधे मनुष्य को राह बताता है। प्रत्येक अध्यापक को चाहिए कि वह अपने अधिकार के महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व का पूर्णरूप से अनुभव करे। केवल शुष्क भाषण-कला में मानसिक निपुणता प्राप्त कर लेना ही अध्यापक का वास्तविक शृंगार नहीं है। जब विद्यार्थी युवा अवस्था को प्राप्त होते हैं तो उनके स्थूल शरीरों में कुछ वृद्धि और परिवर्तन होने लगते हैं आवाज बदल जाती है। मन में नये भाव व विचार उत्पन्न होने लगते हैं। वे स्वभावतया विलक्षण (जिज्ञासु) बन जाते हैं। वे गलियों में अपने मित्रों से सलाह करते हैं। उन्हें कुत्सित् सलाह मिलती है। वे दुर्व्यसनों के कारण अपने स्वास्थ्य को नष्ट करते हैं। लिंग संबंधी स्वास्थ्य, आरोग्य शास्त्र, ब्रह्मचर्य, दीर्घायु तथा क्रोध व भावुकता पर विजय प्राप्त करने की विधि, आदि आदि विषयों का उन्हें पूरा पूरा ज्ञान प्राप्त कराया जाना चाहिए।

माता पिताओं को चाहिए कि वे अपने बच्चों को महाभारत और रामायण की कहानियां सुनावें। जो ब्रह्मचर्य और सदाचार से संबंध रखती हैं।

माता पिताओं को चाहिए कि वे अपने बच्चों को बारंबार ब्रह्मचर्य के विषय में शिक्षा देते रहें। यह उनका एक विशिष्ट कर्त्तव्य है। जब बालक और बालिकाओं में तरुणावस्था के लक्षण दीखने लगें, तो उन्हें सब बातें स्पष्ट रूप से कह देना आवश्यक है। धीरे धीरे बताने में

कोई लाभ नहीं है। लिंग संबंधी विषयों को छुपाकर नहीं रखना चाहिए। यदि माता पिताओं को अपने बच्चों के सामने इस महत्त्वपूर्ण विषय पर बातचीत करने में लज्जा प्रतीत होती है तो वह एक नितांत अवास्तविक मर्यादा है। चुप रहने से उनकी उत्सुकता और भी अधिक बढ़ जायगी। यदि बच्चे इन सब बातों को यथा समय अच्छी प्रकार से समझ लेंगे तो, यह निश्चय है कि न तो वे कुपथ-गामी मित्रों के संग से मार्ग-भ्रष्ट ही होंगे और न उनमें दुर्व्यसनों की उत्पत्ति ही होगी।

ऐ पाठशालाओं और विश्वविद्यालयों के शिक्षक वृन्द! अब निद्रा भंग कीजिए। विद्यार्थियों को ब्रह्मचर्य, सदाचार और धार्मिक मार्ग में प्रशिक्षित कीजिए। उन्हें सच्चे ब्रह्मचारी बनाइये। इस श्रेष्ठ कार्य की अवहेलना न कीजिये। आप इस विशिष्ट कार्य के लिए न्यायानुसार उत्तरदायी हैं। यह आपका योग है। यदि आप इस कार्य को उत्साहसहित उचित रीतिसे करें तो आपको आत्म-साक्षात्कार की प्राप्ति हो सकती है। सच्चे और न्यायी बनिए। सजग रहिए। बालक और बालिकाओं को ब्रह्मचर्य की आवश्यकता प्रदर्शित करते हुए उन्हें उन विविध प्रकारों से सुपरिचित कीजिए कि जिनके द्वारा वे वीर्य (जो उनमें गुप्त आत्म-शक्ति है) को सुरक्षित रख सकें।

जिन अध्यापकों ने प्रथम अपने आपको सुशिक्षित कर लिया है उन्हें चाहिए कि वे अपने विद्यार्थियों के साथ गुप्त वर्तालाप करें तथा उन्हें ब्रह्मचर्य के संबंध मे नियमित रूप से अभ्यास योग्य शिक्षायें प्रदान करें। श्रीमान् एच० पेकन्हेम वाल्श (एस० पी० जी० कालेज, ट्रिचना-

पत्नी के भूतपूर्व प्रिंसिपल और वर्तमान में बड़े पादड़ी) अपने विद्यार्थियों के साथ ब्रह्मचर्य और आत्मसंयम संबंधी विषयों पर नियमित रूप से वार्तालाप किया करते थे।

संसार का भविष्य भाग्य (प्रारब्ध) अध्यापकों तथा विद्यार्थियों पर निर्भर है। यदि अध्यापकगण अपने विद्यार्थियों को ठीक प्रकार से धार्मिक मार्ग में शिक्षा दें तो संसार में आदर्श नागरिक, योगी, जीवन्मुक्तों की भर-मार होगी, जो सर्वत्र प्रसन्नता, शान्ति, आनन्द और प्रकाश फैलाने में समर्थ होंगे। पाठशालाओं और कालेजों में प्राचीन काल के ब्रह्मचारियों के जीवन चरित्र, ब्रह्मचर्य और तत्संबंधी महा भारत और रामायण की कहानियों के प्रदर्शन, मैजिक लैन्टर्न द्वारा नियमित रूप से होने चाहिए। इससे विद्यार्थियों को उनके चरित्र निर्माण तथा उन्नत बनने में बड़ी सहायता मिलेगी। धन्य है वह जो वास्तव में अपने विद्यार्थियों को सच्चे ब्रह्मचारी बनाने के लिए प्रयत्न करता है। धन्य, धन्य है वह जो खुद नैष्ठिक ब्रह्मचारी बनने का उद्योग करता है। भगवान श्री कृष्ण उन सब पर प्रसन्न हों! अध्यापक, प्रोफेसर तथा विद्यार्थी-गण यशस्वी हों!

——:o:——

चौथा अध्याय

ब्रह्मचारी कौन है ?

ब्रह्मचारी वह है जो पूर्ण पवित्रता का जीवन यापन करते हुए ब्रह्मसाक्षात्कार करने का प्रयत्न करता है। पवित्रता से जीवन यापन करना ही ब्रह्मचर्य है। 'अनुगीता' में कहा है "जो मनुष्य अनुशासन-कार्य के परे चला गया है और जो ब्रह्म में स्थित हुआ ब्रह्म ही की भांति संसार में भ्रमण करता है, वह ब्रह्मचारी कहा जाता है।"

ब्रह्मचारी दो प्रकार के होते हैं—एक नैष्ठिक ब्रह्मचारी जो जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करता है और दूसरा उपाकुर्वन् ब्रह्मचारी जो वेद अथवा शास्त्राध्ययन की समाप्ति के पश्चात् गृहस्थी बन जाता है।

केवल सच्चा ब्रह्मचारी ही भक्ति और योगाभ्यास के द्वारा ज्ञान की प्राप्ति कर सकता है बिना ब्रह्मचर्य के किसी प्रकार की भी आध्यात्मिक उन्नति संभव नहीं है। अतः

ब्रह्मचर्य में सफलता प्राप्त करने के लिए कुछ आभ्यासिक साधन नीचे दिए जाते हैं:—

कामुक वृत्तियों तथा विचारों से मुक्त रहना ही ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचारी को काम-दृष्टि से भी मुक्त रहना चाहिए। भगवान जीसस का कथन हैं "यदि आपकी कामातुर दृष्टि ही हो गई तो आप अपने हृदय में व्यभिचार कर चुके हैं" सच्चा ब्रह्मचारी स्त्री, कागज, लकड़ी या पत्थर के टुकड़े को स्पर्श करने में कुछ भी भिन्नता का अनुभव नहीं करेगा।

अखण्ड ब्रह्मचारी

अखंड ब्रह्मचारी जिसने बारह वर्षों तक अपने वीर्य की एक बूंद भी क्षय नहीं की है, सहज में ही बिना कुछ प्रयत्न के समाधि को प्राप्त कर सकता है। प्राण और मन उसके सर्वथा अधीन होते हैं। बाल ब्रह्मचारी, अखंड ब्रह्मचारी का ही एक पर्यायवाची शब्द है। अखंड ब्रह्मचारी में, धारणा शक्ति (समझने की शक्ति), स्मृति शक्ति (याद रखने की शक्ति), और विचार शक्ति (अन्वेषण या जांच करने की शक्ति) होती है। उसकी बुद्धि और ज्ञान शक्ति शुद्ध और तीव्र होती है अतः उसके लिए मनन और निदिध्यासन की आवश्यकता नहीं होती अखंड ब्रह्मचारी बहुत ही कम पाए जाते हैं। परन्तु कुछ अवश्य मिलेंगे। आप भी अखंड ब्रह्मचारी हो सकते हैं, यदि आप उचित रीति व सची लगन से प्रयत्न करें। केवल जटा बढ़ा लेने तथा सारे शरीर में राख लगा लेने से कोई भी अखंड ब्रह्मचारी नहीं बन सकता। वह ब्रह्मचारी जिसने

अपने स्थूल शरीर और इन्द्रियों को तो बस में कर लिया है, परन्तु जिसके मन में सदा कामवासनायें जाग्रत रहती हैं, पक्का पाखंडी है। उसका कभी भी विश्वास नहीं करना चाहिए। वह किसी समय प्रकट हो जायगा। वह ब्रह्मचारी नहीं कहा जा सकता।

यदि आप १२ वर्षों तक अखंड ब्रह्मचारी रह सकते हैं तो आप बिना किसी अन्य साधना के ईश्वर साक्षात्कार कर लेंगे। आप जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर चुके। यहां अखंड शब्द की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

नैष्ठिक ब्रह्मचारी बनिये। नैष्ठिक ब्रह्मचारी वह है जो जीवन पर्यन्त ब्रह्मचारी रहने का व्रत धारण करता है। वह बिना गृहस्थी बने तत्काल सन्यास ग्रहण कर सकता है।

प्रिय श्याम! आप वह नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं जिसने जीवन पर्यन्त मन, कर्म और वचन से ब्रह्मचारी रहने का व्रत धारण किया है। अब आप के सम्मुख सूर्य भी कंपायमान होगा। चूंकि, उसको, आप के ब्रह्मचर्य की शक्ति के द्वारा छेदन किये जाने का भय है। आप अब सूर्यों के भी तेजस्वी सूर्य हैं।

ऊर्ध्वरेता योगी

अब मैं ऊर्ध्वरेता योगी के विषय में कुछ वर्णन करूंगा। उर्ध्वरेता योगी वह है जिसमें वीर्य शक्ति ओज शक्ति के रूप में परिणत होकर उसके मस्तिष्क में संचित रहती है जो पुनः ध्यानादि अभ्यासों के निमित्त काम में लाई जाती है। ऊर्ध्वरेता योगी में, जो वीर्य शक्ति ओज शक्ति के रूप में परिणत होती है, उस परिवर्तन की क्रिया को रूपान्तरण

रहते हैं। उर्ध्वरेता योगी को स्वप्नदोष नहीं होता। वह केवल अपने वीर्य को ओज शक्ति में परिणत ही नहीं करता परंतु अपनी यौगिक तथा पूर्ण ब्रह्मचर्य शक्ति के द्वारा अपने अंड कोशों में वीर्य की उत्पत्ति का भी अवरोध करता है। यह एक बड़ा भारी रहस्य है। एलोपेथी डाक्टरों का विश्वास है कि ऊर्ध्वरेता योगी में भी वीर्य की उत्पत्ति निरंतर होती रहती है और वह वीर्य-द्रव पुनः रक्त में विलीन हो जाता है। वह उनकी भूल है। वे योग के वास्तविक गुप्त रहस्यों को नहीं समझते। वे अंधकार में हैं। उनकी दृष्टि का विकास केवल विश्व के स्थूल पदार्थों तक ही है योगी अपनी चक्षु (आत्मिक दृष्टि) के द्वारा पदार्थों की सूक्ष्म गुप्त प्रकृति को भी समझने में समर्थ होता है। योगी वीर्य के सूक्ष्म स्वभावपर नियंत्रण करता है और तदनुसार वीर्य की उत्पत्ति मात्र का अवरोध करता है। योग-विज्ञान के अनुसार वीर्य (शुक्र) सूक्ष्म स्थिति में सारे शरीर में विद्यमान रहता है। वह, कामोत्पत्ति तथा काम वासनाओं के प्रभाव से, जननेन्द्रियों में एकत्रित होकर विक्षित रूप को धारण करता है। केवल पहिले से बने हुऐ स्थूल वीर्य के उद्गार का अवरोध करना ही नहीं, परंतु, स्थूल बीज रूप से, उसकी उत्पत्ति का अवरोध करना ही ऊर्ध्वरेता योगी बनना है। ऊर्ध्वरेता योगी शीघ्र ही ब्रह्म-साक्षात्कार कर सकता है। इस संबंध में उसके लिये केवल श्रवण पर्याप्त है। पाश्चात्य आध्यात्म-विज्ञान के अनुसार शुद्ध विचार के द्वारा वीर्य को ओज शक्ति में परिणत करना ही लैंगिकरूपांतरण कहलाता है। जिस प्रकार रसायनिक पदार्थ अग्नि के द्वारा तथा भाप रूप में परिणत कर शुद्ध किया

जाता है (जो पुनः स्थूल रूप को धारण करता है), ठीक उसी प्रकार आध्यामिक साधना तथा आत्मोन्नति के शुद्ध सात्विक विचारों के द्वारा, वीर्य भी शुद्ध किया जाकर ओज शक्ति में परिणत किया जाता है। योग शास्त्र के अनुसार ऊर्ध्व रेता योगी वह कहलाता है जिस में वीर्य-शक्ति ऊपर की ओर उठकर मस्तिष्क में प्रवेश करती है।

रूपान्तरण की विधि अत्यन्त कठिन है, तथापि, आध्यात्मिक मार्ग में साधक के लिये परमावश्यक है। वह कर्मयोग, भक्ति योग, राजयोग तथा वेदान्त में साधक लिये एक परम आवश्यक गुण या योग्यता है। इसके लिये आप को भरसक प्रयन्त करना चाहिये भविष्य जन्मों में तो आप इस के लिये प्रयत्न करेंगे ही तो फिर इसी समय क्यों नहीं?

ओज वह आध्यात्मिक शक्ति है। जो मस्तिष्क में संचित रहती है। शुद्ध विचार, ध्यान, जप, पूजन, आसन तथा प्राणायाम के अभ्यास से वीर्य-शक्ति ओज शक्ति में बदलकर मस्तिष्क में एकत्र हो जाती है। यही ओज शक्ति पुनः भगवत् चिंतन तथा अन्य आध्यात्मिक कार्यों के लिये काम में लाई जाती है।

हठ–योगी सिद्धासन, शीर्षासन, सर्वांगासन, मूलबंध, महामुद्रा, नौलि क्रिया आदि अभ्यासों के द्वारा अपनी वीर्य-शक्ति को ओज शक्ति में परिणत करता है।

भक्त नवधा भक्ति (श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद–सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, साख्य, आत्मनिवेदन) के अभ्यास तथा जप के द्वारा अपने मनके मल का नाश करता है और उसे भगवान में लगाता है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के अभ्यास

के द्वारा, राज योगी, कामेच्छा पर विजय प्राप्त करता है और कैवल्य प्राप्त करता है। ज्ञान योगी, विवेक, वैराग्य, विचार, शम, दम, और तितिक्षा के द्वारा अपने को पवित्र करता है। निरंतर अलिंग आत्मा का चिंतन कीजिये और काम-वासना का नाश कीजिये। सर्वां में आत्माको देखिये। नाम और रूपों का त्याग कीजिये और वास्तविक तत्व (सत् चित् आनंद) को गहण कीजिये।

क्रोध और मांसल शक्ति भी ओज में परिवर्त्तित की जा सकती है जिस मनुष्य में ओज शक्ति अधिक है, वह अमित मानसिक कार्य कर सकता है। वह अत्यन्त बुद्धिमान होता है। उसके मुख पर आध्यात्मिक कान्ति और नेत्रों में देदीप्यमान प्रकाश होता है वह मित-भाषण से श्रोताओं के मनों पर बड़ा भारी प्रभावित डाल सकता है। उसका भाषण ओजस्वी होता है। उसका व्यक्तित्व आश्चर्य (आदर) उत्पन्न करने वाला होता है। भगवान शंकर (जो एक अखंड ब्रह्मचारी थे) ने अपनी ओज शक्ति के द्वारा अनेक आश्चंर्य जनक कार्य किये। उन्होंने अपनी ओज शक्ति के द्वारा भारत के विविध स्थान में विद्वान पंडितों तथा धर्माचार्यों के साथ शास्त्रार्थ कर दिग्विजय की और समस्त भारत में अद्वैत मत की स्थापना की। योगी नित्य, अखंड ब्रह्मचर्य के द्वारा अपने में इस ओज-शक्ति को संचित करता रहता है।

ऐ मेरे प्रिय पाठकगण! इस वीर्य स्राव की अत्यन्त, अत्यन्त सावधानी के साथ रक्षा कीजिये। मन वचन और कर्म के द्वारा पवित्र होकर ऊर्ध्वरेता योगी बनिये।

ब्रह्मचर्य का माप-दण्ड

प्रत्येक मनुष्य में अनेक इच्छायें होती हैं। उन सब में मुख्य बलवती इच्छा है कामेच्छा (मैथुन की इच्छा), सब ही इच्छायें इस मुख्य इच्छा पर आधारित रहती हैं धन, पुत्र, समृद्धि, घर, गाय बैल आदि की इच्छाएं सब इस मुख्य इच्छा के पीछे रहती हैं। इस अखिल ब्रह्मांड का सृष्टि क्रम चलता रहे, इस कारण से भगवान ने इस इच्छा को इस प्रकार अत्यन्त बलवती बनाई है। अन्यथा विश्वविद्यालयों से निकले हुए छात्रों की भांति जीवन्मुक्तों की भी संसार में भरमार होती। विश्वविद्यालयों की डिग्रियां प्राप्त करना आसान है। परंतु काम की प्रवृति को रोकना एक महान कठिन कार्य है। जिसने कामवासना का सर्वथा त्याग कर दिया है और जिसने अपने आपको मानसिक ब्रह्मचर्य में स्थापित कर दिया है, वह स्वयं ब्रह्म है।

मनुष्यों में नित्य यह शिकायत सुनी जाती है कि उन्हें ब्रह्मचर्य में पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं होती यद्यपि वे उसके लिये भरसक प्रयत्न और अभ्यास भी करते हैं। इसके लिये उनको भयभीत और हताश होने की आवश्यकता नहीं है। यह उनकी भारी भूल है। आध्यात्मिक प्रदेश में भी वायु तथा सर्दी गर्मी नापने के यंत्र हैं। वे अत्यन्त सूक्ष्म हैं। आध्यात्मिक माप-दण्ड के द्वारा मानसिक पवित्रता की उन्नति (वृद्धि) सूक्ष्म से सूक्ष्म स्थिति में जानी जा सकती है। पवित्रता की स्थिति को ग्रहण करने (समझने) के लिये आप के लिये सद्बुद्धि की आवश्यकता है। कठिन साधना, परा वैराग्य और मुमुक्षत्व के द्वारा मानसिक पवित्रता की उच्चतम स्थिति शीघ्र ही जानी जा सकती हैं यदि कोई मनुष्य गायत्री

या ॐ मंत्र का केवल आध घंटे के लिये ही नित्य जप करता है, तो आध्यात्मिक थर्मामीटर (मापदण्ड) उसके ब्रह्मचर्य (पवित्रता) की सूक्ष्म स्थिति को तत्काल प्रदर्शित कर देता है। इस को आप अपनी अशुद्ध बुद्धि के कारण जान नहीं सकते। एक या दो वर्ष के लिये नित्य नियमित रूप से साधना कीजिये और फिर अपने मन की वर्तमान स्थिति को उस के पिछले वर्ष की स्थिति से मिलान कीजिये। आपको विशाल परिवर्तन प्रतीत होगा। आप अधिक शान्ति, अधिक पवित्रता, और अधिक बल और शक्ति का अनुभव करेंगे। इस में तनिक भी संदेह नहीं है। अत्यधिक प्रयत्न की आवश्कता है।

स्त्रियों के लिये ब्रह्मचर्य

स्त्रियां भी ब्रह्मचर्य व्रत का आचरण कर सकती हैं। वे भी मीराबाई की भांति नैष्ठिक ब्रह्मचारिणियां रह सकती हैं तथा अपने आपको भगवान की सेवा और भक्ति में जुटा सकती हैं। वे गार्गी और सुलभा की नाईं व्रत, विचार कर सकती हैं। यदि वे इस मार्ग का अवलंबन करेंगी तो वे ब्रह्मचारिणियां कही जायेंगी। गृहस्थ धर्म का अनुसरण करने वाली स्त्रियां सावित्री, अनसूयादि को अपना आदर्श मानती हुई पातिव्रत धर्म का पालन कर सकती हैं। जिस प्रकार लैला मजनू में भगवान को देख कर उसका साक्षात्कार किया, ठीक उसी प्रकार वे भी अपने पतिदेवों में भगवान कृष्ण को देखकर भगवत्साक्षात्कार कर सकती हैं। वे भी आसन, प्राणायाम आदि मव क्रियाओं का अभ्यास कर सकती हैं। उनको अपने घरों में नित्य खूब संकीर्तन, जप और प्रार्थना करनी चाहिए। भक्ति के द्वारा

वे अपनी कामवासनाओं का सहज ही में नाश कर सकती हैं क्योंकि स्त्रियां स्वभाव से ही भक्ति-परायण हुआ करती हैं। यदि कोई सद्गृहस्थी संतानोपत्ति तथा वंश परम्परा को चालू रखने के निमित्त ही अपनी विवाहिता स्त्री के साथ प्रसंग करता है, तो वह भी वास्तव में एक सच्चा ब्रह्मचारी समझा जाता है। प्रसंग इन्द्रियों की तृप्ति मात्र के लिये नहीं होना चाहिये।

पूर्वकाल मे कई स्त्रियों ने अपनी ब्रह्मचर्य की शक्ति के द्वारा अनेक आश्चर्य जनक कार्य कर संसार को ब्रह्मचर्य का महत्व प्रदर्शन किया है। सती नलयिनी ने अपने पति की जीवन रक्षा के निमित्त, अपने सतीत्व के बल के द्वारा सूर्योदय को ही रोक दिया। सती अनुसूया ने ब्रह्मा, विष्णु, और महेश इन त्रिमूर्तियों को नन्हें-नन्हें बच्चे बना दिये जब उन्हों ने उससे निर्वाण-भिक्षा की प्रार्थना की। वह केवल उसके पातिव्रत धर्म का ही बल था कि जिसके द्वारा उसने इन प्रसिद्ध देवताओं को इस प्रकार बालक रूप में परिवर्त्तित कर दिया। सति सावित्री ने अपने पातिव्रत धर्म के द्वारा अपने पति सत्यवान को यम-पाश से मुक्त करा कर पुनः जीवित कराया। स्त्रीत्व का ऐसा ही महत्व है। ब्रह्मचर्य की ऐसी ही शक्ति है। वे स्त्रियां जो पवित्रता तथा सतीत्व के द्वारा गृहस्थ जीवन यापन करती हैं, वे भी अनसूया, नलयिनी या सावित्री बन सकती हैं।

गृहस्थियों के लिये ब्रह्मचर्य

यद्यपि संसार में विविध प्रकार के प्रलोभन और मन को व्यथित करने वाली अनेकानेक बातें हैं। तथापि मनुष्य के लिये संसार में रहते हुये ब्रह्मचर्य का अभ्यास

करना निरा असंभव नहीं है। पूर्वकाल में भी कइयों ने इसमें सफलता प्राप्त की है। सदाचार धार्मिक ग्रथों का अध्ययन, सत्संग, जप, ध्यान, प्राणायाम, सात्विक और मिताहार, ब्रह्मविचार, आत्मविश्लेषण और आत्म संशोधन, यम, नियम, तथा गीता के १७वें अध्याय में वर्णन किये गये शारीरिक, वाचक और मानसिक तपों का अभ्यास— ये सब ही ब्रह्मचर्य में सफलता प्राप्त करने के साधन हैं। लोग अनियमित, असत्, अपरिमित, अधार्मिक तथा अशिक्षित-जीवन व्यतीत करते हैं। यही कारण है कि वे दुःख पाते और उन्हें अपने इस उद्देश्य की प्राप्ति में सफलता प्राप्त नहीं होती। जिस प्रकार हाथी अपनी ही सूंड से अपने सिर पर धूल उछालता है, ठीक उसी प्रकार मनुष्य अपनी मूर्खता के कारण क्लेश तथा बाधाओं को बुलाकर अपने गले बांधते हैं।

आजकल हमारे नवयुवक, पाश्चात्य सभ्यता के अनुसार, जब कभी वे कहीं बाहिर जाते हैं तो अपनी पत्नियों को भी अपने साथ ले जाते हैं। इससे उनमें सर्वदा स्त्रियों के संग में रहने का दुर्व्यसन पड़ जाता है। पुनः तनिक भी वियोग उनके लिए बड़े भारी दुःख का कारण होता है। जब उनकी स्त्रियां मर जाती हैं, तो उन्हें बहुत आघात् पहुंचता है और भी ऐसे मनुष्यों के लिए केवल एक माह के लिये भी ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करना अति कठिन सा हो जाता है। ऐ अभागे, दुःखी, दुर्बल प्राणियों! ऐ आध्यात्मिक दीवालियों! अपनी धर्मपत्नियों से जितना अधिक हो सके, दूर रहने का प्रयत्न कीजिये। उनके साथ कम बातचीत कीजिये। गंभीर रहिये। उनके साथ परिहास

न कीजिये। सायंकाल में घूमने के लिये अकेले ही जाइये। आपके विज्ञ पूर्वजों ने क्या किया! पाश्चात्य लोगों में जो उत्तम गुण हैं, केवल उन्हीं का अनुसरण कीजिये। वस्त्र, आभूषण, खान, पान, रहन, सहन, तथा अन्य फैशनेबिल कार्यों में उनका अधम अनुकरण करना आपत्ति-जनक है। यदि मनुष्य गृहस्थ में भी पवित्रता से जीवन यापन करे और केवल समयानुकूल वंश-परम्परा के निमित्त ही स्त्री-प्रसंग करे तो वह स्वस्थ, बुद्धिमान, शक्ति-शाली, सुन्दर और आत्मसमर्पण करने वाली संतानें को उत्पन्न कर सकता है। प्राचीन भारत में जब विद्वान और तपस्वी लोग, विवाह करते थे तो वे इसी उद्देश्य के लिये, इसी शिष्ट नियम का अनुसरण करते थे तथा जन साधारण को इस बात की शिक्षा देते थे कि किस प्रकार व्यवहार और मर्यादा के द्वारा गृहस्थी भी ब्रह्मचर्य का जीवन यापन कर सकता है।

आपको अपनी धर्मपत्नी को गीता, उपनिषद्, भाग-वत, रामायण के अध्ययन तथा व्रत, खान-पान, आदि नियमों के विषय में शिक्षा देनी होगी।

शास्त्रों का वचन है कि जब मनुष्य के एक पुत्र उत्पन्न हो जाता है, तो उसकी पत्नी उसकी माता के तुल्य हो जाती है, क्योंकि वह स्वयं ही पुत्र रूप में उत्पन्न हुआ है। ऐसी परिस्थिति में अब आप विचार कर सकते हैं कि एक पुत्रोत्पत्ति के पश्चात् भी इन्द्रिय सुख के लिए प्रसंग कर संतानोत्पित्ति करते रहना कहां तक उचित और मानवीय है।

उत्सुक साधक, जो आत्मसाक्षात्कार के मार्ग का

अवलंबन कर रहे हैं और जो ४० वर्ष से अधिक की अवस्था वाले गृहस्थी हैं, उन्हें चाहिये कि वे अपनी धर्म-पत्नी के साथ जहां तक हो सके बहुत ही कम प्रसंग करें। यदि वे शीघ्र उन्नति चाहते हैं और केवल इसी जन्म में भगवद्-साक्षात्कार करना चाहते हैं, तो उन्हें चाहिये कि वे शारीरिक ब्रह्मचर्य की ओर पूरा पूरा ध्यान दें। आध्यात्मिक मार्ग में मनमानी छूट को स्थान नहीं है।

एक साधक असंतोष पूर्वक कहता है "जब मैं ध्यान करता हूँ तो मेरे चित्त से, अशुद्ध विचारों के तह के तह निकलने लगते हैं। कभी कभी तो वे इतने उग्र और भयंकर होते हैं कि मैं चकरा जाता हूँ और नहीं समझ सकता कि उन्हें किस प्रकार रोका जायं। मैं सत्य और ब्रह्मचर्य में पूर्ण रूप से व्यवस्थित नहीं हूँ। असत्य बोलने का स्वभाव और काम वासनाएँ अभी तक मुझ में गुप्त रूप से सता रही हैं। स्त्री का चिंतन मात्र मेरे मन में उद्वेग उत्पन्न कर देता है। मेरा मन और हृदय इतना कोमल है कि मैं उन विचारों पर नियंत्रण नहीं कर सकता। ज्योंही मन में विचार प्रवेश करता है, त्योंही मन ध्यान और दिन भर की शान्ति तत्काल धूल में मिल जाती है। मैं अपने मन को समझाता हूँ, फुसलाता हूँ, डराता हूँ, फिर भी सब निरर्थक। मन बड़ा उपद्रव करता है। मैं नहीं समझ सकता कि इस काम पर किस प्रकार विजय प्राप्त की जाय। चिड़चिड़ाहट, अहंकार, क्रोध, लोभ, घृणा, आसक्ति आदि दुर्गुण मुझमें अभी तक गुप्त रूप से विद्यमान हैं। जहां तक मैंने अपने मन का विश्लेषण किया है, मैं कह सकता हूँ कि काम ही मेरा मुख्य और बलवान शत्रु है। मैं आप

से प्रार्थना करता हूँ कि कृपया मुझे आप अपनी अनुमति प्रदान करें कि मैं अपने को उस से किस प्रकार मुक्त करूं")

मन बड़ा नीति कुशल है। वह भीतर पुनः कुछ उपद्रव मचाने का प्रयत्न करेगा। उसकी गूढ़ रीतियाँ तथा उसके गुप्त व्यापारों को समझना अत्यन्त कठिन है। इसके लिये योग्य बुद्धि से सावधानी पूर्वक बार बार अंतरावलोकन तथा पूरी पूरी देख रेख की आवश्यकता है। जब कभी भी आपको मन में अशुद्ध विचारों के साथ किसी स्त्री के स्वरूप की कल्पना हो उठे तो आप "ॐ दुर्गा देव्यै नमः" मंत्र का बार बार उच्चारण करें और मानसिक प्रणाम करें। शनै शनैः पुराने अशुभ विचार नष्ट हो जायँगे। इसी प्रकार जब कभी किसी स्त्री को देखने का अवसर आ बने तो उस समय भी इसी भाव को रखते हुये इसी मंत्र का मानसिक उच्चारण करें। आप की दृष्टि पवित्र हो जायगी। संसार में सभी स्त्रियाँ देवी (मातृ) स्वरूप हैं।

आप कबतक कामुक गृहस्थी बने रहेंगे? क्या आयु पर्यन्त? क्या आपको खाने, सोने और संतानोत्पति के अतिरिक्त संसार में कोई अन्य उत्तम कार्य नहीं है? क्या, आप, आत्मा के नित्य-सुख का अनुभव करना नहीं चाहते? आप सांसारिक भोग विलास पर्याप्त मात्रा में प्राप्त कर चुके हैं। आप गृहस्थी की स्थिति से परे जाचुके हैं। जब तक आप युवा हैं, आप क्षमायोग हो सकते हैं, परंतु अब नहीं, जब कि आप के संतान उत्पन्न हो चुकी है। अब संसार में रहते हुये वानप्रस्थ तथा मानसिक संन्यास की अवस्था के लिये तैयार हो जाइये। सर्व प्रथम अपने हृदय को रँगिये। मन को शिक्षित कीजिये। मन से

पदार्थों के प्रति अनासक्त रहना ही वास्तविक संन्यास है। वास्तविक संन्यास, वासनाओं, ममता, स्वार्थ, तथा बच्चे, स्त्री, संपत्ति, और शरीर के मोह का त्याग है। आप को हिमाचल की कंदराओं में जाने की आवश्यकता नहीं है। मन की उपर्युक्त मानसिक स्थिति प्राप्त कीजिये। गृहस्थ में स्त्री बच्चों सहित रहिये, संसार में रहिये, पर सांसारिक विचारों से परे रहिये। सांसारी प्रपचों का त्याग कीजिये। यही वास्तविक सन्यास है। यही वह है जो मैं चाहता हूँ। ऐसा करने से आप राजाओं के राजा बन जायंगे।

——:०:——

पांचवां अध्याय

कामवासना की प्रबलता

आजकल बच्चों के बच्चे उत्पन्न होते हैं। बाल विवाहों के कारण शारीरिक पतन तथा वीर्य का असामयिक क्षय होता है। बुद्धि के अभिमानी मनुष्य को पशु से शिक्षा लेनी चाहिये। सिंह, हाथी, बैल तथा अन्य शक्ति-शाली पशुओं का आत्म नियंत्रण मनुष्यों से कहीं अच्छा है। सिंह वर्ष में केवल एक बार ही भोग करता है गर्भाधान के पश्चात् मादा पशु कभी भी नर पशुओं को अपने पास न आने देंगे जब तक कि उन के बच्चे दूध न छोड़ दें तथा वे स्वयं पुनः स्वस्थ्य और बलवान न हो जायं। यह केवल मनुष्य ही है जो प्रकृति के नियमों की अवहेलाया करता है और फलतः अनेकानेक रोगों का शिकार बनता है। उसने अपने आप को पशुओं से भी अधिक नीचे पतित कर दिया है, आहार, निद्रा, भय और मैथुन—ये पशुओं

और मनुष्य में समान रूप से रहते हैं। मनुष्य में यदि कुछ विशेषता है तो वह केवल धर्म, विवेक और विचार शक्ति की ही है। यदि उसमें ये गुण नहीं हैं तो वह भी ठीक एक द्विपद पशु ही है।

संसार में काम ही सबसे बड़ा शत्रु है। वही मनुष्य का भक्षण करता है। मैथुन के अनंतर अत्यन्त शक्ति हीनता प्राप्त होती है। स्त्री को प्रसन्न करने तथा उसकी आवश्यकता व विलासिताओं को पूरा करने के लिये धन कमाने में आपको अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता है। धन एकत्रित कर लेने में आपको नाना प्रकार के छल कपट व पाप कर्म करने पड़ते हैं। आपको अपनी स्त्री तथा बच्चों के मानसिक शोक, चिन्ताओं में भी भाग लेना पड़ता है। तत्वतः आपको अपने कुटुम्ब को पालन करने में सहस्रों बाधाओं का सामना करना पड़ता है। क्योंकि कोई भी दो व्यक्ति एक मत के नहीं होते अतः घर में हर समय कलह रहती है। आपको अपने उत्तरदायित्वं तथा अपनी आवश्यकताओं को बरबस बढ़ाते रहना पड़ता है। आपकी मति भ्रमित हो जाती है। वीर्य क्षय के कारण जो भारी हानि होती है उसके फलतः आपके शरीर में नाना प्रकार की व्याधियां, शिथिलता, दुर्बलता तथा शक्ति हीनता उत्पन्न हो जाती है। तदनुसार आप शीघ्र मृत्यु का द्वार खटखटाने लगते हैं। अतः आप अखंड ब्रह्मचारी बनकर अपने आपको शोक, दुःख और बाधाओं से मुक्त कीजिये।

एक बार के प्रसंग में जो शक्ति व्यय होती है वह एक दिन के मानसिक कार्य की मानसिक शक्ति तथा सात

दिन के शारीरिक कार्य की शारीरिक शक्ति के बराबर होती है। पाप, डकैती, बलात्कार, अपहरण, आक्रमण, हत्या आदि कार्यों का इतिहास यदि आप पढ़ें तो आपको विदित होगा कि जितने भी मुकद्दमे आज कल सेशन कोर्ट के समक्ष परीक्षा के निमित्त आते हैं, उन सबका मूल कारण कामवासना ही है !

पतंगा अग्नि या दीपक को सुन्दर पुष्प समझ कर उसकी ओर भागता है और अपने आपको भस्म कर डालता है। ठीक इसी प्रकार कामी मनुष्य, यह समझ कर कि उसको वास्तविक आनन्द प्राप्त होगा, स्त्री के मिथ्या रमणीय सौंदर्य की ओर दौड़ता है और अपने आपको कामाग्नि में भस्म कर डालता है। मनुष्य ने अपने को काम की कठपुतली बनाकर अत्यन्त नीचे गिरा दिया है। शोक है कि मनुष्य एक अनुकरण करने वाला यंत्र बन गया है। उसने अपनी विचार शक्ति का ह्रास कर डाला है। वह दासत्व के अत्यन्त नीच व्यवहार में डूब गया है। यह कैसी दयनीय अवस्था है ! यह कैसी वास्तविक शोचनीय दशा है ! यदि वह चाहता है कि वह अपना वास्तविक महत्व और खोई हुई दैविक स्थिति पुनः प्राप्त करे तो उसे चाहिये कि वह अपनी प्रकृति का पूर्णतया परिवर्तन करे, अपनी कामवासना का सर्वथा त्याग कर अपने मन में शुद्ध सात्विक विचारों को भरे तथा नित्य नियमितरूप से ध्यान का अभ्यास करे। कामवासना को भगवत् प्राप्ति की शुभेच्छा में परिवर्तन करना ही परमानंद प्राप्ति का एक मुख्य प्रबल साधन है।

जब मनुष्य काम के द्वारा उत्तेजित है तो प्राण कंपित

साथ ढूंढना पड़ेगा। जिस प्रकार लोमड़ी अपने को झाड़ी में छुपाये रखती है, ठीक उसी प्रकार यह काम भी अपने को मन के अन्तःस्थानों और आश्रय में छुपाये रखता है। आप उसकी क्षमता का अनुसन्धान केवल तभी ही कर सकते हैं, जब कि आप पूर्ण सावधान हैं इसमें आत्म निरीक्षण की अत्यन्त आवश्यकता है। जिस प्रकार अपने पराक्रमी शत्रुओं को जीतने के लिए आपको उन पर चारों ओर से एक साथ आक्रमण करना पड़ेगा, ठीक उसी प्रकार से अपनी प्रबल इन्द्रियों को वश में करने के लिये आपको उन पर भीतर, बाहर, ऊपर, नीचे, चारों ओर से आक्रमण करना पड़ेगा।

जंगली शेर, चीते व हाथी को वश में करना सहज है। विषैले सर्प के साथ खेलना आसान है। अग्नि के ऊपर चलना कठिन नहीं है। अग्नि को निगलना तथा समुद्र के पानी को पी डालना भी कोई कठिन कार्य नहीं है। हिमालय जैसे पर्वत भी उखाड़ कर फेंके जा सकते हैं। रणक्षेत्र में विजय प्राप्त करना कोई बड़ी बात तो नहीं है। परन्तु काम वासना का उन्मूलन करना अति कठिन है। ऐसा होने पर भी आपको तनिक भी निराश होने की आवश्यकता नहीं है। ईश्वर के नाम तथा उसके अनुग्रह में विश्वास रखिये। बिना भगवान की कृपा के काम वासना का समूल नष्ट होना अशक्य है। यदि आप को भगवान में विश्वास है तो आपको सफलता अवश्य प्राप्त होगी। आप एक ही क्षण में कामवासना का नाश करने में समर्थ हो सकते हैं। यदि भगवान की कृपा हो

सकता है और लूला मनुष्य भी पहाड़ी की शिखर पर चढ़ सकता है, यथा—

"मूकं करोति वाचालं पंगुम् लंघयते गिरिम्।
यत् कृपा तमहंवंदे परमानन्द माधवम्॥"

केवल मानवी प्रयत्न से काम नहीं चलेगा। भगवद्-कृपा की परम आवश्यकता है। भगवान उनको सहायता प्रदान करते हैं, जो मनुष्य अपने पैरों पर खड़े होते हैं। यदि आप संपूर्णतया आत्म-समर्पण करते हैं तो मां दुर्गा आपकी साधना स्वयं करेगी। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। आपके पुराने संस्कार तथा वासनायें कैसी ही प्रबल क्यों न हो, आपकी कामवासना समूल नष्ट हो जायगी यदि आप ध्यान, मन्त्र-जप, सात्विक भोजन, सत्संग, प्राणायाम का अभ्यास, शीर्षासन और सर्वांगासन, धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन, आत्मविचार (मैं कौन हूँ?) और किसी पवित्र नदी के तट पर कुछ समय के लिये एकान्त वास–नित्य नियमित रूप से करें। सत्व, रजस् और तमस को दबा देता है। आपको किसी भी अवस्था में निराश होने की आवश्यकता नहीं है। ध्यान में पूर्णतया तत्पर रहिए, मार को मारिए और रण में विजय प्राप्त कीजिये। देदीप्यमान योगी की भांति चमक उठिये। आप नित्य शुद्ध आत्मा हैं। हे विश्वराज! इसका अनुभव कीजिये।

जिस प्रकार दूध से दही बनता है, ठीक उसी प्रकार काम से क्रोध उत्पन्न होता है। यदि काम या इच्छा की पूर्ति नहीं हुई और यदि उस इच्छा पूर्ति के मार्ग में कोई बाधक आ उपस्थित हुआ, तो कामी मनुष्य अवश्य रोष-युक्त व क्रोधित हो जायगा। कामी मनुष्य क्रोधित हो जाता

है तो उसमें मोह, स्मरण शक्ति की व्यग्रता तथा विचार शक्ति का ह्रास होकर अन्त में वह नाश को प्राप्त होता है। जब मनुष्य रोष युक्त होता है, तो फिर संसार में ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है, जो उसके क्रोध को शांत कर सके। वह कठोर और अपशब्दों की मार करेगा और क्या नहीं कर बैठेगा। वह अनियंत्रित हो जाता है। कलह जब आरम्भ होती है तो पहिले पहिल कुछ कड़े शब्दों के साथ ही होती है, परन्तु उसका अन्त हाथाहाथी 'लठम लठी, छुरा छुरी और मार काट में होता है। अज्ञानी मनुष्यों के कामरूपी भयंकर रोग को दूर करने तथा साधकों को ब्रह्म-स्थिति में पहुँचाने के लिये ब्रह्मचर्य के अतिरिक्त कोई भी अधिक प्रभावशाली औषधि नहीं है।

सब प्रकार के मैथुन संबंधी अनियमित व्यवहार हस्त मैथुन, गुदा मैथुन (पुरुष मैथुन) आदि आदि निन्दित पाशवी स्वभावों का सर्वथा त्याग करना चाहिये। इनसे नाड़ी मंडल का सर्वथा नाश होकर अत्यन्त दुर्गति प्राप्त होती है। भोजन में यत्किंचित परिवर्तन, प्राणायाम का अभ्यास तथा यत्किंचित जप के करने से आपको भ्रमवश यह नहीं समझ लेना चाहिये कि आपने काम-वासना का सर्वथा त्याग कर दिया है। आप किसी भी समय प्रलोभन में आ सकते हैं। नित्य सावधानी और कठिन साधना की पूरी पूरी आवश्यकता है। संकुचित प्रयत्न के द्वारा आप पूर्ण ब्रह्मचर्य को प्राप्त नहीं कर सकते। जिस प्रकार एक प्रबल शत्रु को मारने के लिये मशीनगन (एक प्रकार की तोप) की आवश्यकता होती है, ठीक उसी प्रकार इस कामरूपी प्रबल शत्रु का वध करने के

लिये निरन्तर उग्र और दृढ़ साधना की आवश्यकता है ब्रह्मचर्य में यत्किंचित् सफलता प्राप्त कर लेने पर आपको अभिमान नहीं करना चाहिये। यदि आपकी परीक्षा ली गई तो आप बुरी तरह असफल होंगे। आपको अपने दोषों का सदा ध्यान रखते हुये उनसे मुक्त होने का निरन्तर प्रयत्न करते रहना चाहिये। भरसक प्रयत्न की आवश्यकता है। केवल तभी आप इस कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकेंगे।

एक महानुभाव जो विवाहित थे और जिन्होंने धूम्र-पान और मदिरा का त्याग कर दिया था, ब्रह्मचर्य का अभ्यास करना चाहते थे। उनकी स्त्री भी इस कार्य के लिये सहमत थी। परन्तु वे स्वयं इस कार्य में सफलता प्राप्त करना कठिन मानते थे। विशेष कर उनकी कठिनाई नेत्र-इंद्रिय की थी। अभी अभी जब वे मुझसे मिले तो उन्होंने कहा—"गली ही मेरा मुख्य शत्रु है। तात्पर्य यह कि आंखें ज्यों ही वे सुसज्जित स्त्रियों को देखती हैं, आकर्षित हो जाती हैं।" एक साधक कहता है—"जब मैं प्राणायाम, जप और ध्यान का दृढ़ अभ्यास करता था, उस समय मेरा मन कामोत्तेजक परिस्थितितों में भी कामातुर नहीं होता था। परन्तु जब मैंने अभ्यास छोड़ दिया तो मेरा मन, गलियों में अलंकृत कुल-स्त्रियों को तथा सिनेमा घरों के सामने स्त्रियों के चित्रों को देखकर तुरत आकर्षित हो जाता था। समुद्र तट और माल रोड (माल सड़क) ही मेरे शत्रु हैं।"

श्री भर्तृहरि का कथन है—"भोजन के लिये जो कुछ भी भिक्षा द्वारा प्राप्त हो जाय और वह भी नीरस ऐसी भिक्षा

को मैं दिन में केवल एक बार करता हूँ; बिछौने के लिए केवल पृथ्वी है; परिचर्या के लिये शरीर ही मेरा भृत्य (नौकर) है; वस्त्र के लिए सहस्रों पट्टियां लगी हुई पुरानी कम्बल है; ऐसा होने पर भी दुःख इस बात का है कि दुष्ट काम मेरा पीछा नहीं छोड़ता है।"

श्रीमान् जेरोम, यूस्टोचियम नामक कुमारिक से, काम की प्रबलता और संयम-संग्राम के विषय में लिखते हैं:—

"ओ! जब मैं सूर्य की ताप से संतप्त रेगिस्तान में अकेला रहता था और जब मैं वहां तपस्वियों के रहने योग्य भयंकर निवासस्थान की विजनता का अनुभव करता था, उस समय कई बार मैंने रोम के आनन्दों का चिंतन किया। मेरे शरीर पर एक फटी पुरानी गुदड़ी थी; मेरे शरीर का चमड़ा हब्शियों के समान काला था। प्रति दिन मैं रोता और विलाप करता और यदि अनिच्छा-पूर्वक मुझे निद्रा आ जाती तो मेरा कृश शरीर ही पृथ्वी पर गिर पड़ता। खाने पीने के संबंध में मैं कुछ नहीं कहता, क्योंकि इस प्रकार के रेगिस्तान में रोगियों तक को भी ठंडे पानी के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता। ऐसी स्थिति में भी मैं जो विषैले सांप बिच्छू व जंगली जानवरों के मध्य में रहता हुआ, नरक के भय से अपने आपको इस कारागार का दंड दे रहा था—बहुधा ध्यान में सुन्दर कन्याओं के समुदाय को देखा करता था। भूख के कारण मेरा चहरा पीला पड़ा हुआ था, फिर भी इस दुर्बल शरीर में भी मेरा मन वासना से संतप्त हो रहा था। कामेच्छा की अग्नि मृतक शरीर में भी प्रज्वलित रहती है।"

कुसंगति का प्रभाव

जब आप किसी नाच पार्टी में उपस्थित होते हैं या जब आप "मिस्ट्रीज ओफ दी कोर्ट ओफ लंदन" नामक पुस्तक का अध्ययन करते हैं तो आपके मन की स्थिति कैसी होती है! जब आप बनारस में किसी महान संत की सत्संग सभा में उपस्थित होते हैं या जब आप ऋषिकेश में भागीरथी के तट पर किसी एकांत स्थान में निवास करते हैं या जब आप आत्मोन्नति करने वाले उपनिषद् जैसे साहित्यों का अध्ययन करते हैं तो आपकी मनोदशा किस प्रकार की होती है? तुलना कीजिये और अपनी मानसिक स्थिति के अन्तर को देखिये।

स्मरण रखिये कि कुसंगति के तुल्य संसार में मनुष्य का सर्वनाश करने वाली अन्य कोई वस्तु नहीं है। साधकों को चाहिये कि वे कुसंगति का सर्वथा त्याग करें। उन्हें चाहिये कि काम संबंधी अयोग्य कहानियों को कभी नहीं सुने तथा धनी मनुष्यों की विलासी-पद्धतियों का भी अनुसरण न करे। उन्हें तीखे भोजन, वाहन (सवारी), राजनीति, रेशमी वस्त्र, फूल, इत्र आदि चीजों का भी त्याग करना चाहिये, क्योंकि इनसे मन सहज ही में उत्तेजित हो जाता है। वह (मन) विलासी मनुष्यों के मार्गों का अवलंबन करने लगेगा। वासनायें उत्पन्न होने लगेंगी। आसक्ति भी होने लगेगी। जिन स्थानों में अश्लील भजन या गाने गाये जाते हैं, उन स्थानों को भी साधकों को त्याग करना चाहिये।

अश्लील चित्र, असभ्य भाषण और वे उपन्यास जिन में रङ्गीन कहानियों का वर्णन हो,—ये सब ही काम को

उत्तेजित करने वाले होते हैं। इनसे हृदय में अशिष्ट, क्षुद्र और अवांच्छित भाव उत्पन्न होते हैं। परन्तु श्रीकृष्ण, राम, जीसस या भगवान बुद्ध के सुन्दर चित्रों को देखने से तथा सूरदास, तुलसीदास तथा अन्य महात्माओं के प्रभावशाली भजनों को सुनने से हृदय में शिष्ट भाव और वास्तविक भक्ति उत्पन्न होती है। इनसे शरीर में रोमांच होकर प्रेमाश्रु बहने लगते हैं तथा मन को सहसा भाव समाधि प्राप्त हो जाती है। अब आपको अन्तर स्पष्ट हो गया होगा।

कोई भी वस्तु जिससे मन में अशुद्ध विचार उत्पन्न हों वह कुसंगति है। ऐ मेरे सुयोग्य साधकों! सांसारी मनुष्यों के संग का त्याग कीजिये। संसार के कोलाहल तथा शहरों के शोर गुल्ल से दूर रहिये। जो मनुष्य सांसारिक विषय संबंधी बात-चीत करते हैं वे आप को शीघ्र ही दूषित कर देंगे। आपका मन संशय-युक्त होकर इधर-उधर भटकने लगेगा। आपका पतन हो जायगा। यदि आप किसी एकांत स्थान को जाकर साधु महात्मा के संग में रहें तो आप अवश्य आपत्ति की परिधि से परे रहेंगे। उन्नतशील प्रवीण पुरुषों के आकर्षक तेज और उनकी प्रबल विचार धाराओं का, कामी मनुष्यों के मन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। सत्संग नित्य कीजिये।

स्वप्नदोष

मथुन में अधिक शक्ति व्यय होती है। इस कार्य में समूचा नाड़ी मंडल उत्तेजित हो जाता है। परन्तु स्वप्न में जब वीर्य बाहिर निकलता है तो ऐसा नहीं होता। इसके अतिरिक्त स्वप्नदोष में वास्तविक सार पदार्थ नहीं आता।

स्वप्नदोष के समय जो चीज बाहिर निकलती है वह केवल शिश्न की गिल्टियों का स्राव (रस) होता है, जिसके साथ कुछ वीर्य अवश्य मिला रहता है। यह रस भी वीर्य ही का मौलिक (मुख्य) अंश है। इसकी भी रोक होनी चाहिये।

मैथुन से नाड़ी मंडल नष्ट हो जाता है। शक्ति का अत्यधिक ह्रास होता है। स्वप्नदोष में केवल शिश्न की गिल्टियों का रस बाहिर निकलता है। यद्यपि वीर्य की भी हानि होती है अवश्य, परन्तु विशेष नहीं क्योंकि इस में वीर्य परनाल की भांति बहकर अधिक बाहिर नहीं आता। स्वप्नदोष कामवासना को उत्तेजित नहीं करता। परन्तु ऐच्छिक मैथुन साधक की आध्यात्मिक उन्नति में अत्यन्त बाधक होता है। इस कार्य से जो संस्कार उत्पन्न होंगे वे बहुत गहरे होंगे जिससे पूर्व संस्कार जो चित्त में पहिले से ही जमे हुए हैं वे और भी अधिक बलवान हो जायेंगे और कामवासना को उत्तेजित करेंगे। यह ठीक वैसा ही है जैसा कि उस अग्नि में घी डालना जो शनैः शनैः बुझने जा रही है। यह नए संस्कार के उत्पन्न न होने देने का कार्य बड़ा कठिन होगा। आपको मैथुन का पूर्णतया त्याग कर देना चाहिये। मन आपको अनुचित अनुशासन देकर नाना प्रकार से भ्रम (मोह) में डालने का प्रयत्न करेगा। सचेत (सावधान) रहिये। उसकी आज्ञा न मानिये परन्तु विवेक बुद्धि के द्वारा आत्मा की आवाज को सुनने का प्रयत्न कीजिए।

ज्ञानी को स्वप्नदोष नहीं होते। जो ब्रह्मचर्य में स्थित है उसको बुरा स्वप्न नहीं होता। स्वप्न आप की मानसिक पवित्रता के माप-तोल का सूचक है। यदि आप को अपवित्र

स्वप्न नहीं होते तो आप ब्रह्मचर्य या पवित्रता में उन्नति कर रहे हैं।

सदा कौपीन पहनिये। आपको अंडकोष के कोई भी रोग नहीं होंगे। इससे आपको ब्रह्मचर्य के रक्षण में भी सहायता मिलेगी। जब निद्रा में वीर्य-पात होता है तो मन जो सूक्ष्म शरीर में कार्य कर रहा था, वह प्रचंडता से उत्तेजित होकर एकाएक स्थूल शरीर में प्रवेश हो जाता है। स्वप्नदोष का यही कारण है। बहुधा अशुद्ध स्वप्नों के कारण भी ऐसा होता है। जो सात्विक भोजन करते हैं उन्हें स्वप्न दोष नहीं होता। शम, दम, सात्विक भोजन तथा इस पुस्तक के बताए हुए अन्य आध्यात्मिक अभ्यासों के द्वारा इसका अवरोध किया जा सकता है।

स्वप्न दोष प्रायः रात्रि के पिछले पहर में हुआ करते हैं। जो मनुष्य प्रातःकाल तीन और चार बजे के बीच में उठ जाया करते हैं, वे स्वप्न-दोष रूपी रोग से व्यथित नहीं होते। यदि आपको रात्रि में स्वप्न दोष हो जाय तो प्रातःकाल में शीघ्र स्नान कर लेना चाहिए। फिर बीस प्राणायाम कर ध्यान करना चाहिए। धीरे धीरे आप इस रोग से मुक्त हो जायेंगे।

यदि आपको रात्रि में स्वप्न-दोष अधिक होता हो तो सोते समय गीली लंगोट पहिन कर सोइए। 'हिप बाथ' (कटि स्नान) लीजिए।

रात्रि में आपको जब जब पेशाब करने की इच्छा हो, शीघ्र ही उठकर पेशाब कीजिए। पेशाब को रोकना

ही स्वप्न दोप का अन्य कारण है सोने के पहिले टट्टी पेशाब करके सोना चाहिए।

यदि आपको दृढ़ कोष्ठवद्धता (कब्ज) की शिकायत के कारण दस्त साफ नहीं होता है और आंतें मल से भरी रहती हैं, तो इससे भी आपकी शुक्र संबंधी नाड़ियां पर दवाव पड़ेगा और तदनुसार आपको रात्रि में स्वप्न-दोप हो जायगा।

कभी कभी, टट्टी या पेशाब साफ न आने से, शरीर में गर्मी अधिक रहने से, अधिक घूमने फिरने से, तथा अधिक मिठाई, मिर्च और नमक के सेवन से भी स्वप्नदोष हो जाया करता है।

धातु संबंधी दुर्वलता, स्वप्नदोष, कामुक स्वप्न तथा दुराचारी जीवन के अन्य सभी परिणाम मनुष्य के जीवन को दुःखमय बना देंगे, यदि उचित साधना द्वारा उनकी यथा समय रोक न की गई। कैंफर मोनोब्रोमेटा पिल्स Camphor (MonoPills) तथा अन्य प्रकार के मिक्स्चर जैसे Spt. Camphor, Tr. Belladona इत्यादि से भी स्वप्न-दोप का निवारण हो सकता है, परन्तु इनसे भी सदा के लिए रोग का छुटकारा नहीं होता। जब तक दवाई का सेवन किया जाता है, तब तक रोग से केवल क्षणिक मुक्ति मिलती है। पश्चिम के वैद्य लोग भी स्वीकार करते हैं कि इन औपधियों से सदा के लिये रोग से मुक्ति नहीं मिलती। ज्योंही औपधि का सेवन बन्द हुआ कि रोग और भी अधिक बढ़ जायगा। कभी कभी ऐसा भी होता है कि इन दवाइयों के कारण रोगी नपुंसक हो जाता है। चिरस्थाई प्रभावशाली चिकित्सा

तो केवल प्राचीन योग-प्रणाली के द्वारा ही हो सकती है। 'नास्ति योगात् परं बलम्'—योगबल के अतिरिक्त अन्य कोई भी बल नहीं है। यदि आप इस पुस्तक में बताये हुये विभिन्न साधना का नित्य नियमित रूप से अभ्यास करेंगे तो आपको अवश्य सफलता प्राप्त होगी।

दुराचारी जीवन से हानियां

आज कल हम क्या देखते हैं? पुरुष और स्त्री, बालक और बालिकायें, अशुद्ध विचार, कामवासना और क्षुद्र इन्द्रिय-जनित सुख रूपी सागर में गोता लगा रहे हैं। यह वास्तव में अति शोचनीय दशा है।

कुछ बालकों की कहानियां सुनकर आपको वास्तव में दुःख होगा। अस्वाभाविक साधनों के द्वारा वीर्य के अधिक नष्ट हो जाने के कारण, खिन्न चित्त हो कर अपने अन्धकारमय दीन हीन जीवन की शोचनीय दुःखद कथाओं का वर्णन करने के लिए, मेरे पास अनेक कालेज के छात्रगण आया करते हैं। काम के नशे तथा काम की उत्तेजना के कारण उनकी विवेक बुद्धि नष्ट हो गई है। जो शक्ति आप कई सप्ताह और महीनों में प्राप्त करते हैं, उसको अनायास ही क्षणिक सुख के लिए नष्ट कर देना क्या बुद्धिमानी है?

मैथुन से अत्यधिक शक्ति का नाश होता है। मैथुन से समूचा नाड़ी मंडल प्रभावित होकर शिथिल पड़ जाता है। स्मरण शक्ति का ह्रास, असामयिक वृद्धावस्था, नपुंसकता, नाना प्रकार के नेत्र-रोग तथा अनेक प्रकार के नाड़ी मंडल संबंधी रोग, वीर्य के अधिक नष्ट होने के कारण उत्पन्न होते हैं। शौर्य और शक्ति के सहित

क्षिप्रगति व स्फूर्ति से गिलहरी की भांति कूदते फांदते प्रसन्नता पूर्वक चलने के स्थान में हमारे अधिकांश नवयुवक आज कल वीर्य शक्ति की हीनता के कारण पीतमुख लड़खड़ाते हुए पैरों के साथ ही चलते दिखाई देते हैं। क्या यह वास्तव में शोक जनक अवस्था नहीं है ?

अपने वीर्य को अत्यधिक नष्ट करने वाले मनुष्य छोटी छोटी बातों के लिए क्रुद्ध हो जाते हैं। उनके मन स्थिर न रह कर छोटी छोटी बातों से उद्विग्न होते रहते हैं। जो मनुष्य ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करते, वे क्रोध, ईर्ष्या, आलस्य, भय आदि दुर्गुणों के दास बन जाते हैं। यदि आपकी इन्द्रियां आपके वश में नहीं हैं तो आप ऐसे मूर्खता के कार्य करने लगेंगे जिन को करने का साहस एक छोटा बच्चा भी नहीं करेगा।

वीर्य शक्ति के नष्ट हो जाने के पश्चात् जो अनिष्ट परिणाम होते हैं, उन्हें जरा ध्यान पूर्वक देखिये। ब्रह्मचर्य के अभाव में वीर्य शक्ति को इस प्रकार अकारण ही नष्ट कर देने से मनुष्य, शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक दुर्बलता को प्राप्त करता है। शरीर और मन उत्साह सहित काम नहीं कर सकते। आपको अधिक थकावट और दुर्बलता का अनुभव होगा। नष्ट शक्ति को पुनः प्राप्त करने के लिए आपको दूध, फल तथा अन्य पौष्टिक पदार्थों का सेवन करना आवश्यक प्रतीत होगा। परन्तु स्मरण रहे कि इन चीजों से आपकी हानि की पूर्ति कदापि नहीं हो सकती। एक बार जो खो गया वह सदा के लिए चला गया। आपको अप्रसन्नता, शिथिलता, उदासीनता तथा

अन्धकारमय जीवन यापन करना पड़ेगा। शारीरिक और मानसिक शक्ति दिनों दिन क्षीण होती जायगी।

शारीरिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लिए जीवन में शुद्धता की बड़ी आवश्यकता है। लड़के तथा लड़कियां अपने शारीरिक अंगों के दुरुपयोग से मौन रूप में सहते हैं। वे शारीरिक अंग हमारे जीवनतत्त्व (प्राण) के क्षय लिए प्रणाली का काम करते हैं। जिससे मानसिक तथा शारीरिक विकास में बाधा पहुँचती है। यही कारण है कि इस अज्ञानता के कारण आजकल बालक और बालिकाओं को अधिकतर दुःख उठाना पड़ता है। जब हमारे मानवी शरीर में प्राकृतिक रसतत्वों की कमी होगी तो हमारे नाड़ी मंडल के शक्तितत्वों में भी उसी अनुपात से अवश्य कमी होगी। यही कारण है कि इन्द्रिय संबंधी व्याधियां उत्पन्न होती हैं। व्याधियों की संख्या बढ़ रही है। नवयुवक रक्त हीनता, स्मरणशक्ति का ह्रास तथा दुर्बलता के शिकार बनते हैं। उन्हें अपनी पढ़ाई तक छोड़नी पड़ती है। व्याधियों का विस्तार इस प्रकार हो रहा है कि हजारों वैद्यों तथा डाक्टरों ने अपने अपने औषधालय खोल दिये हैं हजारों प्रकार के इंजेक्शन प्रचलित हो चुके हैं। फिर भी कष्ट दिनों दिन बढ़ता ही जा रहा है। लोगों को अपने प्रयत्नों में सफलता प्राप्त नहीं होती। इसका क्या कारण है? कारण दूर नहीं है। वह दुर्व्यसनों तथा असाधारण मैथुन के कारण वीर्य का नाश ही है। वह अशुद्ध मन और अशुद्ध शरीर के कारण ही है।

यदि मनुष्य जीवन में उन्नति प्राप्त करना चाहता

मन के भीतर प्रचुरता से प्रवेश करें, तो उन्हें रोकने या दबाने का प्रयत्न न कीजिए। अपने इष्ट मन्त्र का जप कीजिए। अपने दोषों तथा दुर्गुणों का विचार न कीजिए। यह पर्याप्त होगा यदि आप अपने दोषों को अच्छी प्रकार से जान लें। दुर्गुणों पर आक्रमण न कीजिए। ऐसा करने पर वे पुनः आप पर आक्रमण करेंगे। "मेरे भीतर इतने दोष और दुर्बलतायें भरी हुई हैं" इस प्रकार की चिंता न कीजिए। सत्य से असत्य पर विजय प्राप्त की जाती है। सात्विक वृत्तियों को उत्पन्न कीजिए। ध्यान और प्रतिपक्ष भावना के द्वारा शुद्ध सात्विक गुणों की वृद्धि होने से अशुद्ध दुर्गुणों का आप ही नाश हो जायगा। यह उचित रीति है।

दुर्विचार

मन में कुविचार के प्रवेश करते ही इन्द्रिय में उत्तेजना उत्पन्न हो जाती है। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है? क्योंकि यह बहुधा बारंबार हुआ करता है, इस लिए आपको इसमें कुछ आश्चर्य प्रतीत नहीं होता। शक्तिशाली सूर्य के उदय होते ही अखिल विश्व देदीप्यमान हो जाता है। यह भी एक महान् आश्चर्य है, आश्चर्यों का आश्चर्य है। क्योंकि नित्यप्रति ऐसा होता है, इसलिए आप इसे एक साधारण घटना समझते हैं। आत्मारूपी एक ही ज्ञान सूर्य सर्व मस्तिष्कों को प्रकाशमान करता है। यह आश्चर्यों का आश्चर्य है। अज्ञानता के कारण आप इस परमावश्यक विषय को तुच्छ समझते हैं। मन विद्युत (बिजली) की बड़ी बैटरी (यंत्र) है। वह वास्तव में एक डायनेमो (बिजली पैदा करने का यंत्र)

है। वह एक बिजली घर है। नाड़ियां बिजली के तार हैं जिनके द्वारा उत्तेजना रूपी बिजली धारायें हाथ पैरादि नाना प्रकार के इन्द्रियगण तक पहुँचाई जाती हैं। यदि आप नींबू या इमली के रस को किसी सोने के बर्तन में रखते हैं, तो वह दूषित या विषैला नहीं होता। यदि आप उसे पीतल या तांबे के बर्तन में रखते हैं तो वह अवश्य दूषित होकर विषैला हो जायगा। ठीक उसी प्रकार यदि किसी ऐसे मनुष्य के मत में जो नित्य ध्यान का अभ्यास करता है कुछ विषय वृत्तियां उत्पन्न हों भी तो वे उसमें विकार या कामुक उत्तेजना उत्पन्न नहीं करतीं और न उसे अपवित्र ही बना सकती हैं। इसके विपरीत अशुद्ध मनस वाले मनुष्यों के भीतर यदि विषय वृत्तियां हैं तो वे उनमें विषय पदार्थों के देखते ही, कामोत्तेजना उत्पन्न कर देंगी।

काम, क्रोध, लोभ, द्वेष, दंभ, अहंकार, चालाकी, कूटनीति आदि आंतरिक कंटक कहे जाते हैं। कुछ बाहरी कंटक भी हैं जैसे कुसंगति, अश्लील चित्र, उपन्यास, अश्लील गायन, सिनेमा आदि। कोई भी वस्तु जो मन में अशुद्ध विचार उत्पन्न करे, वास्तव में वही कुसंगति है। पशुओं को भोग करते देखना भी एक प्रकार की कुसंगति है, क्योंकि उससे मन में कामवासनायें उत्तेजित हो जाती हैं। क्या आप नहीं जानते कि दो मछलियों को भोग करते देख एक ऋषि के मन में भी कामवासना उत्तेजित हो गई थी?

मुख्य प्राण के कंपन होने के कारण मन में विचार का संचलन होता है। यह विचार शक्ति महान् विद्युत

गति के साथ नाड़ी मंडल के द्वारा दूरस्थ इन्द्रियों तक पहुँच जाती है। यह स्थूल शरीर एक मांसल सांचा है, जिसको मन ने ही अपने अनुभव और सुख के लिए, संस्कार और वासनाओं के द्वारा बनाया है। वह अशिक्षित कामुक मनुष्य की प्रचंड- द्रोही इन्द्रियों को प्रवृत्त कर देता है। वही मन एक अनुशासित जितेन्द्रिय योगी का आज्ञा-कारी, स्वामी-भक्त सेवक बन जाता है। सजग ब्रह्म-चारी को नित्य अपने विचारों पर पूर्ण सावधानी के साथ दृष्टि रखनी चाहिए। उसे चाहिए कि वह किसी भी दूषित विचार को अपने मन रूपी कारखाने के द्वार में न प्रवेश होने दे। यदि उसका मन अपने लक्ष्य (ध्यान का पदार्थ) पर पूर्णतया स्थित है तो फिर दुर्विचार के मन में प्रवेश करने के लिए कोई स्थान ही नहीं है। यदि कोई दुर्विचार मन के कूट द्वार से प्रवेश हो भी जाय तो मनुष्य को चाहिए कि वह उसे स्वीकार ही न करे। यदि उसने उसे ग्रहण कर लिया तो वह विचार-धारा समस्त शरीर में फैल जायगी। इन्द्रियां और समस्त नाड़ी मंडल प्रज्वलित होने लगेंगी। यह अत्यन्त मार्मिक स्थिति है।

दुर्विचार के उत्पन्न होते ही उसे प्रतिपक्ष-भावना प्रणाली के अनुसार, शुद्ध सात्विक विचारों द्वारा जड़ से उखाड़ कर फेंक देना चाहिए। यदि आपकी इच्छा शक्ति दृढ़ है तो वह दुर्विचार तुरत ही ढ़केल दिया जा सकता है। प्राणायाम, प्रार्थना, आत्म विचार, ध्यान, सत्संग आदि के द्वारा दुर्विचारों को मानसिक-शिल्प शाला के प्रवेश-द्वार पर ही विनष्ट किया जा सकता है। आरंभ में शुद्ध होगा। जब आप शुद्ध हो जायंगे, जब आपकी इच्छा

"यन्मनसा ध्यायति तद् वाचा वदति।
यद् वाचा वदति तद् कर्मणा करोति॥"

अर्थात् जिसका मन से विचार किया जाता है वही वाणी बोलती है; जो वाणी बोलती है वही इन्द्रियों द्वारा किया जाता है। यही कारण है कि वेदों में कहा गया है "तन्मेमनः शुभ कल्पमस्तु" अर्थात् मेरा मन शुभ संकल्प ही किया करें। शुभ विचारों को ग्रहण कीजिए। जिस प्रकार लकड़ी के तख्ते में एक पुरानी कील के ऊपर एक नई कील को ठोंक देने से पुरानी कील आप ही बाहिर निकल पड़ती है, ठीक उसी प्रकार एक नये शुद्ध सात्विक विचार के द्वारा पुराना दुर्विचार आप ही दूर हो जाता।

नेत्र मन की खिड़की है। यदि मन पवित्र और शान्त है तो नेत्र भी पवित्र और शान्त होंगे। जो मनुष्य ब्रह्मचर्य में स्थित हैं उनके नेत्र चमकीले, वाणी मीठी और आकृति सुन्दर होगी।

—:※:—

छठा अध्याय

मन, प्राण और वीर्य

मन, प्राण और वीर्य एक हैं। दूध और पानी की भांति मन और प्राण का संबंध है। मन, प्राण और वीर्य का एक ही संबंध है। यदि मन को अधीन कर लिया जाता है तो प्राण और वीर्य स्वयं अधीन हो जाते हैं। जो मनुष्य प्राण का निरोध करता है, तो उसके मन का व्यापार और वीर्य की गति आप ही आप कम हो जाती है। पुनः यदि वीर्य पर अधिकार किया जाता है और यदि उसे पवित्र विचारों और विपरीतकरनी मुद्राओं के द्वारा ऊर्ध्वरेता (यानी वीर्य को ऊपर की ओर मस्तिष्क में ले जाना) बनाया जाता है तो मन और प्राण स्वयं वश में हो जाते हैं। मन और इन्द्रियों में घनिष्ठ संबंध

है। मन चेष्टा करता है और पंच-ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा इस संसार के अनुभवों को ग्रहण करता है। वह ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा ही आनन्द को प्राप्त करता है। वह कर्मेन्द्रियों से हठपूर्वक काम करवाता है। अतः इन्द्रियों को वश में करना वास्तव में मन ही को वश में करना है। यम, नियम, शम, दम, प्रत्याहार आदि के अभ्यास का उद्देश्य मन और इन्द्रियों को वश में करना ही है।

मन पंच ज्ञानेद्रियों के सहयोग से शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध के द्वारा आनन्द प्राप्त करता है। स्पर्श के द्वारा वह उच्चतम आनन्द का अनुभव करता है मैथुन का सुख ही मन के लिए एक विशिष्ट (सब से उत्तम) सुख है। प्रत्येक मनुष्य उसी सुख के पीछे दौड़ता है और उसी में समाप्त हो जाता है। अब रस (उत्तम खान पान) को लीजिए। रूप, आकार और सुन्दरता का सुख है। शब्द, वाद्य से प्राप्त होने वाला सुख है। अन्त में गंध को लीजिए। गंध की इन्द्रिय इतनी दुखदाई नहीं है जितनी रस की। यदि स्वादेन्द्रिय या जिह्वा वश में हो जाती है तो अन्य सब इन्द्रियां स्वयं वश में हो जाती हैं।

जिसने मन को वश में कर लिया उसने प्राण को भी वश में कर लिया। मन दो रूपों से कार्यान्वित होता है प्राण और वासनाओं के स्पन्दन से। यदि इन दोनों में से एक नष्ट हो जाय तो दूसरी वस्तु आप ही नष्ट हो जाती है। जब मन स्थिर होता है तो प्राण भी स्थिर हो जाता है। जब प्राण स्थिर होता है तो मन भी स्थिर होता है। जब मन और प्राण स्थिर नहीं होते तो सब इन्द्रियां चंचलता पूर्वक अपने अपने कार्यों में निमग्न रहती हैं।

जीवन एक बहुत बड़ी सरिता है। इन्द्रियां उसमें पानी हैं। काम, क्रोध और लोभ रूपी उसमें बड़े बड़े मगर-मच्छ आदि जलचर हैं। जन्म और मरण रूपी दो भँवर हैं। ज्ञानी मनुष्य आत्म संयम और विचार रूपी नौका के द्वारा इस सरिता को पार करता है।

मृग शब्देन्द्रिय की प्रबलता के कारण जाल में फंस कर अपने प्राण गँवा देता है; इसी प्रकार हाथी, पतंग, मछली, तथा भ्रमर क्रमशः स्पर्श, रूप, रस तथा घ्राणेन्द्रिय की प्रबलता के कारण अपने प्राणों को समाप्त कर देते है। जब एक ही इन्द्रिय की प्रबलता ऐसी है तो फिर मनुष्य की पंचेन्द्रियों के युक्त प्रभाव की प्रबलता किस प्रकार की होगी, उसे पाठक स्वयं समझ सकते हैं।

जिस प्रकार खनिज पदार्थों की अशुद्धता धौंकनी के द्वारा जलाकर भस्म कर दी जाती है, ठीक उसी प्रकार इन्द्रियों के कलंक भी प्राणों के निरोध के द्वारा दग्ध किये जाते हैं। अतः प्राणायाम का नित्य अभ्यास करना चाहिये। वह अत्यन्त परिशोधक है।

सामान्य मनुष्यों को मन पर अधिकार नहीं होता। मन इधर उधर भागता रहता है। वह विध्वंस करता है। वह मनुष्य पर अधिकार जमाता है। वह नित्य हल चल और कलह की स्थिति में रहता है। उसमें भावनायें और प्रवृत्तियां उठती रहती हैं। वह इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण किये इच्छित पदार्थों के चित्रों से हर समय प्रभावित होता रहता है। प्रत्येक इन्द्रिय, अपनी तृप्ति के लिये मन को अपने विशेष भोग-पदार्थ की ओर खींचती रहती है। कर्ण जब कभी मीठी तान को सुन पाता है तो मन को अपनी

ओर खींचता है। जिह्वा मन को काफी की दुकानों की ओर भगा कर ले जाती है। मन के लिए एक क्षण भी विश्राम नहीं है! चिंता, शोक, आकुलता, भय, व्याधियां, दुर्वचन, घृणा, काम, क्रोध, आदि मन के भीतर हल चल मचाते रहते हैं तथा उसको निरन्तर संतप्त करते रहते हैं। जिसने अपने विचार, भावनायें, चित्त-वृत्तियां, प्रेरणायें तथा अपनी इन्द्रियों पर आधिपत्य प्राप्त किया है वह वास्तव में सम्राटों का सम्राट् है। वह धन्य है। ब्रह्मचर्य के पूर्णतया रक्षण के लिये सब इन्द्रियों पर सर्वथा आधिपत्य प्राप्त करना नितान्त आवश्यक है।

प्रतिक्रिया के संबंध में आपको अत्यन्त सावधान रहना पड़ेगा। जिन इन्द्रियों को आपने महीनों और वर्षों पर्यन्त वश में रखा है वे ही इन्द्रियां तनिक ही असावधानी के कारण उपद्रवी हो सकती हैं। अवसर प्राप्त होते ही वे आप पर बलात् आक्रमण करेंगी। कुछ लोग जो एक या दो-वर्षों तक ब्रह्मचर्य का अभ्यास करते हैं वे ही अनन्तर अधिक कामी होकर अपनी वीर्य शक्ति का अधिक नाश करते हैं। अन्त में वे असाध्य दुराचारी भी बन जाते हैं।

गृह के एक भृत्य पर नियन्त्रण रखना कितना कठिन है। शरीर की एक इन्द्रिय को अपने आधीन रखना कितना अधिक कठिन है। पुनः यदि पांचों इन्द्रियों को एक साथ वश में रखना है, तो आप समझ सकते हैं कि वह और भी कितना अधिक कठिन होगा। वह योगी जो जितेन्द्रिय है वह इस संसार में एक प्रभाव शाली महाराजा है।

वासनाओं की इतिश्री कीजिये

वासना, चित्त रूपी सरोवर में एक प्रकार की लहर है। पदार्थों के प्रति जो आकर्षण और आसक्ति होती है उसका कारण वासना है; वही बंधन का कारण है।

यदि आपके मन में वासना नहीं है तो आप का किसी भी व्यक्ति के प्रति आकर्षण नहीं होगा। मन में उत्पन्न होने वाली वासनाओं पर आक्रमण करने के लिए, विज्ञान-मय कोश साधक के लिए एक दुर्ग का कार्य करता है। शम के अभ्यास के द्वारा आप सब वासनाओं का एक एक करके नाश कर सकते हैं। आप बुद्धि के द्वारा विवेक से सहायता प्राप्त कर सकते हैं। ब्रह्मचर्य की प्राप्ति में वासना के त्याग से पूरी पूरी सहायता मिलती है।

वासना ही मन की अशांति का कारण है। ज्योंही वासना प्रकट होती है, त्योंही विषय-वृत्ति-प्रवाह के द्वारा मन और इच्छित पदार्थ के बीच में एक आत्मीय संबंध स्थापित हो जाता है। मन कदापि पीछे नहीं हटेगा, जब तक कि वह वांच्छित पदार्थ को प्राप्त कर उसका उपभोग न कर लेगा। जब तक भोग प्राप्त न होगा, तब तक मन में अशान्ति ज्यों की त्यों बनी रहेगी। वृत्ति पदार्थ की ओर भागती रहेगी जब तक वह उसे प्राप्त कर उसका उपभोग न कर ले। सामान्य मनुष्य दुर्बल इच्छा के कारण किसी भी वासना को दबा नहीं सकते। जिज्ञासु किसी सीमा तक वासना को दबा सकता है। परन्तु ज्योंही उपयुक्त अवसर प्राप्त हुआ कि वह द्विगुण-शक्ति के द्वारा पुनः प्रकट हो जाती है। जब सब वासनाओं का सर्वथा खातमा हो जायगा तो फिर किसी भी बाहरी पदार्थ के

प्रति आकर्षण व आसक्ति नहीं होगी। शम और दम साधक के लिए सर्वश्रेष्ठ साधन हैं।

जिस प्रकार बीजों में पुष्प गुप्त रहते हैं, ठीक उसी प्रकार अन्तःकरण और कारण शरीर में वासनायें गुप्त रहती हैं। नित्य नये पुष्प खिलते हैं और पुनः एक या दो दिनों में वे मुरझा जाते हैं। ठीक इसी प्रकार वासनायें भी चित्त में एक के पीछे दूसरी उत्पन्न हो हो कर संकल्पों के द्वारा जीवों को अपने इच्छित पदार्थों को प्राप्त करने तथा उनका उपभोग करने के लिये निरन्तर उत्तेजित करती रहती हैं। वासनाओं से कार्य उत्पन्न होते हैं और कार्यों से पुनः वासनाओं को बल प्राप्त होता है। यह एक चक्रिका भी है। आत्म ज्ञान के उदय होते ही सब वासनायें सर्वथा दग्ध हो जाती हैं।

नाट्यशालाओं में जाने तथा चल-चित्रों के देखने की इच्छा एक प्रकार की अशुभ वासना है। गीता के अध्ययन तथा आध्यात्मिक साधनाभ्यास की इच्छा शुभ वासना है। शुभ वासनाओं की वृद्धि कीजिये। अशुभ वासनायें सारी आप ही नष्ट हो जायेंगी। आत्म साक्षात्कार की तीव्र इच्छा के द्वारा सर्व प्रकार की वासनायें नष्ट हो जायेंगी। शुद्ध वासनाओं की वृद्धि करने में कोई हानि नहीं है। आत्म-साक्षात्कार के मार्ग में वे आपके लिए एक बहुमूल्य पूंजी हैं।

जब कभी आपके मन में कोई इच्छा उत्पन्न हो तो आप सदा अपने विवेक या विचार शक्ति से सम्मति प्राप्त करें। इस विवेक के द्वारा आप तुरत जान सकेंगे कि यह इच्छा दुःख पूर्ण है और वह एक निरर्थक प्रलोभन के

अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है जो केवल इस उपद्रवी मन की ही रचना है। विवेक आपको उस इच्छा का तत्काल त्याग कर देने के लिए तथा आध्यात्मिक साधना का अभ्यास करने के लिए सुसम्मति प्रदान करेगा। वह संकल्प-शक्ति की सहायता के द्वारा आपकी इच्छा को तत्काल समूल नष्ट कर देगा। दुष्ट काम और प्रलोभन को नष्ट करने के लिए ज्ञान मार्ग के साधक के लिए विवेक और संकल्प-शक्ति ये दो प्रबल शस्त्र हैं।

यह आक्रमण आंतरिक आक्रमण है। बाहर की ओर से भी आक्रमण होना चाहिए। वह आक्रमण दम यानी इन्द्रिय-निग्रह के द्वारा किया जाता है। विषय-संवेदन को बाहिर से इन्द्रियों के मार्गों द्वारा अपने मन के भीतर प्रवेश ही न होने दीजिए। यह भी आवश्यक है। केवल शम पर्याप्त नहीं है। दम के अभ्यास से इन्द्रियों को शान्त रखना चाहिए। उदाहरणार्थ ज्योंही आपके मन में कामवासना उत्पन्न हो, त्योंही आप उसे जहां का तहां भीतर ही भीतर शम (वासना त्याग) के द्वारा समूल नष्ट कर डालिये। जब कभी आपको इधर-उधर घूमते फिरते किसी स्त्री/पुरुष को देखने का अवसर प्राप्त हो तो आप दम के अभ्यास के द्वारा तुरत अपनी काम-दृष्टि को वहां से हटाकर अयोग्य कामेच्छा का सर्वथा त्याग कर दीजिए। मन के नियंत्रण में दम, शम का ही पूरक है। वासनाओं के त्याग में दम एक प्रकार से सहायता प्रदान करता है। मोक्ष की तीव्र कामना के द्वारा लौकिक इच्छायें, वासनायें और तृष्णाओं के नष्ट करने में अवश्य सहायता मिलती है। शुभ वासनाओं के द्वारा अशुभ वासनाओं

का त्याग कीजिये। ईश्वर-साक्षात्कार के लिए एक ही तीव्र इच्छा के द्वारा इन शुभेच्छाओं का भी त्याग कर डालिये। अन्त में पुनः इस भगवत् प्राप्ति की इच्छा का भी त्याग कर दीजिये। यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार कि एक कांटे को दूसरे कांटे से निकाल कर पुनः दोनों कांटों को फेंक देना। यह रीति अत्यन्त सरल है।

जब वासना दूर हो जाती है तो इच्छा शक्ति बढ़ती है। यदि आपने पांच वासनाओं पर विजय प्राप्त कर ली तो आपके लिए छठी वासना पर विजय प्राप्त करना अत्यंत सरल होगा, क्योंकि आप में अधिकाधिक शक्ति का संचार हो रहा है आप इसका वास्तव में अनुभव कर सकते हैं। वासनाओं के नाश का अर्थ मनोनाश से ही है। मन, वासनाओं के समूह के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं।

अधिकांश मनुष्यों में मैथुन की लालसा अत्यन्त तीव्र रहती है। उनमें यह इच्छा पूर्ण रूप से विद्यमान रहती है। कुछ मनुष्यों में काम-वासना कभी कभी उत्पन्न होती है, परन्तु शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं। केवल मन में थोड़ा उद्वेग प्रतीत होता है। उचित प्रकार की आध्यात्मिक साधना के द्वारा यह भी सर्वथा नष्ट किया जा सकता है।

उत्पत्ति का बीज (कारण) तृष्णा है। इन तृष्णाओं से संकल्प और कर्म उत्पन्न होते हैं। इन्हीं से संसार चक्र चलता रहता है। तृष्णायें मन को उत्तेजित करती हैं और आप कामी बन जाते हैं। मुनि वाल्मीकि योग वाशिष्ट में लिखते हैं "आप अखिल समुद्र का पान कर सकते हैं। आप अग्नि को निगल सकते हैं। आप हिमालय पर्वत को अपने हाथ में धारण कर सकते हैं। परन्तु वासनाओं को

नष्ट करना अत्यन्त कठिन है।" दृढ़ प्रतिज्ञा, धैर्य तथा तीव्र वैराग्य और विवेक से युक्त मनुष्य के लिए यह कार्य कुछ भी नहीं है। वह एक पल भर में किया जा सकता है। उचित साधना के द्वारा वासना का त्याग कीजिये। अन्तःकरण में गोता लगाकर तृष्णाओं के कारणों को ढूंढ़िये और उन्हें समूल नष्ट कीजिये।

जिस प्रकार एक स्वर्णकार, कुत्सित स्वर्ण को बारंबार तपाकर तथा उसमें अम्लीय पदार्थ मिला कर उसे निर्मल (शुद्ध) बना देता है, ठीक उसी प्रकार आपको भी अपने अपवित्र मन और शरीर को निरंतर साधना के द्वारा पवित्र बनाना होगा।

एक बार कलकत्ते में गंगा पार करते हुए एक बंगाली महाशय ने क्रोध में आकर एक सिक्ख महाशय के प्रति "साला बदमाश" शब्द का प्रयोग किया। सिक्ख महाशय ने उद्वेग में आकर तुरत उस बंगाली महाशय को पकड़ कर गंगा में फेंक दिया। वे बंगाली महाशय डूब कर मर गये। देखिये! वे सिक्ख महानुभाव मन से कितने दुर्बल थे, यद्यपि वे शरीर से बलवान थे। एक ही शब्द के श्रवण से उनके मन की स्थिरता नष्ट हो गई। वे क्रोध के गुलाम बन गये। यदि उनमें ब्रह्मचर्य, विवेक और विचार होता तो वे धृष्टता पूर्वक इस असभ्य कार्य को कदापि नहीं करते।

काम एक प्रकार की तीव्र इच्छा है। बार बार दुहराते रहने से कोमल इच्छा तीव्र इच्छा बन जाती है। विचार ही वास्तविक कर्म है। मैथुन से चित्त में संस्कार उत्पन्न होता है। यह संस्कार मन में वृत्ति (विचारधारा) उत्पन्न

करता है और यह वृत्ति पुनः संस्कार को उत्पन्न करती है। भोग से वासनायें प्रबल होती हैं। स्मरणशक्ति और विचार के द्वारा पुनः कामवासना उत्पन्न हो जाती है।

कामेच्छा को नष्ट करने में पूर्ण सावधान रहिये। संसार का सृजनहार ब्रह्मा भी नहीं जानता कि काम का यथार्थ स्थान कहां है। गीता में आपको मिलेगा कि इन्द्रियां, मन और बुद्धि काम के वासस्थान हैं। प्राणमय कोष उसका अन्य स्थान है। काम, शरीर, मन और इन्द्रियों में सर्वत्र व्यापक है। शरीर के रग-रग, अणु-अणु और कण-कण में काम व्यापक रहता है। काम रूपी महासागर के बाह्य तथा अन्तस्थ-धारा-प्रवाहों में तृष्णा रूपी मगर तैरते रहते हैं। आपको इन सभी स्थानों में काम को संपूर्णता से नष्ट करना पड़ेगा।

अज्ञानी मनुष्य संस्कार और कर्मों का यंत्र (निमित्त) बना रहता है। आध्यात्मिक साधना के अभ्यास तथा वासना व अहंकार के त्याग के द्वारा वह अपने वास्तविक स्वभाव को समझने लगता है और तदनुसार वह धीरे धीरे बल प्राप्त करता है।

ब्रह्मचर्य का अर्थ नियन्त्रण से है न कि काम-वासना को दबाने-से। यदि आप ध्यान, जप, प्रार्थना, स्वाध्याय, आत्मचिन्तन (मैं कौन हूँ ?) के द्वारा अपने मन में शुद्ध सात्विक विचार भरें तो आप अपनी कामवासना को मन के शमन के द्वारा निर्जीव करने में समर्थ होंगे। मन भी क्रमशः सूक्ष्म हो जायगा। अवरोधित कामेच्छा आप पर पुनः पुनः आक्रमण करेगी जिससे आपको स्वप्नदोष, चिड़-चिड़ापन और मन में अशांति उत्पन्न होगी। पुनः आपको

ध्यान, कीर्तन और प्रार्थना आदि के द्वारा मन को शुद्ध करना पड़ेगा। प्रथम मन पर नियंत्रण करना चाहिए। मन को शिक्षित कीजिये। तब आपके लिये मन पर नियंत्रण करना सरल हो जायगा। तत्पश्चात् दम का अभ्यास कीजिए। मन के बिना इन्द्रियां अकेली कार्य नहीं कर सकतीं। इसीलिए ब्रह्मचर्य के लिये प्रथम मन को वश में करना चाहिए न कि इन्द्रियों को। ह उत्तम उपाय है।

परन्तु नये साधकों के लिये मन को वश में करना कठिन हैं; क्योंकि जब इन्द्रियां इधर उधर भागती रहती हैं तो मन को वश में करना अत्यन्त कठिन होता है। यही कारण है कि भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं—"हे अर्जुन! प्रथम तू इन्द्रियों को वश में करके पुनः इस बुद्धि और ज्ञान के नष्ट करने वाले पापी काम को मार।" अध्याय ३ श्लोक ४१।

"प्रथम मन को वश में करना चाहिए" यह सिद्धांत सर्वथा सही है। इसका अभ्यास उत्तम साधकों के लिए प्रशस्त है। सामान्य (मध्यम श्रेणी के) साधकों को प्रथम इन्द्रियों को वश में करना चाहिए। इन्द्रियों की प्रवृत्ति सदा बाहर की ओर रहती है। मन इन्द्रियों के द्वारा कार्य करता है। एक को वश में करना दूसरे को वश में करना है। इन्द्रियों को वश में करने से भी मन वश में हो जाता है, क्योंकि मन केवल इन्द्रियों का ही तो गठर (समूह) है। बिना इन्द्रियों के मन का कुछ भी अस्तित्व नहीं है।

"मन को प्रथम वश में कीजिए, इन्द्रियां सहज ही वश में हो जायंगी।" (एक दृष्टि कोण), "पहले इन्द्रियों

को वश में कीजिए, मन आप ही वश में हो जायगा।" (दूसरा दृष्टि कोण); इस प्रकार से कहना ठीक वैसा ही है जैसा कि यह कहना कि प्रथम बीज की उत्पत्ति हुई या वृक्ष की। अथवा यह कहना "यदि आप वासनाओं को वश में कर लेंगे तो आप आत्म ज्ञान को प्राप्त लेंगे, या यदि आप आत्म-ज्ञान प्राप्त कर लेंगे तो आप अपनी सब वासनाओं को वश में कर लेंगे।" यह जटिल चक्र है।

आध्यात्मिक जीवन में भोग पदार्थों का निरन्तर चिंतन करते रहना, वास्तविक इन्द्रिय-सुख (भोग) से अधिक हानिकारक है। यदि साधना के द्वारा मन शुद्ध नहीं किया गया तो केवल बाहरी इन्द्रियों के संयम से यथोचित लाभ नहीं प्राप्त हो सकता। यद्यपि बाहरी इन्द्रियों पर नियन्त्रण कर लिया गया तथापि उनके सहकारी अंग जो अभी तक उत्तेजित और प्रबल हैं, मन पर प्रत्याक्रमण कर उसकी मानसिक व्यथा को बढ़ाने में समर्थ होंगे।

काम-दृष्टि से वासनायें उत्पन्न होती हैं। यदि आप वस्त्र, आभूषण, पुष्प आदि अलंकारों से सुसज्जित अपनी सुन्दर माता और बहिन को देखते हैं तो आपकी दृष्टि कामातुर नहीं होती। आप उनकी ओर शुद्ध प्रेम की भावना से देखते हैं। यह शुद्ध भावना है। वहां कामुक विचार नहीं है। अन्य स्त्रियों की ओर भी आपको इसी दृष्टि कोण से देखना चाहिए। इसी शुद्ध भावना की वृद्धि करने का अभ्यास कीजिए। किसी भी स्त्री की ओर काम दृष्टि से देखना, मैथुन के सुख के ही तुल्य है। यह एक प्रकार का मैथुन ही है। यही कारण है कि महात्मा जीसस कहते हैं "यदि आपने किसी स्त्री को काममरी वासना से

देखा है तो आप अपने हृदय में परस्त्रीगमन द्वारा व्यभिचार कर चुके हैं।" यद्यपि पहिले सात प्रकार के मैथुन से वीर्य की वास्तविक हानि नहीं होती तथापि वीर्य रक्त से पृथक हो जाता है और वह या तो निद्रा में या अन्य किसी भी रीति से अवसर प्राप्त होते ही बाहिर निकल आने का प्रयत्न करता है। पहले सात प्रकार के मैथुनों में मनुष्य मन से भोगों का उपभोग करता है।

यदि आप काम को वश में करना चाहते हैं तो जिह्वा को वश में करना आवश्यक है। प्रथम जिह्वा को वश में कीजिये; पुनः काम को वश में करना सरल हो जायगा। स्वादिष्ट राजसिक भोजन से जननेन्द्रिय को उत्तेजना प्राप्त होती है। इन्द्रियां अधिक प्रबल हो जाती हैं। जिस प्रकार डाक्टर मालिश, इंजेक्शन, मिक्स्चर (पेय-औषधि), चूर्ण आदि नाना प्रकार के प्रयोगों द्वारा टी० बी० नाम के कीटाणु (जो यक्ष्मा या क्षय रोग का कारण है) के उपर चारों ओर से आक्रमण करता है, ठीक उसी प्रकार से व्रत, नियमित भोजन (मिताहार), प्राणायाम, जप, कीर्तन, ध्यान, विचार (मैं कौन हूँ ?) प्रत्याहार, दम, आसन, बंध, मुद्रा, विचार-नियन्त्रण, वासना-क्षय आदि विविध उपायों द्वारा इन्द्रियों को वश में करना चाहिए।

वैराग्य

प्रकाश के सम्मुख अंधकार नहीं रह सकता। इसी प्रकार इन्द्रिय-सुख भोगों के रहते हुये आत्मानन्द की प्राप्ति नहीं होती। संसारी लोग विषय-सुख भोग तथा आत्मानन्द का सुख एक ही समय में साथ साथ उठाना चाहते

हैं। यह निरा असंभव है। वे संसार के विषय भोगों का त्याग नहीं कर सकते। उनके हृदय में वास्तविक वैराग्य नहीं होता। वे बातें अधिक किया करते हैं। संसारी लोगों का यही विचार रहता है कि वे सदा सुखी हैं, क्योंकि उन्हें कुछ बिसकुट, कुछ रुपये पैसे तथा स्त्री-सुख भोग मिलता रहता है। संसार में काम के द्वारा अधिक मिख-मंगों की वृद्धि होती है। संसार के सुख-भोग आरम्भ में तो अमृत की भांति मधुर प्रतीत होते हैं, परन्तु अन्त में वे ही विष की भांति घातक हो जाते हैं। जब कोई मनुष्य विवाह करके गृहस्थाश्रम में फंस जाता है तो फिर उसके लिए मोह के विविध बंधनों को तोड़ना अत्यन्त कठिन हो जाता है। एक कुंवारा कामी मनुष्य विचारता रहता है कि वह महा दुःखी है, क्योंकि उसके कोई विवाहिता स्त्री नहीं है। इस क्षण भंगुर जीवन के पीछे पड़े रहने के कुस्वभाव का त्याग कीजिये। निर्भय बनिये। इन्द्रियां और मन पर नियन्त्रण प्राप्त कीजिये। आप में वैराग्य की उत्पत्ति होगी। आप ब्रह्मचर्य में पूर्णतया स्थित होंगे।

क्या प्राकृत वस्तुयें सब नाशवान नहीं हैं? आप अपने शरीर के द्वारा नित्य अपने जीवन में पाप-कर्म, दुखदाई कार्य तथा अनेक अमानुषिक (अधर्मी) व्यवहार किया करते हैं। बचपन में आप अज्ञान से आवृत्त (ढके हुये) रहते हैं। युवा अवस्था में आप काम के चंगुलों (जाल) में फंसे रहते हैं। बुढ़ापे में आप संसार के भार (बोझ) तथा शारीरिक दुर्बलता के कारण विलाप करते हैं। अन्त में आप दुखदाई मृत्यु को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार निरन्तर संलग्न आपको कब समय मिलेगा कि आप

धार्मिक कार्यों के करने में भी प्रवृत्त हों। आपका मन रूपी पिशाच इस संसार रूपी नाट्यशाला में इन्द्रियां रूपी वाद्यों के साथ तान में तान मिलाकर नाचता रहता है।

धन, जो केवल आपके विचार समूहों को हवा में भ्रमण करने के योग्य बना सकता है, आपको नित्यानन्द की प्राप्ति नहीं करा सकता। जिस प्रकार किसी कूंयें में सर्पावेष्टित-लता में खिला हुआ पुष्प किसी अर्थ का नहीं होता, ठीक उसी प्रकार यह धन जिसके लिये मन सदा लालायित रहता है और जो क्षण भर में नष्ट होने वाला है, सम्पूर्णतः निरर्थक या अनुपयोगी है। यह जीवन, शरद काल के बादल, घृत-हीन दीपक या सागर की तरंगों की भांति क्षण भंगुर है। यह जीवन जो स्वभावतः नाशवान है तथा जो भोग पदार्थों के प्रतिपादन में क्षण भंगुर है। एक अत्यन्त घातक वस्तु है। यह शरीर जो मूत्र, विष्ठा, मांस, हड्डी का बना हुआ है और जो कभी दुबला और कभी मोटे पन को प्राप्त होता हुआ सदा परिवर्तनशील है इस मिथ्या संसार में केवल दुःखों को भोगने के लिये ही चमचमाता हुआ सुन्दर सा प्रतीत होता है।

नवयुवक डाक्टर तथा अन्य कई अंगरेजी पढ़े लिखे धुरन्धर विद्वान गेरुवावस्त्र धारण किये हुये ऋषिकेश में आकर पूछताछ करते हैं यदि उन्हें कहीं उत्तरकाशी या गंगोत्तरी में ध्यान व योगाभ्यास के निमित्त शान्तिप्रद गुहायें प्राप्त हो सकें। राजकुमार तथा कुछ विज्ञान में अनुसन्धान करने वाले नव युवक विद्यार्थी, टाई, कॉलर तथा रेशमी वस्त्र पहिने हुये पंजाब की ओर आते हैं। केवल इस उद्देश्य से कि उन्हें कहीं सुन्दर

कुमारी कन्याओं की प्राप्ति हो। क्या इस संसार में दुःख है या सुख है? यदि सुख है तो फिर पढ़े लिखे व्यक्ति जंगलों में क्यों भ्रमण करते हैं? यदि दुःख है तो फिर नवयुवक धन, पद और युवतियों के पीछे क्यों भागते हैं? माया विचित्र है। जीवन तथा विश्व की पहेली को समझने का प्रयत्न कीजिये।

इन्द्रिय सुख में कई दोष या विकार हैं। उसमें विविध प्रकार के पाप; दुःख, दुर्बलता, आसक्ति, दासत्व, मूर्खता, अधिक परिश्रम, वासना तथा मन की अशांति आदि दोष भरे रहते हैं। जिस प्रकार गली में इधर उधर भटकने वाला कुत्ता हर समय पत्थरों की मार खाते रहने पर भी घर घर द्वार द्वार जाने से बाज नहीं आता. ठीक उसी प्रकार संसारी लोग भी बार बार धक्के, लातें, मुक्के खाते व असह्य दुःख पाते थके, विचार-परायण हो यथार्थ ज्ञान को प्राप्त नहीं करते।

काम से अधिक घातक विष संसार में नहीं है। विष तो केवल एक ही शरीर को दूषित करता है, परन्तु काम जन्म-जन्म में उत्पन्न होने वाले शरीरों को भ्रष्ट करता है। संसार में एक ओर बिच्छुओं की भर मार है तो दूसरी ओर सर्पों की। आपको मक्खियां, पिस्सू, खटमल, मच्छर, तथा कंटकों का दुःख अलग ही है। ग्रीष्म ऋतु में आपको धूप तप्त करती है, तो जाड़े में सर्दी सताती है। इन्फ्लुएन्जा, प्लेग, स्मॉल-पोक्स, (चेचक या शीतला) भूकंप, भय, अज्ञान, दुःख, शोक आदि अनेक प्रकार के रोग और चिन्तायें आपको हर समय भक्षण करने की ताक में रहते हैं।

ब्रह्मचर्य का अभ्यास स्त्री पुरुष दोनों को करना

चाहिये। स्त्रियों को भी पुरुष के नाशवान शरीर के अंगों का मानसिक चिंतन करते रहना चाहिए। ताकि उन्हें पुरुष के मांसल स्थूल शरीर से घृणा व वैराग्य की उत्पत्ति होती रहे।

काम एक प्रबल शक्ति है जिससे बचना अत्यन्त कठिन है। कुसंगति तथा भ्रामक आधुनिक असभ्यता के कारण युवक युवतियों के मनस अशुद्ध संस्कारों व वासनाओं से सने रहते हैं। केवल कामसंबंधी वार्तालाप में ही वे निमग्न रहते हैं। इसलिए मैं जनता को यह सूचित कर देना चाहता हूँ कि कामोत्तेजक सभी वस्तुओं का त्याग कीजिये।

काम से घृणा करनी चाहिये न कि स्त्रियों से। वास्तव में स्त्री मां शक्ति के रूप में पूजने योग्य है। वही इस विश्व को उत्पन्न कर उसका पोषण करने वाली है। आरम्भ से जब तक पूर्ण विवेक और वैराग्य प्राप्त न हो जाय, तब तक स्त्री संग को विष की भांति घातक समझना चाहिये। जब आप विवेक और वैराग्य प्राप्त कर लेंगे तो पुनः काम आपका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। आप यह जानने और अनुभव करने लगेंगे "सर्वं खल्विदं ब्रह्म"—यह सब केवल ब्रह्म है। यदि आप इस पुस्तक में जहां-जहां पढ़ें "दृष्टि कोण को बदलिये" तो आप इस विषय को अच्छी प्रकार से समझ लेंगे।

एक विद्यार्थी ने मुझे लिखा है "स्त्री का अपवित्र मांसल शरीर मुझे अत्यन्त पवित्र व उत्तम प्रतीत होता है: "मैं कामातुर हो जाता हूँ। मैं मातृ-भाव को हृदयांकित करने का पूर्ण प्रयत्न करता हूँ। मैं स्त्री को देखते ही उसको काली का स्वरूप मान कर उसे मानसिक प्रणा

करता हूँ, परन्तु इस पर भी मेरा मन कामासक्त रहता है। ऐसी स्थिति में मुझे क्या करना चाहिये? मुझ में सुन्दर स्त्रियों की ओर गुप्त-दृष्टिपात करने की लालसा ज्यों की त्यों बनी हुई।" उसके मन में विवेक और वैराग्य का उदय नहीं हुआ है। पूर्व के दूषित संस्कार और वासनायें अत्यन्त प्रबल हैं।

इंद्रिय सुख भोगों के प्रति उदासीन रहना ही वैराग्य है। किसी संबंधी की मृत्यु, धन के नाश तथा जीवन में नैराश्य आदि आकस्मिक घटनाओं के कारण जो क्षणिक वैराग्य होता है, उसे कारण वैराग्य कहते हैं। इस वैराग्य से आध्यात्मिक उन्नति में पर्याप्त सहायता नहीं मिल सकती। मन अवसर ढूढ़ँता रहता है। और ज्योंही अवसर प्राप्त हुआ कि वह विषय-पदार्थ को ग्रहण कर लेगा। जिन मनुष्यों में व्यवहार ज्ञान और इच्छा शक्ति की मात्रा अधिक होती है, केवल वे ही समय पर वास्तविक वैराग्य को प्राप्त करते हैं, अन्य नहीं। ऐसे बहुत कम होते हैं।

निरंतर स्मरण रखिये "भगवान की कृपा के द्वारा मैं दिनोंदिन पवित्र होता जारहा हूँ।" सुख भोग आते हैं, परंतु सदा रहने के लिये नहीं। यह अनित्य शरीर मृत्तिका मात्र है। प्रत्येक वस्तु नाशवान है। ब्रह्मचर्य ही एक मात्र उपाय है। विवेक और वैराग्य की वृद्धि कीजिये।

यदि आप वैराग्य की वृद्धि करें, यदि आप अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण प्राप्त करें और यदि आप इस क्षण-भंगुर संसार के अवास्तविक और अशिष्ट इंद्रिय-सुख भोगों का, विष्ठा या विषकी भाँति त्याग करदें तो फिर संसार का अन्य कोई भी पदार्थ आपको प्रलोभन में नहीं

डाल सकता। काम तथा अन्य सांसारिक पदार्थों की ओर आप का तनिक भी आकर्षण नहीं होगा। काम आप को बाधित नहीं करसकता। आपको नित्य और अनंत सुख व शान्ति की प्राप्ति होगी।

—:o:—

सातवां अध्याय

आहार संबंधी नियम

"जैसो खावे अन्न वैसो होवे मन"–भोजन आहार की शुद्धि से मन की शुद्धि होती है। भोजन जो हम खाते हैं उस में वह शक्ति विद्यमान है जो मन और शरीर को संयोजित करती है। विविध प्रकार के भोजन मन पर विविध प्रकार के प्रभाव डालते हैं। कुछ ऐसे आहार हैं जो मन और शरीर दोनों को बलवान और स्थिर बनाते हैं। इस-लिये यह परमावश्यक है कि हम सदा शुद्ध और सात्विक भोजन करें। आहार का ब्रह्मचर्य के साथ घनिष्ठ संबंध है। यदि भोजन की शुद्धि पर उचित ध्यान दिया जाय तो

ब्रह्मचर्य के संरक्षण में अत्यन्त सुगमता प्राप्त होगी। "जब आहार शुद्ध है तो मन और बुद्धि भी शुद्ध है। जब मन आत्मा, सूक्ष्म और कारण शरीर शुद्ध हो जाते हैं तो पूर्व-जन्मों की स्मरण या धारण-शक्ति निश्चय पूर्वक बढ़जाती है। जब स्मरण शक्ति के बढ़ने से अनंत भूत और भविष्य का ज्ञान हो जाता है तो हृदय की गंथियाँ खुल जाती हैं तथा मनुष्य अपनी अहंकार मयी आसक्तियों को त्याग सार्वभौमिक आत्मा के साथ संसर्ग प्राप्त करता है। ऐसे मनुष्य को भगवान स्वयं आत्मज्ञान का प्रकाशन करते हैं।"

यह कहना अनावश्यक है कि ब्रह्मचर्य के रक्षण में आहार का भी अपना एक विशिष्ट स्थान है। भोजन पदार्थों का प्रभाव जो मस्तिष्क, विचार, काम, क्रोध आदि पर पड़ता है, वह विलक्षण है। मस्तिष्क में कई भिन्न भिन्न स्थान हैं और प्रत्येक आहार–पदार्थ प्रत्येक स्थान पर तथा विस्तृत शरीर पर अपना एक विशिष्ट प्रभाव उत्पादन करता है। गोरैये (एक प्रकार की चिड़िया) का पकवान कामोद्दीपक प्रभाव की उत्पत्ति करता है। वह जननेन्द्रियों को तत्क्षण उत्तेजित करता है। लहसुन, प्याज, मांस, मछली, अंडे आदि काम को उत्तेजित करते हैं। ध्यान दीजिये कि हाथी और गायें जो घास खाकर जीवन व्यतीत करते हैं, कैसे शान्त और निश्चल होते हैं तथा शेर और अन्य मांसाहारी पशु जो मांस खाकर ही जीते हैं, वे कैसे भयंकर और निर्दई होते हैं। ब्रह्मचर्य के संरक्षण में सहायता प्रदान करने वलि भोजन पदार्थों के चुनाव में अंतः प्रेरणा ही आपका पथ प्रदर्शन करेगी। आप अन्य वयो-वृद्ध अनुभवी पुरुषों से भी सम्मति ग्रहण करसकते हैं।

सात्विक भोजन

चेरू, हवि अन्नम्, दूध, गेहूँ, जौ, रोटी, घी, मक्खन, सोंठ, दाल (मूंगकी), आलू, खजूर, केले, दही, बादाम और फल—ये सात्विक भोजन के पदार्थ हैं। उबाले हुये सफेद चावल, घी, चीनी और दूध के मिलाव को चेरू कहते हैं। हविस अन्न भी इसी प्रकार से बनता है। आध्यात्मिक साधकों के लिये यह बहुत लाभदायक है। दूध, स्वयं एक पूर्ण भोजन है क्योंकि उसमें भिन्न भिन्न पौष्टिक अंश समुचित परिमाण में होते हैं। योगी और ब्रह्मचारियों के लिये यह एक आदर्श भोजन है। फल अधिक शक्ति देने वाले हैं। केला, अंगूर, मीठे संतरे, सेब, अनार, और आम ये सब स्वास्थ्य प्रद और पुष्टिकर फल हैं।

सूखे फल जैसे मुनक्का, छोटी दाख, खजूर, अंजीर, मीठे ताजे फल जैसे अनार, आम, केला, सपोटा, तरबूज, मीठे अनार, चीनी (शक्कर), मिश्री, शहद, साबूदाना, आरारूट, दूध, मक्खन, गौघृत, कच्चे नारियल का पानी, नारियल की गिरी, बादाम, पिस्ता, तूर की दाल, रागी, जौ, मक्की, गेहूँ, मूंग, धान (छिलका सहित लाल चावल), स्वादिष्ट सुगंधित चावल, तथा इन धानों के बने हुए सभी पदार्थ और सफेद कद्दू—ये सब ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये योग्य या उचित पदार्थ हैं।

त्याज्य भोजन

अत्यन्त स्वादिष्ट भोजन, उष्ण कढ़ी, चटनी, मिर्च, मांस, मछली, अंडे, तंबाखू, मदिरा, खट्टे पदार्थ, तेल (सब प्रकार के), लहसुन, प्याज, कडुये पदार्थ, खट्टा दही, नीरस या फीके भोजन, खट्टे, कब्ज करने वाले उत्तेजक

पदार्थ तथा भूने हुये पदार्थ, अधिक पके हुये और कच्चे फल, सहज में पचने वाली भारी तरकारियां, नमक तथा अन्य क्षार पदार्थ तनिक भी लाभदायक नहीं हैं। प्याज और लहसुन तो मांस से भी अधिक निकृष्ट हैं। अत्यधिक नमक खाना छोड़ दें तो आपको जिह्वा, मन तथा अन्य इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने में पूरी सहायता मिलेगी।

सर्व प्रकार के मटर और सेम (ताजे या भूने हुऐ) सब प्रकार के चने, धान, सरसों, सब प्रकार की मिर्चें, हींग, मसूर, बैंगन, भिंडी, ककड़ी, धतूरा (सफेद और लाल), बांस के नये पत्ते, तारवृक्षका फल, सब प्रकार का कद्दू, मूली, लीक (प्याजके प्रकार की एकगांठदार वन वनस्पती। मशरूम (छत्रक या कुकुर मुत्ता), तेल या घी में भूने हुऐ पदार्थ, आचार या मुरब्बे, भूने हुए चावल, सीसम के बीज, चाय, काफी, कोको, वे पदार्थ जिन से वायु या बदहजमी शोक, दुःख, अन्य रोग उत्पन्न हो, मैदे के बने हुए पदार्थ खुश्की और जलन उत्पन्न करने वाले भोजन, खारे खट्टे, नमकीन, अधिक गर्म और उत्तेजक भोजन, तंबाखू अफीम, भंग, शराब आदि नशीले पदार्थ, रूखे, बासी या ठंडे पदार्थ जिन का रंग, रूप, सुगंध और स्वाभाविक स्वाद नष्ट होगया; मनुष्यों, पशुओं, पक्षियों आदि से खाकर झूठे किये हुये पदार्थ जिन में धूल, केश, या फूसकांटे पड़े हुए हों; भैंस, बकरी या भेड़ का दूध, ये सब त्याज्य हैं, क्योंकि ये स्वभावतया राजसिक हैं। आंवले का फल, नींबू का रस, सेंधा नमक अदरक, सोंठ समभाव में काम में लाये जासकते हैं।

मिताहार

भोजन में संयम रखना ही मिताहार कहलाता है। स्वास्थ्यप्रद सात्विक भोजन आधे पेटभर खाइये। चौथाई पेट पानी से भरिये, बचे हुए एक चौथाई भाग को हवा के लिये खाली छोड़ दीजिये। यह मिताहार है। ब्रह्मचारियों को नित्य मिताहारी होना चाहिये। रात्रि के भोजन के संबंध में उन्हें अधिक सावधान रहना चाहिये। रात्रि में उन्हें भर पेट भोजन नहीं करना चाहिये। अधिक भोजन ही रात्रि में स्वप्नदोष का कारण है। पेटू (भोजन भट्ट) कभी स्वप्न में भी ब्रह्मचारी नहीं बन सकता। यदि आप ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहते हैं तो जिह्वा का संयम परमावश्यक है। जिह्वा और जननेन्द्रिय के बीच में घनिष्ट संबंध है। जिह्वा एक ज्ञानेन्द्रिय है। वह जल तन्मात्रा के सात्विक भाग से बनी हुई है। जननेन्द्रिय एक कर्मेन्द्रिय है। वह जल तन्मात्रा के राजसिक अंश से बनी हुई है। वे दोनों बहिन हैं क्योंकि उन दोनों का आधार एक ही है। यदि जिह्वा राजसिक भोजन के द्वारा उत्तेजित होती है तो जननेन्द्रिय भी तत्काल उत्तेजित हो जाती है। भोजन में संकलन (चुनाव) और नियन्त्रण होना चाहिये। ब्रह्मचारी का भोजन सादा, मृदु (कोमल), मसाला रहित, और अनुत्तेजक होना चाहिये। भोजन में संयम की पूरी पूरी आवश्यकता है। पेट को ठूंस कर भर लेना अत्यन्त घातक है। फल परम लाभदायक हैं। भोजन आपको केवल उसी समय करना चाहिये जब आप वास्तव में भूखे हों। कभी कभी पेट आपको धोखा देगा। आपको झूठ मूठ की भूख प्रतीत होगी। परन्तु ज्योंही आप भोजन करने के लिये

बैठेंगे कि आपको भूख नहीं प्रतीत होगी और न आपको भोजन स्वादिष्ट ही लगेगा। मन के नियन्त्रण और ब्रह्मचर्य की प्राप्ति के लिये नियमित भोजन और व्रत अत्यन्त सहायक हैं। इनको कभी भी तुच्छ समझ कर अस्वीकार न कीजिये।

व्रत (उपवास) तथा ब्रह्मचर्य

व्रत से कामवासना का नियन्त्रण होता है। उससे भावुकता शांत होती है। वह इन्द्रियों को भी वश में करता है। व्रत एक बड़ा भारी तप है। वह मन को पवित्र बनाता है। उससे अनेकानेक पाप नष्ट होते हैं। चन्द्रायण, कृच्छ्, एकादशी और प्रदोष ये सब मन की शुद्धि के लिये शास्त्र-सम्मत व्रत हैं। व्रत से विशेष कर जिह्वा—जो आप की परम शत्रु है—का नियन्त्रण होता है। जब आप व्रत रक्खें तो मन में स्वादिष्ट भोजनों का विचार उत्पन्न न होने दें। यदि ऐसा न करेंगे तो आपको अधिक लाभ नहीं होगा। व्रत स्वांस संबंधी, रक्त संबंधी, पाचन संबंधी तथा मूत्र संबंधी कोषों को शुद्ध करता है। वह शरीर के सब प्रकार के मल तथा सब प्रकार के विष का नाश करता है। वह खट्टे तीखे पदार्थ-संग्रह को कम करता है। जिस प्रकार अशुद्ध सोने को बार बार अग्नि में तपा कर शुद्ध किया जाता है, ठीक उसी प्रकार बार बार व्रत करने से मन को भी शुद्ध किया जाता है। नवयुवक हृष्ट पुष्ट ब्रह्मचारियों को चाहिए कि जब कभी उन्हें काम सताने लगे तो तुरत अनाहार व्रत धारण करले। व्रत के समय जब मन शांत होता है तो ध्यान बहुत अच्छा होगा। व्रत के समय जब सब इन्द्रियां शांत रहती हैं तो ध्यान का खूब अभ्यास करना चाहिये, यही व्रत का मुख्य उद्देश्य है। सब इन्द्रियां

को विषयों से हटाकर मन को भगवान में एकाग्र कर देना चाहिये। प्रकाश दिखाकर आपको पथ-प्रदर्शन करने के लिये, भगवान से प्रार्थना कीजिये। भाव सहित प्रार्थना कीजिये "हे भगवान मुझे पथ-प्रदर्शन कीजिये, मेरी रक्षा कीजिये। मैं अपका हूँ" आप को पवित्रता, प्रकाश, बल और ज्ञान की प्राप्ति होगी। व्रत योग के दश नियमों में से एक नियम है अत्यधिक व्रत न करें उससे दुर्बलता प्राप्त होगी। अपनी साधारण बुद्धि से काम लीजिये। जो मनुष्य पूर्ण व्रत रखने में असमर्थ हों, वे केवल नौ या बारह घंटे तक ही व्रत रखने और तब शायंकाल या रात्रि में दूध या फल ग्रहण कर सकते हैं। पेट, यकृत, आदि पाचन क्रिया संबंधी इद्रियों को व्रत के समय, विश्राम मिलता है। जो पेटू या निरंतर खाने वाले मनुष्य हैं, वे अपनी इंद्रियों को चंद मिन्टों के लिये भी विश्राम नहीं देते। यही कारण है कि उनकी ये इंद्रियाँ शीघ्र रोगग्रस्थ होजाती हैं मधुमेह, मंदाग्नि और यकृत (जिगर) आदि के रोग अत्यधिक अहार के ही कारण होते हैं। वास्तव में देखा जाय तो मनुष्य को बहुत ही अल्प भोजन की आवश्कता है। नब्बे फी सदी मनुष्य संसार में आवश्यकता से अधिक भोजन करते हैं। आवश्यकता से अधिक खाने का उन का स्वभाव पड़ गया है। सब रोगों का कारण अत्यधिक भोजन ही है। उत्तम स्वास्थ्य बनाये रखने, आंतरिक इंद्रियों को विश्राम देने तथा ब्रह्मचर्य का अवलंबन करने के लिये समय समय पर व्रत रखना प्रत्येक मनुष्य के लिये परमावश्यक है। कई रोग जिन को एलोपेथी और डाक्टरों ने असाध्य घोसित कर रखा है व्रत या निराहार के द्वारा

आठवां अध्याय

जप कीजिये। व्रत अधिकतर धार्मिक क्रिया है। न कि स्वास्थ्य के दृष्टि कोण से केवल शारीरिक स्थूल क्रिया। आप को चाहिये कि आप व्रत के दिनों को उच्चतर आध्यात्मिक साधनों तथा भगवत् चिंतन के काम में लावें। नित्य ईश्वर संबंधी विचारों को ही ग्रहण करें। इस विश्व की उत्पत्ति क्यों और किसलिये हुई इत्यादि जीवन के गंभीर प्रश्नों पर पूर्ण विचार कीजिये। अन्वेषण कीजिये "मैं कौन हूँ ?" "यह आत्मा या ब्रह्म क्या है ?" "ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करने की विधि और साधन क्या हैं ?" "भगवान के समीप किस प्रकार पहुँचाजाय ?" पुनः अपनी नित्यानंद अवस्था का अनुभव कीजिये और सदा पवित्रता की स्थिति में स्थित रहिये।

ऐ मेरे प्रिय बन्धुओं ! क्या आप इन पंक्तियों को पढ़ते ही तत्क्षण व्रत रूपी तपश्चर्या का श्री गणेश करेंगे तथा अपने अनुभव का सही सही वृतान्त मुझे लिख भेजने का प्रयत्न करेंगे ? ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

—:•:—

आत्मा है। नाम और रूप मिथ्या है। वे मायिक चित्र हैं। आत्मा के अतिरिक्त उनकी कोई भी अपनी स्वयम् सत्ता नहीं हैं।

कामवासना क्षय के लिये ज्ञान योग के मार्ग में केवल ज्ञान-वृद्ध साधक ही 'ब्रह्मविचार' की विधि का आश्रय ले सकते हैं। अधिकांश मनुष्यों के लिये मिश्रित रीति बहुत ही अनुकूल और लाभकर है। जब शत्रु अधिक प्रबल होते हैं तो उनको नाश करने के लिये लाठियां, पिस्तोल, बंदूकें, मशीनगन, सबमेरिन (जल के भीतर चलने वाली जहाज), तारपीडो (जहाजों की पेंदी तोड़ने का गोला फेंकने वाला जहाज), बम (बमगोला), विषैली गैस आदि अस्त्र शस्त्रों का युक्त प्रयोग करके शत्रु को नष्ट जाता है। ठीक इसी प्रकार काम रूपी प्रबल शत्रु का नाश करने के लिये युक्त साधनों को काम में लाना परमावश्यक है।

सर्वोत्तम साधना है! अन्य जनों के लिये हठ-यौगिक क्रियाएँ उत्तम हैं।

आप महीनों और वर्षों पर्यन्त मैथुन से बचे रह सकते हैं, परंतु आप के मन में काम की तनिक भी वासनायें नहीं होनी चाहिए जब आप कभी विपरीत लिंग वाले व्यक्ति के साथ में हो तो आपके मन में कुत्सित विचार भी उत्पन्न न होने चाहिये। यदि आप इस लक्ष्य में सफलता प्राप्त कर लेंगे तो आप पूर्ण ब्रह्मचर्य में स्थित होजायेंगे। आप भव सागर को पार कर चुकेंगे। व्यक्ति की ओर देखने में कोई हानि नहीं है परंतु आपकी दृष्टि पवित्र होनी चाहिये। आप में आत्मभाव होना चाहिये। जब आप कभी किसी व्यक्ति की ओर देखें तो मन में ऐसी भावना कीजिये "हे माता आप को नमस्कार। आप मां काली की एक व्यक्त प्रतिमा हैं। मुझे प्रलोभन न दीजिये। मुझे न फुसलाइये। अब मैं माया और उनकी उत्पत्ति का भेद समझ गया हूँ। इन प्रतिमाओं को किसने सृजन किया है! इन नाम और रूपों के पीछे एक सर्व शक्तिमान सर्वव्यापी और सर्वानंद मय स्रष्टा है। यह वह नश्वर असत्य सुन्दरताओं की सुन्दरता है। वह सृष्टिका कर्ता या ईश्वर सुंदरताओं की सुंदरता है। वह अविनाशी सुंदरता की प्रतिमूर्ति है। वह सुंदरता का मुख्य आधार है। ध्यान के द्वारा मुझे इस सुंदरताओं की सुंदरता का अनुभव करना चाहिये।" जब आप किसी आकर्षित करने वाली सुंदर आकृति या मूर्ति के रचयिता को याद रखते हुए भक्ति, प्रशंसा और आदर का भाव रखेंगे। तब आपको प्रलोभन नहीं होगा। यदि आप वेदान्त के विद्यार्थी हैं तो यह भावना कीजिये "प्रत्येक वस्तु

आत्मा है। नाम और रूप मिथ्या है। वे मायिक चित्र हैं। आत्मा के अतिरिक्त उनकी कोई भी अपनी स्वयम् सत्ता नहीं है।

कामवासना क्षय के लिये ज्ञान योग के मार्ग में केवल ज्ञान-वृद्ध साधक ही 'ब्रह्मविचार' की विधि का आश्रय ले सकते हैं। अधिकांश मनुष्यों के लिये मिश्रित रीति बहुत ही अनुकूल और लाभकर है। जब शत्रु अधिक प्रबल होते हैं तो उनको नाश करने के लिये लाठियां, पिस्तोल, बंदूकें, मशीनगन, सबमैरिन (जल के भीतर चलने वाली जहाज), तारपीडो (जहाजों की पेंदी तोड़ने का गोला फेंकने वाला जहाज), बम (बमगोला), विषैली गैस आदि अस्त्र शस्त्रों का युक्त प्रयोग करके शत्रु को नष्ट जाता है। ठीक इसी प्रकार काम रूपी प्रबल शत्रु का नाश करने के लिये युक्त साधनों को काम में लाना परमावश्यक है।

कामवासना धीरे धीरे दूर हो जायगी। स्त्रियों से दूर भागने का प्रयत्न न कीजिए। ऐसा करने से माया और भी अधिक बल के साथ आपका पीछा करेगी। सब रूपों में आत्मा को देखने का प्रयत्न कीजिए तथा "ॐ एक सच्चिदानन्द आत्मा" इस मंत्र का बार बार रटन करते रहिये। आत्मा को अलिंग समझते हुए उक्त सूत्र का निरन्तर चिंतन करते रहने से आपमें बल की प्राप्ति होगी।

प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि वह शुद्ध आत्मा तथा अशुद्ध अनात्मा (शरीर) का विवेक (विचार) प्राप्त करने का प्रयत्न करे। उसे चाहिए कि वह स्त्री और पुरुष सम्बन्धी जीवन से उत्पन्न होने वाले जो निम्न लिखित दोष हैं, उनसे सदा अपने मन को परिचित करता रहे— शक्ति का ह्रास, इन्द्रियों की दुर्बलता, शारीरिक राग, जन्म और मृत्यु, आसक्ति तथा शरीर के विभिन्न पदार्थों जैसे मांस, रक्त, हड्डी, मल, मूत्र, पस, बलगम आदि के विषय में अनेक प्रकार की चिंता। उसे चाहिए कि वह शुद्ध अमर आत्मा तथा आध्यात्मिक जीवन (अमरत्व, नित्यानन्द और परम शान्ति की प्राप्ति) के महत्व को सदा ध्यान में रक्खे। धीरे धीरे मन स्त्री की ओर देखने से विरक्त हो जायगा चाहे वह कैसी ही आकर्षक क्यों न हो। मन उस को कुदृष्टि से देखने में घृणा करने लगेगा। स्त्रियों को भी चाहिए कि वे भी अपने आपको ब्रह्मचर्य में स्थित रखने के लिए उपयुक्त अभ्यासों का अनुसरण करें।

(ब) योगियों और भक्तों का संयुक्त विधान

जप (भगवान के नाम का रटन) शीर्षासन, सर्वांगासन, पद अंगुष्ठासन, प्राणायाम, सत्संग, गीता, रामायण

आदि ग्रन्थों का नित्य नियमित रूप से अध्ययन; सात्विक भोजन, कीर्तन, प्रार्थना, ध्यान, विचार तथा अन्य उपयोगी कार्यों में सदा मन को लगाये रखना, कुसंगति का त्याग, नाटक, सिनेमा देखना—ये सभी कार्य ब्रह्मचर्य की प्राप्ति में परम सहायक है।

स्थूल शरीर पर आसन और मुद्राओं का प्रभाव अत्यधिक पड़ सकता है। यह स्थूल विधि है। प्राणायाम का प्रभाव प्राणमय कोष पर पड़ेगा। यह सूक्ष्म विधि है। व्रत, प्रत्याहार, दम, मौन, नियमित आहार आदि से इन्द्रियां शुद्ध होंगी। जप, ध्यान, स्वाध्याय, सत्संग, विचार आदि से मन की शुद्धि होगी। यह मानसिक विधान है। स्थूल, प्राणिक तथा मानसिक विधानों का उचित सम्मिश्रण परमावश्यक है।

आहार पर पूरा पूरा ध्यान रखिए। मिताहारी बनिए। सात्विक भोजन (दूध, फल, गेंहू आदि) कीजिए। तीखे पदार्थ—लहसुन, प्याज, मांस, मछली, शराब आदि काम को उत्तेजित करने वाले हैं, अतः इनका सर्वथा त्याग कीजिए। समय समय पर व्रत करने से कामोत्पत्ति कम होगी, आवेश शांत होगा, इन्द्रियां वश में होंगी तथा ब्रह्मचर्य में सहायता मिलेगी। सभी स्त्रियों के प्रति मातृ-भाव रखिए।

ठंडा हिप-बाथ (केवल कमर डुबा कर जल में स्नान) कीजिए। प्रातः चार बजे उठिए। स्त्री का विचार न कीजिए। स्त्री की ओर न देखिए। कामुक विचारों को शुद्ध सात्विक विचारों में परिवर्तन कीजिए। मन को सदा संलग्न रखिए। अपने संकल्प को शुद्ध और दृढ़ बनाइए। जब वीर्य एक बार नष्ट हो गया तो पुनः उसकी पूर्ति कभी

में नहीं हो सकती चाहे आप बादाम, पौष्टिक औषधियां, दूध, घी, मक्खन आदि पदार्थों का कितना भी सेवन क्यों न करें। जिन मनुष्यों ने वीर्य का रक्षण किया है उनके लिए दैविक आनन्द का राज्य-दरबार खुला है; जीवन में वे सब प्रकार की उच्चतर सिद्धियों को प्राप्त कर सकते हैं।

धन्य हैं वे योगीराज जो ऊर्ध्वरेता बन कर अपने स्वरूप में स्थित हैं। हम लोगों को चाहिए कि हम भी सभी शम, दम, विवेक, विचार, वैराग्य, प्राणायाम, जप, ध्यान के द्वारा पूर्ण ब्रह्मचर्य का अभ्यास कर जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करें! मन और इन्द्रियों का नियन्त्रण करने के लिए, अन्तरात्मा हमें आध्यात्मिक शक्ति प्रदान करे! भगवान शंकर और ज्ञानदेव की भांति हम भी ऊर्ध्वरेता योगी बनें! हम सब के प्रति उनका शुभ आशीर्वाद हो!!

दृष्टिकोण परिवर्तन कीजिए

वैज्ञानिक के लिए मनुष्य एलेक्ट्रन्स का एक समूह है। ऋषि कणाद के मतानुयाई वैशेषिक तत्व ज्ञानी के लिए वह अणु परमाणु आदि का एक पिंड है। शेर के लिए वह भोजन की वस्तु है! कामी के लिए भोग का पदार्थ है। ईर्षालु व्यक्तियों के लिए वह एक शत्रु है। विवेकी या वैरागी के लिए वह मांस, हड्डी की बनी हुई तथा मल मूत्रादि से भरी हुई एक पुतली है। पूर्ण ज्ञानी के लिए वह सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा है। "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" सब ब्रह्म है। जिस प्रकार रज्जु में सर्प का मिथ्या ज्ञान होता है ठीक उसी प्रकार नाम और रूप केवल मानसिक कल्पना है।

मनोभाव का परिवर्तन कीजिए। आपको इसी लोक में स्वर्ग का आनन्द प्राप्त होगा। आप ब्रह्मचर्य में पूर्णतया स्थित होने में समर्थ होंगे। सच्चा ब्रह्मचारी बनने के लिए

यह एक अनुपम युक्ति है। सब स्त्रियों में आत्मा का दर्शन कीजिए। सब नाम और रूपों का परित्याग कीजिए और केवल अस्ति, भाति, प्रिय अर्थात् सत् चित् आनन्द रूपी भीतरी तथ्य को ग्रहण कीजिए। सभी नाम और रूप सत्य है। ये परछाईं, मृग तृष्णा, तथा आकाश में नील की भांति मिथ्या हैं।

सत्संग का माहात्म्य

सत्संग (योगी, संन्यासी और महात्माओं का संग) का माहात्म्य अकथनीय है। इसके महत्व का वर्णन भागवत, रामायण तथा अन्य ग्रन्थों में अनेक प्रकार से किया गया है। भगवान शंकर का कथन है:—

सत्संगत्वे निःसंगत्वम् निःसंगत्वे निर्मोहत्वम्।
निर्मोहत्वे निश्चलतत्त्वम् निश्चलतत्त्वे जीवन्मुक्तिः॥

"सत्संग से वैराग्य की प्राप्ति होती है, वैराग्य के द्वारा मनुष्य अनासक्ति को प्राप्त करता है, अनासक्ति से मन एकाग्रता प्राप्त करता है, और मन के एकाग्र हो जाने पर मनुष्य जीवन मुक्त हो जाता है।"

संसारी मनुष्यों के दुष्ट संस्कारों को शुद्ध करने के लिए क्षण मात्र की सुसंगति पर्याप्त है।

संसारी मनुष्यों के मनों पर संत महात्माओं के आकर्षक तेजपुंज का आध्यात्मिक वातावरण का तथा उनकी शक्तिशाली विचारधाराओं का बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है। संसारी मनुष्यों को साधु महात्माओं का संसर्ग वास्तव में भगवान की कृपा से ही प्राप्त होता है। कामी मनुष्यों के हृदय महात्माओं की संगति से शीघ्र ही पवित्र हो जाते हैं। सत्संग मन को समुन्नत करता है। जिस प्रकार एक ही काठी (दियासलाई) रुई के बड़े बड़े गट्ठरों को तुरत

जलाकर भस्म कर डालती है, ठीक उसी प्रकार सत्संग भी मनुष्यों के अज्ञान, कामुक संस्कार तथा दुष्कर्मों को जलाकर तुरत भस्म कर देता है। यही कारण है कि भगवान शंकर तथा अन्य महात्माओं ने अपने ग्रन्थों में सत्संग की इस प्रकार बड़ी भारी महिमा वर्णन की है।

यदि आपको अपने स्थान में उचित सत्संग नहीं प्राप्त हो सके तो आप ऋषिकेश, बनारस, नासिक, प्रयाग. हरिद्वार आदि तीर्थ स्थानों की यात्रा कीजिए। सद्ग्रन्थों का अध्ययन भी एक प्रकार का सत्संग है। विवेक, वैराग्य तथा मुमुक्षुत्व प्राप्त करने के लिए सत्संग एकमात्र शक्तिशाली महौषधि है।

कामुकता को किस प्रकार हटाया जाय? स्मृति के द्वारा वासना और संस्कारों के तह से मन में संकल्प की उत्पत्ति होता है। संकल्प से आसक्ति होती है। सकल्प के साथ ही भावुकता और प्रवृत्ति उत्पन्न होते हैं। भावुकता और प्रवृत्ति पास पास रहते हैं। तत्पश्चात कामेच्छा उत्पन्न होती है, जिसके द्वारा मन और शरीर में उत्तेजना उत्पन्न हो जाती है। कामदेव के पास मोहन, स्तंभन, उन्मादन, शोषण और तपन रूपी पुष्प-बाणों से अलंकृत एक सुंदर धनुष रहता है। पहिले पहिले मोहन का ही नाश कीजिये। तपन का आक्रमण नहीं होगा। जिस प्रकार घट के भीतर भरा हुवा पानी छन या चूकर बाहिर सतह पर निकल आता है, ठीक उसी प्रकार उत्तेजक संताप भी सूक्ष्म मनसे छनकर स्थूल शरीर में प्रवेश करता है। यदि आप पूर्ण सावधान हैं तो आप आरंभ ही में उठने वाले संकल्प का नाश कर सकते हैं ताकि निकटवर्ती आपत्ति का खटका ही न रहे। यदि आप संकल्प रूपी चोर को प्रथम द्वार में प्रवेश होने

से न रोक सकें तो फिर दूसरे द्वार पर पूरे सावधान रहिये जब कि कामुक उत्तेजना प्रकट होने लगे। आप प्रबल कामुक उत्तेजना को सहज ही में रोक सकते हैं ताकि वह जननेन्द्रिय तक पहुंच ही न सके। हठ यौगिक क्रियायें तथा प्राणायाम द्वारा वीर्य शक्ति को मस्तिष्क की ओर ले जाकर ओज शक्ति में परिणत कीजिये। मन को हटाइये। ॐ अथवा किसी भी अन्य मंत्र का एकाग्र चित्त से उच्चारण कीजिये। प्रार्थना कीजिये। ध्यान कीजिये। यदि इस पर भी आप अपने मन पर नियंत्रण करने में असमर्थ हों तो फिर सत् संग की शरण लीजिये, अकेले न रहिये जब प्रबल कामुक उत्तेजना एकाएक प्रकट होकर जननेन्द्रिय तक पहुंच जाती है तो आप सब कुछ भूलकर मदान्ध हो जाते है। आप काम के शिकार बन जाते हैं। पश्चात् आप पश्चाताप करने लगते हैं।

विशेष उपदेश

कामेच्छा और तत्संबंधी संस्कारों का संपूर्णतया नाश व आत्म-साक्षात्कार होने पर ही हो सकता है। यौगिक साधनों तथा ध्यानादि के द्वारा कामेच्छा का बहुत अधिक सीमा तक ह्रास किया जा सकता है। गीता अध्याय २ श्लोक ५९ में देखिए "यद्यपि इन्द्रियों के द्वारा विषयों को न ग्रहण करने वाले पुरुष के भी केवल विषय तो निवृत्त हो जाते हैं, परन्तु राग नहो निवृत्त होता, परन्तु इस पुरुष (स्थिर बुद्धि) का तो राग भी परमात्मा को साक्षात्कार करके निवृत्त हो जाता है।"

एक कामी अविवाहित पुरुष के सदा ऐसे विचार हुआ करते हैं "मैं कब एक युवती पत्नी के साथ जीवन यापन करने में समर्थ हो सकूंगा?" एक उदासीन गृहस्थी जिसे

में कुछ विवेक उत्पन्न हुआ है, वह नित्य सोचता रहता है "मैं कब अपनी स्त्री के पंजों से मुक्त होकर भगवत् चिंतन के लिये वनगामी होऊंगा ?" इस मत भेद पर अब आप स्वयं विचार कर सकते हैं।

सदाचार ब्रह्मचर्य का ही तत्सम्बन्धी शब्द है। वह मनुष्य जो एक वर्ष तक ब्रह्मचर्य वृत्ति रखता है परन्तु जो दो या तीन वर्षों में कभी कभी स्त्री प्रसंग करता है, उस मनुष्य से अधिक सदाचारी समझा जाता है जो नित्य अपनी विवाहिता स्त्री के साथ प्रसंग करता है। वह मनुष्य जो नित्य कामुक विचारों में ही निमग्न रहता है सब से अधिक दुराचारी है। परन्तु अज्ञानी मूर्ख सांसारिक लोग सदाचार के सिद्धांत को अपने ही दृष्टिकोण से समझते हैं तथा केवल बाहरी स्थितियों की ओर ही ध्यान देते हैं न कि आंतरिक मानसिक स्थिति की ओर।

यदि आप कामुक विचारों पर अधिकार नहीं जमा सकते तो कम से कम स्थूल शरीर पर तो अधिकार रखिये। भरसक साधना कीजिये। एक दिन वह भी आ जायगा जब कि आप कामुक विचारों से सर्वथा मुक्त हो जायेंगे। यह आपके लिए एक कड़ा युद्ध है। परन्तु ऐ मेरे प्यारे मित्रों ! आपको यह करना ही पड़ेगा, यदि आप नित्य शांति और अमर जीवन प्राप्त करना चाहते हैं।

कामुक विचार को दबा देने से विशेष काम नहीं चलेगा। उचित अवसर प्राप्त होने पर जब आप की इच्छा शक्ति कमजोर हो जायगी, जब वैराग्य क्षीण हो जायगा, जब ध्यान या यौगिक साधना में शिथिलता आजायगी, जब किसी रोगाक्रमण से आप दुर्बल हो जायेंगे, तो यह दबी हुई कामवासना द्विगुणी शक्ति के साथ पुनः प्रकट

हो जायगी। जप, प्रार्थना, ध्यान, धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन, प्राणायाम, आसन आदि के अभ्यास द्वारा काम-शक्ति को ओज-शक्ति में परिणत करनी चाहिए। आपको भक्ति तथा मुमुक्षुत्व की वृद्धि करनी चाहिए। आप शुद्ध, अमर, अलिंग, अनंग, अनिच्छित् आत्मा का निरन्तर ध्यान कीजिए। केवल तब ही आप की काम वासना समूल नष्ट हो सकती है।

जो लोग ब्रह्मचर्य का अभ्यास करते हैं, उनकी ओर से यह आम शिकायत है कि उन्हें इन्द्रिय दमन के कारण मानसिक बाधा होती है। यह केवल मन का कपट (छल) है। कभी कभी आप को मिथ्या भूख लगती है और उस स्थिति में जब आप भोजन करने के लिए बैठते हैं तो आपको वास्तविक उत्तम भूख नहीं होती और आप खाना नहीं खाते। ठीक उसी प्रकार की यह आपकी मानसिक बाधा भी है। यदि आप ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे तो आपको अपार मानसिक बल की प्राप्ति होगी। आप हर समय उसका अनुभव नहीं कर सकेंगे। जिस प्रकार एक पहलवान अखाड़े में अपने शारीरिक बल को प्रकट करता है (यद्यपि साधारण समय में वह एक साधारण मनुष्य प्रतीत होता है) ठीक उसी प्रकार आप भी अपने उस मानसिक बल को अवसर उपस्थित होने पर प्रकट करेंगे।

यौगिक क्रियायें सीखने में आपका उद्देश्य शुद्ध होना चाहिए। यौगिक क्रियायें और ब्रह्मचर्य के द्वारा केवल आत्म साक्षात्कार करने का ही आपका एक मात्र विचार होना चाहिए। लिंग-शद्धि का रूपांतरण प्राप्त कीजिए। इसके द्वारा जो आपको शक्ति प्राप्त हो उसका दुरुपयोग न कीजिए। अपने उद्देश्य का पूर्णतया विश्लेषण कीजिये।

योग मार्ग में अनेकानेक प्रलोभन और बाधायें हैं।

यह रूपांतरण (पूर्ण ब्रह्मचर्य या पवित्रता) आप प्राप्त कर सकते हैं: यदि आप उसे प्राप्त करना चाहें। मार्ग अत्यन्त सरल, सीधा, और सुगम है, यदि आप उसको समझें और यदि आप में धैर्य, लगन, संकल्प और दृढ़ इच्छा हो, और यदि आप इन्द्रिय दमन, सदाचार, सद् विचार, सत् कार्य, निदिध्यासन, तत्परता, आत्म संकेत और आत्म विचार (मैं कौन हूँ?) आदि बातों का अभ्यास करें। आत्मा विकार रहित है। इसका अनुभव कीजिए। क्या नित्य शुद्ध आत्मा में कहीं काम वासना या अपवित्रता का लेश-मात्र भी पाया जा सकता है?

आप सबों के भीतर एक गुप्त शेक्सपीयर या कालीदास, एक गुप्त वर्डसवर्थ या बाल्मीकि, सेन्ट ज़ेवियर, अखंड ब्रह्मचारी भीष्म पितामह, हनुमान या लक्ष्मण, विश्वामित्र या वशिष्ठ, डाक्टर जे० सी० बोस या रमण महर्षि, योगी ज्ञानदेव या गोरखनाथ, वेदान्ती शंकर या रामानुज, भक्त तुलसीदास, रामदास या एकनाथ आदि मिल सकते हैं। एतदर्थ ब्रह्मचर्य के द्वारा अपनी प्रसुप्त गुप्त शक्तियों को जाग्रत कीजिए और जन्म, मरण और चिंताओं से सने हुए इस सांसारिक जीवन के दुःखों को पार कर शीघ्र आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कीजिए।

धन्य है वह ब्रह्मचारी जिसने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने का संकल्प किया है। धन्य है, धन्य है वह ब्रह्मचारी जो कामवासना को दग्ध करने तथा पूर्ण पवित्रता प्राप्त करने के लिए वास्तविक प्रयत्न कर रहा है। धन्य है, धन्य है यह ब्रह्मचारी जिसने कामवासना को संपूर्णतया नष्ट कर आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लिया है। ऐसे प्रशंस-

नीय ब्रह्मचारियों की जै हो ! वास्तव में वे इस संसार में देवता ही हैं। आप सबों के प्रति उनका आशीर्वाद हो।

ब्रह्मचारियों के लिए नियम

विवाह न कीजिए, न कीजिए, न कीजिए। विवाह सब से बड़ा बन्धन है। विवाह निरन्तर चिंता और दुःख का स्रोत है। बुद्ध, स्वामी पत्तिनतु, भर्तृहरि और गोपीचंद ने क्या किया ? क्या विवाह के बिना वे सुख और शांति में न रहे ?

रूखे (मोटे या भद्दे) बिस्तर पर सोइए। रूखे (आसन) चटाइयां काम में लाइए। बांई करवट पर सोइये। रात भर सूर्य नाड़ी (पिंगला को) चलने दीजिए। अलग अलग सोइए।

अपने स्वभाव को शीघ्र परिवर्तन कर दीजिए। इस से आप स्वस्थ, धनवान और बुद्धिमान बनेंगे।

अपने जननेन्द्रिय की ओर न देखिए। उसे न छूइये। जब वह उत्तेजित हो तो मूल और उड्डियान बंध कीजिए। भाव सहित ॐ का बार बार उच्चारण कीजिए। पवित्रता का चिंतन कीजिये। बीस प्राणायाम कीजिये। अपवित्रता रूपी बादल शीघ्र छिन्न-भिन्न हो जायगा।

ब्रह्मचारी को किसी भी स्त्री की ओर काम भरी दृष्टि से नहीं देखना चाहिये। उसको कुत्सित भावना के साथ स्त्री के पास जाने तथा उसे छूने की इच्छा नहीं करनी चाहिए। उसके लिए स्त्री के साथ खेलना, हंसी मजाक करना तथा बातचीत करना उचित नहीं है। उसको स्त्री के गुणों की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए। न तो अपने मन में और न अपने मित्रों के प्रति ही। वह स्त्री से एकान्त में भाषण भी न करें, न स्त्री का कभी चिंतन ही करें। उसको स्त्री से

सुख भोग की इच्छा नहीं रखनी चाहिए। ब्रह्मचारी को चाहिए कि वह स्त्री-प्रसंग कदापि न करे। यदि वह उपर्युक्त नियमों का भंग करता है तो वह ब्रह्मचर्य व्रत का खंडन करता है। जब आप रास्ते में चल रहे हैं तो बंदर की भांति इधर उधर न देखिए। नीचे जमीन की ओर देखते हुए गंभीरता पूर्वक चलिए। नाक की सीध में भी देख सकते हैं। इससे ब्रह्मचर्य के पालन में बहुत सहायता मिलती है।

स्त्री की ओर देखने से आपके मन में उससे बातचीत करने की इच्छा उत्पन्न होगी। बातचीत करने से उसको स्पर्श करने की इच्छा होगी। अन्ततः आपका मन कुत्सित होकर आप काम के शिकार बन ही जायेंगे। इस लिए स्त्री की ओर काम दृष्टि से कभी भी न देखिए, न उससे एकांत में बातचीत कीजिए और न कभी उसके साथ मित्रता कीजिए।

साधकों को चाहिए कि वे लिंग (स्त्री-पुरुष) संबंधी वार्तालाप में भाग न लें और न कभी स्त्रियों का चिंतन ही करें। स्त्री का विचार मन में उत्पन्न होते ही अपने इष्ट देवता की मूर्ति का ध्यान कीजिए, अपने इष्ट मन्त्र का बार बार जोर जोर से उच्चारण कीजिए। पशु पक्षियों को प्रसंग करते देख कर या किसी के नंगे शरीर को देखकर यदि आपके मन में काम की भावना उत्पन्न हो जाती तो इससे यही अनुमान किया जाता है कि आपके मन में अभी तक कामवासना गुप्त रूप से भरी हुई है। कुछ व्यक्ति ऐसे अनुरागी और आसक्त होते हैं कि स्त्री के स्मरण, दृष्टि व स्पर्श मात्र से ही उनका वीर्य पात हो जाता है। अहा! कैसी शोचनीय दशा है उनकी यह?

कोई भी साधु किसी स्त्री से हाथ मिलाते हुए या

उसके शरीर के किसी भाग को स्पर्श करते हुए यदि वह कुत्सित विचारों के साथ नमन करता है तो वह अपने भेष व आश्रम का मान भंग करता है ब्रह्मचर्य व्रत जो एक बार धारण कर लिया है वह जीवन पर्यन्त सब प्रकार के स्त्री-प्रसंग से दूर रहने के लिऐ है। जैन धर्म में इस नियम पर बड़ा जोर दिया गया है, तदनुसार स्त्रियों के चित्रों को देखना, उनका चिंतन करना तथा स्त्री संबंधी कोई भी बातचीत करना एकदम मना है। इसीलिए तो सब दुर्गुणों में काम को नीचतम (सब से बुरा) बताया गया है।

जो नियम पुरुषों के लिए स्त्रियों के प्रति हैं वे ही नियम स्त्रियों के लिए पुरुषों के प्रति हैं। इन उपदेशों का तात्पर्य यह नहीं कि या तो पुरुष हेय समझे जायँ अथवा स्त्री को हेय माना जाय। तात्पर्य तो कामवृत्ति के उन्मूलन से है। काम से घृणा कीजिए। परंतु किसी भी व्यक्ति से नहीं दिव्य-भाव बनाए रखिए।

ब्रह्मचारियों को पान, तम्बाखू, चाय, कॉफी आदि मादक वस्तुओं का सर्वथा त्याग करना चाहिए। तम्बाखू एक प्रकार का विष उत्पन्न करता है जिसके कारण शरीर में अनेक प्रकार के रोग दिल व आंखों के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य नियम भी हैं जो ब्रह्मचारियों को पालन करने आवश्यक हैं।

भिक्षु के लिए उस स्थान में सोना मना है जिस स्थान में कोई स्त्री हो। भिक्षु किसी भी स्त्री को पांच या छः शब्द से अधिक शब्दों में उपदेश भी न दे, यदि वहां कोई सयाना पुरुष विद्यमान न हो। वह (भिक्षु) न तो किसी

बहिन को शिक्षा ही दे और न किसी स्त्री के साथ कहीं यात्रा ही करे। जब वह भिक्षा लेने के लिये जाय तो अपने वस्त्रों को उचित रीति से ढाके रक्खे तथा चलते समय नजर सामने नीचे की ओर रक्खे, इधर उधर न देखे। उसे चाहिए कि वह जहां तक हो किसी भी स्त्री या बहिन से दिया हुआ वस्त्र अंगीकार न करे। कुत्सित विचार या कुवासना के साथ स्त्री के साथ बातचीत करना व उसका स्पर्श करना तो दूर रहा, वह (भिक्षु) स्त्री के साथ एकांत स्थान में बैठे ही नहीं।

"पवित्र कुमारी समाज" की स्थापना महात्मा नूमा द्वारा की गई थी। इसमें बालिकायें ३० वर्षों तक अविवाहित रहती थीं। ब्रह्मचर्य व्रत भंग के लिए सजीव (जिंदा) दफना देना ही उसका प्रायश्चित्त था। ये कुमारियां अपनी असाधारण शक्ति व आत्म प्रतिष्ठा के लिए प्रसिद्ध थीं। साधारणतः राज (शाही) घराने के आदर के समान उनका आदर था। जब वे रास्ते में चलती थीं तो एक पहरेदार उनके आगे आगे चलता था तथा बड़े ऑफिसरों को उन्हें रास्ता देना पड़ता था। कभी कभी गाड़ी में बैठकर चलने का भी उनको विशेष (असाधारण) अधिकार था। सार्वजनिक खेल तमाशों में भी उनके बैठने के लिए उच्च प्रतिष्ठित स्थान नियत किया जाता था। साधारण नियमों से परे होने के कारण, मरने के पश्चात् राजाधिराजों की नाईं वे शहर ही में दफनाई जाती थीं। दयालुता का शाही अधिकार भी उनको यहाँ तक था कि यदि कोई फांसी की सजा प्राप्त अपराधी उनको रास्ते में मिल जाता तो उसकी माफ हो जाती थी। और वह मुक्त कर दिया जाता था।

बौद्धों के भिक्षुक समाज के मोक्ष संबंधी (पतिमोक्ख)

२२७ नियम थे। इनमें से पहिले चार विशेष आवश्यक थे। यदि इनमें से किसी एक नियम का भी भंग हुआ, कि भिक्षुक समाज से पृथक (अलग) कर दिया जाता था। इसीलिये वे पराजित कहे जाते थे। जिन्होंने नियम खंडन किया वे पराजय प्राप्त करते थे।

पहिला नियम इस प्रकार है "कोई भी भिक्षु (जिसने) एक बार आत्म-संशोधन तथा जीवन की नियम पद्धति को अपना लिया है और तत्पश्चात् अपने आपको उस से असंबंधित कर देने की घोषणा न की हो, यदि वह किसी भी प्राणी (इसमें पशु भी सम्मिलित हैं) के लैंगिक भोग विषयों का उपभोग करता हुआ प्रतीत होगा तो वह च्युत व पराजित समझा जायगा और समाज से उसका संबंध तोड़ दिया जायगा।" यदि कोई भिक्षु किसी समय अपने आपको समाज से अलग कर, वस्त्र बदल कर पुनः संसारी बनने की इच्छा करता हो तो वह ऐसा करने के लिये भी स्वतन्त्र था।

दार्जिलिंग में जहां तिब्बत वालों की विशाल नई बस्ती है, उसमें सैकड़ों मजदूर-पेशा के व्यक्ति ऐसे थे जो ब्रह्मचर्य व्रत भंग करने तथा उस से मिलने वाले कड़े दंड से बचने के लिए अकेले या अपने यारों के साथ तिब्बत से भाग चले आये थे। ये सब भागकर आये हुये व्यक्ति बौद्ध भिक्षुओं से पृथक् समझे जाते थे। यदि कोई अपराधी पकड़ा गया तो उसको भारी अर्थ-दंड तथा आम जनता के समक्ष शारीरिक दंड दिया जाता है और वह कलंकित कर समाज से पृथक कर दिया जाता है।

आपको सदा यह भाव रखना चाहिये कि सभी स्त्रियां उस आदि शक्ति जगद् जननी के ही व्यक्त रूप हैं। जैस

कि "दुर्गा सप्तशती" में आता है "विद्या समस्तास्तव देविभेदा, स्त्रियाः समस्ता सकला जगत्सु" आपको उनकी उपासना करनी चाहिये। यह अभ्यास नये साधक के लिए आत्मभाव (प्रत्येक वस्तु आत्मा है) की प्राप्ति के लिए है। अन्यथा वह स्त्रियों से घृणा करना आरम्भ कर देगा और उनमें दिव्य प्रेम की वृद्धि नहीं होगी। उपर्युक्त अभ्यास कामवासना को दूर करने के लिये एक मानसिक उपचार है।

उक्त भाव की प्राप्ति बहुत कठिन है। "सब स्त्रियां आपकी मातायें और बहिन हैं" यह भाव व्यवहृत करने में आप १०१ बार असफल हो सकते हैं। इसकी परवाह नहीं। आप अपने अभ्यास पर दृढ़ रहिये। अन्त में आप को सफलता अवश्य प्राप्त होगी। आपको अपने पुराने मन को नष्ट कर एक नया मन बनाना पड़ेगा। हो न हो, आपको ऐसा करना ही पड़ेगा यदि आपको अमरत्व तथा नित्यानन्द प्राप्त करना है। यदि आप अपने संकल्प में दृढ़ है और अपने विचार के पक्के हैं, तो आप को सफलता अवश्य प्राप्त होगी। अभ्यास के द्वारा भाव शनैः शनैः व्यक्त होगा। आप शीघ्र उस भाव में स्थित हो जावोगे। अब आप निःसंकोच हैं।

प्रारम्भिक अभ्यासावस्थाओं में आपको चाहिए कि आप सदा स्त्रियों से दूर रहें। जब आप ब्रह्मचर्य में स्थित रहते हुए पूर्णरूप से सांचे में ढल जांय तो फिर आप कुछ समय के लिए अपने बल के परीक्षार्थ, स्त्रियों के संग विचरण कर सकते हैं। तत्पश्चात् यदि मन आपका विशुद्ध हो गया है और आप शम, दम, उपरति के अभ्यास द्वारा अपने मन से लिंग (स्त्री-पुरुष) भाव को सर्वथा नष्ट कर

चुके हैं, तो उस स्थिति में आप यह कह सकते हैं कि आपने अपनी साधना में यथोचित उन्नति प्राप्त कर ली है। अब आप निशंक हैं। इस पर भी आपको अपनी साधना स्थगित (बंद) नहीं करनी चाहिये, यह जानते हुये कि आप एक जितेन्द्रिय योगी हैं। यदि आप अपना साधन-अभ्यास बंद कर देंगे तो आपका भारी अधोपतन होगा। यदि आप जीवन्मुक्त और शक्तिशाली योगी क्यों न हो, आपको चाहिए कि आप सांसारिक लोगों के साथ विचरण करते समय अत्यन्त सावधान रहें।

एक महात्मा जो अपने शिष्यों के द्वारा एक अवतार माना जाता था, वह योग-भ्रष्ट हो गया। वह भी स्त्रियों के साथ स्वतन्त्रता पूर्वक संसर्ग करते रहने के कारण, पतित हो गया। वह काम का शिकार बन गया। यह कैसा दुख-मय दुर्भाग्य है। साधकगण अनेकानेक बड़ी बड़ी कठिनाइयों को पार करते हुए योगरूपी निश्रयिणी पर आरूढ़ होते हैं परन्तु वे अपनी असावधानी व आध्यात्मिक अहंकार के कारण इस प्रकार से पतित होते हैं कि फिर वे जीवन पर्यन्त भी ऊपर उठने में समर्थ नहीं होते।

वे साधक जो योग मार्ग में बहुत कुछ उन्नति कर चुके हैं, उन्हें, चाहिए कि वे बहुत सावधान रहें। वे स्वतंत्रता पूर्वक स्त्रियों के साथ संसर्ग न करें। उनको मूर्खतावश यह नहीं समझना चाहिये कि वे योग में पूर्ण प्रवीण हो गये हैं। एक प्रसिद्ध संत महात्मा का अधोपतन हो गया। वह स्वतन्त्रता पूर्वक स्त्रियों के साथ संसर्ग रखता और उन्हें अपनी चेलियां बनाई, जो उसके पैर तक दबाने लगीं। क्योंकि उसने अपने वीर्य को सर्वथा रूपांतरित कर ओज में परिणत नहीं किया था और चूंकि उसके मन

में कामवासना सूक्ष्म रूप से छिपी हुई थी, वह काम का शिकार बन गया। उसने अपना सम्मान खो दिया। उसमें कामवासना केवल दबी हुई थी और जब उचित अवसर आया तो वह पुनः जाग्रत हो गई और अपना स्पष्ट रूप धारण कर लिया। उसमें प्रलोभन का प्रतीकार करने के लिये के बल नहीं था और न उसकी इच्छा शक्ति ही प्रबल थी।

वह योगी जिसने उच्चतम निर्विकल्प समाधि प्राप्त कर ली है और जिसमें संस्कारों के बीज संपूर्णतया भुन चुके हैं, वह पूर्ण ऊर्ध्वरेता योगी कहलाने का अधिकारी है यानी जिसने पूर्णरूप से वीर्य को ओज में बदल लिया है।

वह योगी जिसने, निरन्तर साधना, ध्यान, प्राणायाम, आत्मविचार, यम, नियम, शम, दम के अभ्यास द्वारा, अपने आपको शिक्षित किया है, वह भी निःशंक है यद्यपि उसने ऊर्द्धवरेता की स्थिति प्राप्त नहीं की है। वह स्त्रियों द्वारा आकर्षित नहीं हो सकेगा। उसने अपने मन को कृश (सूक्ष्म) कर डाला है। उसके मन का नाश हो चुका है। अब काम-वासना अपना मस्तक ऊपर नहीं उठा सकती। वह अब फूफकार भी नहीं सकती। वह योगी जिसने विशिष्ट ब्रह्मचर्य के द्वारा काम पर संपूर्ण विजय प्राप्त करली है, उसके लिए तो पतित होने का कुछ भी भय नहीं है। वह सर्वथा निःसंकोच है। वह अपवित्रता से सर्वथा मुक्त ही रहेगा। यह स्थिति बहुत ही ऊंची अवस्था है। इस विशिष्ट पवित्र अवस्था को केवल शंकर, दत्तात्रेय, ज्ञानदेव आदि चंद महात्माओं ने ही प्राप्ति की है।

—:o:—

नवाँ अध्याय

हठयोग की प्रक्रियायें

(१) सिद्धासन

यह आसन ब्रह्मचर्य के अभ्यास के लिये श्रेष्ठ है। यह स्वप्नदोष को रोकने, काम पर विजय प्राप्त करने तथा ऊर्ध्वरेता योगी बनने में सहायता प्रदान करता है। यह आसन जप, और ध्यान के लिये भी उपयोगी है।

बायें पैर की एड़ी को गुदा-स्थान पर रखिये। दूसरे पैर की एड़ी को जननेन्द्रिय के मूल भाग पर रखिये। दोनों

पैर के टखने आपस में एक दूसरे से मिल जानें चाहिये। हाथों को घुटनों पर रख दीजिये। शरीर गर्दन और मस्तक को सीधा रखिये। पहले पहल आध घंटे तक बैठने का अभ्यास कीजिये और पुनः पुनः धीरे धीरे समय बढ़ाते हुये पूरे तीन घंटे तक बैठने का अभ्यास कीजिये। तीन घंटों तक लगातार एक आसन से बैठना ही आसन-जय कहलाता है।

(२) शीर्षासन
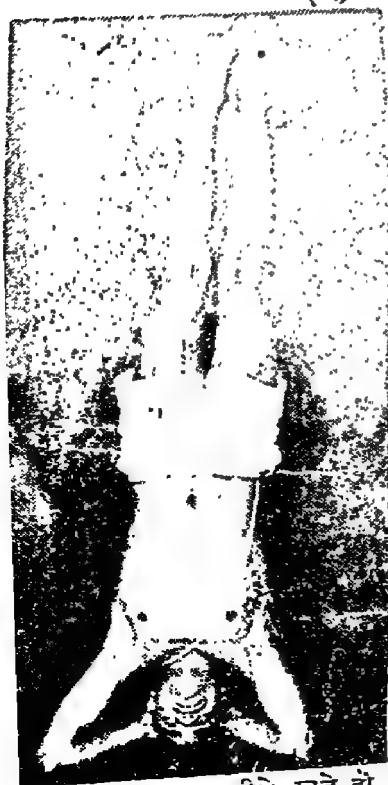
यह सब आसनों का राजा है। इस आसन से होने वाले जो लाभ हैं, वे अकथनीय और अगणित हैं। यह मस्तिष्क व स्मरण-शक्ति को बढ़ाता है, ब्रह्मचर्य की रक्षा करता है तथा वीर्य को ओज में परिणत करता है।

समतल भूमि पर चौगुनी कंबल बिछा लीजिये। दोनों हाथों की अंगुलियों को तालीबंध कर लीजिये। अब अपने मस्तक के ऊपरी भाग को दोनों हाथों की बद्ध हथेलियों में रखिये। धीरे धीरे टांगों को ऊपर उठाते हुए शिर के बल बिलकुल सीधे खड़े हो जाइये। टांगों को थामने के

लिये आरम्भ में किसी दीवाल या अपने मित्र की सहायता लीजिये । कुछ अभ्यास के बाद आप स्वयं संतुलन (स्थिरता) प्राप्त करने में समर्थ होंगे । जब आसन कर चुकें तो टांगों को बहुत धीरे धीरे नीचे ले आइये। आसन करते समय केवल नाक के द्वारा स्वांस लीजिये । अनियमित रूप से कुम्भक, रेचक और पूरक करने से आसन में अस्थिरता आ जायगी ।

इस आसन का अभ्यास खाली पेट करना चाहिये । इस आसन के द्वारा पेट के, आंतों के, फेफड़े के, हृदय के, गुर्दों के, कानों के, आंखों के तथा मूत्र संबंधी अनेकानेक

पुराने असाध्य रोग नष्ट होते हैं।

आसन करते समययदि आपकी टांगें हिलती हों तो कुछ समय के लिये स्वांस को रोकिये; टांगों में स्थिरता आजायगी ।

(३) सर्वांगासन

यह भी एक परमावश्यक आसन है। यह भी ब्रह्मचर्य की रक्षा करने, आयु को दीर्घ बनाने, भूख व पाचन शक्ति को बढ़ाने तथा थाइ-रोइड (Thyroid) को कुशलता पूर्वक चालू रखने में सहायता प्रदान
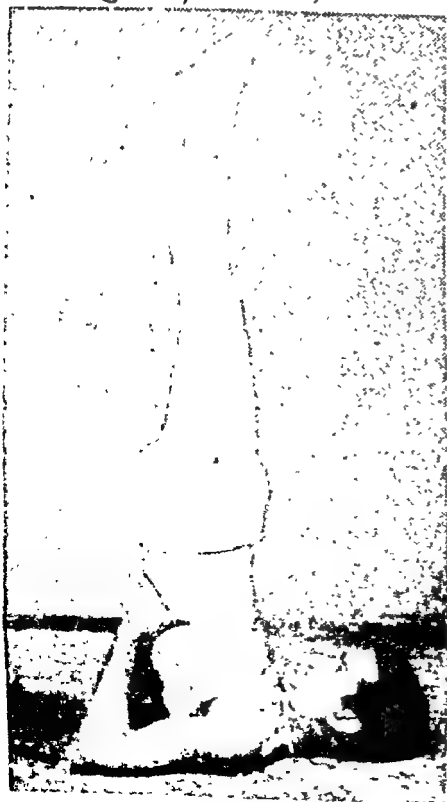
करता है। इस आसन के अभ्यास से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है तथा चेहरे पर सुन्दरता व ओज झलकने लगता है।

अभ्यास कीजिये और उसका प्रभाव प्रत्यक्ष अनुभव कीजिये। शीर्षासन, सर्वांगासन, पश्चिमोत्तान आसन, और मयूरासन मुझे अत्यन्त प्रिय है। मैं अपने सभी विद्यार्थियों को इनका अभ्यास करने की शिक्षा देता हूँ।

भूमि पर कंबल बिछा लीजिये। कमर के बल सीधे चित लेट जाइये। धीरे धीरे टांगों को ऊपर उठाइये। धड़ और जंघाओं को भी ऊपर उठाइये। दोनों ओर से हाथों के सहारे कमर को थामे रहिये। अब सारा शरीर का भार आपके कंधों व केहुनियों पर रहेगा। टांगों को स्थिर रखिये। ठुड्ढी को छाती की ओर दृढ़ता पूर्वक दबाये रखिये। केवल नासिका द्वारा धीरे धीरे श्वांस लीजिये। पांच मिनट से आरम्भ कीजिये और फिर धीरे धीरे जितना हो सके समय बढ़ाइये।

(४) मत्स्यासन

सर्वांगासन के पश्चात् तुरत मत्स्यासन करना चाहिए। सर्वांगासन से गर्दन व तत्संबंधी भागों में जो ऐंटन या रूखापन आ जाता है उसे यह आसन दूर कर देता है। इससे गर्दन तथा कंधों के संकुचित भागों को एक प्रकार से अच्छी हल्की सी मालिश हो जाती है। इसके अतिरिक्त इस आसन से प्रायः वे सभी लाभ प्राप्त हो जाते हैं जो सर्वांगासन से होते हैं।

दांये पैर को बांई जंघा पर तथा बांये पैर को दाहिनी जंघा पर रखकर बैठ जाइये। अब कमर के बल चित्त लेट जाइये। मस्तक को इस प्रकार फैलाइये कि उसका ऊपरी भाग पृथ्वी पर दृढ़ता पूर्वक सटा रहे और उधर नीचे की ओर आपके दोनों चूतड़ (नितंब) भी जमीन से सटे रहें; कमर जमीन से ऊपर उठी हुई रहनी चाहिये ताकि एक प्रकार का पुल बन जाय। अब दोनों हाथों को जंघाओं पर रख दीजिये या पैरों के अंगूठों को हाथों से पकड़ लीजिये। यह मत्स्यासन अनेक रोगों का नाश करने वाला है। यह आसन साधारण स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक है।

(५) पादांगुष्ठासन

पंजों के बल बांये पैर को ऊपर उठाकर उसकी एँड़ी को गुदा के ठीक बीचो बीच रखिए। शरीर का सारा भार पंजों पर रहना चाहिये। दाहिने पैर को बांई जंघा के ऊपर घुटने के पास रखिये। हाथों को चूतरों पर रख संतुलित होकर सावधानी से बैठिये। धीरे धीरे स्वांस लीजिये। इस आसन को अपने आप करने में यदि आपको कठिनाई मालूम हो तो आप इसको किसी बेंच या दीवाल के सहारे बैठकर कर सकते हैं।

गुदा स्थान की चौड़ाई केवल चार इंच है। इसी स्थान के नीचे वीर्य नाड़ी रहती है जिसके द्वारा वीर्य अंड कोषों में पहुँचता है। इस नाड़ी पर एड़ी का दबाव पड़ने से वीर्य का बाहरी प्रवाह रुक जाता है। इस आसन का दृढ़ अभ्यास करने से स्वप्नदोष मिटता है तथा साधक ऊर्ध्व रेता योगी बन जाता है। शीर्षासन, सर्वांगासन और सिद्धासन का संयुक्त प्रयोग ब्रह्मचर्य के लिये अत्यन्त लाभ दायक है। प्रत्येक का अपना विशेष कार्य है। सिद्धासन अंडकोष और तत्संबंधी भागों पर प्रभाव डालता है तथा वीर्य की उत्पत्ति को रोकता है। शीर्षासन और सर्वांगासन वीर्य को ऊपर मस्तिष्क की ओर ले जाने में सहायता प्रदान करते हैं। पादांगुष्ठासन शुक्र संबंधी नाड़ी पर पूर्ण प्रभाव डालता है।

आसन संबंधी सूचनायें

शारीरिक व्यायामों से प्राण बाहर की जाते हैं और आसनों के अभ्यास से प्राण अन्दर जाते हैं। आसन शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार के बलों को बढ़ाने वाले हैं।

आसनों के द्वारा इन्द्रियां मन और शरीर सभी नियन्त्रित किये जा सकते हैं। इनसे शरीर, नाड़ियां और पुट्ठे शुद्ध होते हैं। यदि आप डंड बैठकों का अभ्यास पांच सौ प्रति दिन की दर से पांच वर्षों तक भी करें तो भी आपको आध्यात्मिक अनुभव कुछ भी नहीं प्राप्त हो सकते। साधारण शारीरिक व्यायाम केवल शरीर के बाह्य पुट्ठों (अंगों) को ही पुष्ट करते हैं। शारीरिक व्यायामों के द्वारा मनुष्य एक सुन्दर डील डौल वाला सैंडो (पहलवान) बन सकता है। परन्तु आसनों से शारीरिक तथा आध्या-

त्मिक दोनों प्रकार के बल की वृद्धि होती है।

फर्श पर कंबल बिछाकर उस पर आसनों का अभ्यास करना चाहिये। शीर्षासन करते समय शिर के नीचे तकिया रखना चाहिये। आसन करते समय कौपीन (लंगोट) पहिने रहिये। चश्मा (ऐनक) उतार दीजिये और अधिक वस्त्र भी शरीर पर न रखिये।

जो लोग शीर्षासन का अभ्यास अधिक समय तक करते हैं, उनको आसन समाप्ति के पश्चात् कुछ जल-पान (कलेवा) कर लेना चाहिये अथवा कुछ दूध पी लेना चाहिए। आसनों का अभ्यास यथा-क्रम नित्य नियमानुसार करना चाहिये। जो कभी कभी अभ्यास करते हैं, उन्हें कुछ भी लाभ नहीं होता। यदि कोई आसनों का यथेच्छ लाभ उठाना चाहे, तो उसके लिये नियमित अभ्यास की परमावश्यकता है। साधारणतया लोग आरंभ में मास दो मास तक तो बड़े कौतूहल व उत्साह के साथ अभ्यास करते हैं और फिर अभ्यास छोड़ देते हैं। यह उनकी भारी भूल है।

आसनों का अभ्यास खाली पेट से करना चाहिये या खाना खाने के कम से कम तीन घंटे पश्चात्। आसनों का अभ्यास करते समय आप जप और प्राणायाम को भी सुविधा सहित मिला सकते हैं। उस स्थिति में वह वास्तविक योग बन जाता है। आसनों का अभ्यास खुली हवा में, समुद्र तट पर या नदी के किनारे बालू रेत पर करना उपयुक्त है। यदि आप आसन और प्राणायाम का अभ्यास किसी कमरे में करते हैं तो आपको देखना चाहिये कि कमरा संकुचित तो नहीं है। कमरा स्वच्छ और हवादार होना चाहिये।

आरम्भ में आसन का अभ्यास केवल एक या दो मिनट के लिये ही कीजिये और पुनः शनैः शनैः जितना हो सके, समय बढ़ाते जाइये। जब आप सभी यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करते हैं तो आप को सजग रहना चाहिये कहीं अत्यधिक परिश्रम न हो। हर समय प्रसन्नता और आनन्द रहना चाहिये।

संसार में जितने जीवधारी प्राणियों की जातियां हैं, उतने ही आसन हैं। यहां मैंने आपको कुछ चुने हुये आसनों के संबंध में शिक्षायें दी हैं, जो ब्रह्मचर्य के लिये परम उपयोगी है।

बन्ध त्रय

(६) मूल बन्ध

बांये पैर की एडी से योनि के दबाइये। गुदा को सिकोड़िये। दाहिने पैर की एँड़ी को लिंगेन्द्रिय के मूल में रखिये। यह मूल बन्ध है। साधारणतया यह प्राणायाम करते समय किया जाता है।

(७) जालन्धर बन्ध

कंठ को सिकोड़िये। ठुड्ढी को दृढ़तापूर्वक छाती से सटा दीजिये। इसका अभ्यास पूरक के अन्त में और कुम्भक के आरम्भ में करना चाहिये। इसके पश्चात् उड्डियान बन्ध करना चाहिये। ये बन्ध एक प्रकार से एक ही प्रयोग के तीन रूप है।

(८) उड्डियान बंध

मस्तक को ऊपर उठाइये। रेचक कीजिये और उदर को इस प्रकार अन्दर खींचिये कि वह वक्षस्थल की गुहा से जा लगे। इस बंध का अभ्यास खड़े खड़े किया जा सकता है। इस स्थिति में टांगों को कुछ चौड़ी कर हाथों को जंघाओं पर रख कर कुछ आगे की ओर नीचे झुक जाइये। इन तीनों (मूल, जालन्धर, उड्डियान) बन्धों का एक अच्छा समन्वय है।

(६) नौली क्रिया

उड्डियान बंध बैठे बैठे किया जा सकता है, परन्तु नौली साधारणतया खड़ा होकर की जाती है। दोनों पैरों के बीच में एक फुट का फासला रख कर खड़े रहिये। हाथों को जंघाओं पर रखते हुए कमर को कुछ सामने की ओर नीचे झुका दीजिये। फिर उड्डियान बन्ध कीजिये। अब पेट के गोल को पेट की दांई ओर बांई ओर इधर उधर घुमाइये। आपके सब पुट्ठे लंब रूप में रहेंगे। सुख पूर्वक जितनी देर हो सके उतनी देर तक ऐसा कीजिये। कुछ दिनों तक इस प्रकार अभ्यास कीजिये।

इस प्रकार कुछ अभ्यास कर लेने के पश्चात् आप

पेट की दाहिनी बगल (ओर) को सिकोड़े रखिये और बांई बगल को मुक्त कीजिये पुनः बांई बगल को सिकोड़िये और दांई को मुक्त कीजिये। इस प्रकार शनैः शनैः अभ्यास करते हुये आप स्वयं जानने लगेंगे कि पेट के बीच के तथा दांई बांई ओर के पुट्ठे किस प्रकार सिकोड़े जाने चाहिये।

अब नौली क्रिया की अन्तिम स्थिति आती है। पुट्ठों को बीच में रखिये। धीरे धीरे दांई ओर लाइये और फिर गोलाकार रूप में बांई ओर ले जाइये। इस प्रकार दांई से बांई और बांई से दांई ओर कई बार कीजिये। आपको चाहिये कि आप इन पुट्ठों को गोलाकार चाल से सदा धीरे धीरे चलावें। यदि आप क्रिया को शनैः शनैः साव-धानी के साथ करेंगे तो आपको पूर्णलाभ होगा। नये साधकों को आरंभ के दो या तीन अभ्यासों में पेट में कुछ दर्द प्रतीत हो सकता है। परन्तु उन्हें भयभीत नहीं होना चाहिये। दो या तीन दिनों के नियमित अभ्यास के बाद दर्द नहीं प्रतीत होगा।

(१०) महामुद्रा

भूमि पर बैठ जाइये। बांई एडी से गुदा को दबाइये दाहिने पांव को फैला दीजिये। दोनों हाथों से अंगुष्ठ को पकड़ लीलिये। पूरक करके कुम्भक कीजिए। ठुडडी

को दृढ़ता पूर्वक छाती से लगा लीजिए। भृकुटी पर दृष्टि जमाइए। जितना हो सके उतनी देर तक इस स्थिति में रहिए। इसी प्रकार अन्य पांव पर भी अभ्यास कीजिए।

(११) योगमुद्रा

पद्मासन लगाकर बैठ जाइए। हथेलियों को ऐंड़ियों पर रख दीजिए। धीरे धीरे स्वांस बाहिर निकालिए और सामने झुकते जाइए और मस्तक को भूमि से छूने दीजिए। यदि आप इस स्थिति में अधिक समय तक रहें तो साधारण रीति से स्वांस ले सकते हैं। यदि अधिक समय तक उस स्थिति में न रहें तो स्वांस को रोके रहिए जब तक आप धीरे धीरे मस्तक उठाते हुए अपनी साधारण स्थिति में न आ जायें; तब तक स्वांस पहली हालत में आकर स्वांस लीजिए। हाथों को एड़ियों पर न रख कर आप उन्हें अपनी पीठ के पीछे लेजा कर, दाहिने हाथ से बांये हाथ की कलाई भी पकड़ सकते हैं। यह मुद्रा ब्रह्मचर्य के लिए लाभदायक है। इस मुद्रा से पेट का और अत्यधिक मोटापन कम होता है। तथा पेट और आंतों के सब प्रकार के रोग नष्ट होते हैं। जठराग्नि प्रबल होती है। भूख और पाचन शक्ति बढ़ती।

(१२) सरल सुखपूर्वक प्राणायाम

अपने ध्यान के कमरे में, खाली पेट पद्मासन लगा कर बैठ जाइये। आंखें बन्द कर लीजिए। दाहिने हाथ के अंगुष्ठ के द्वारा दाहिनी नासिका को बंद कर लीजिये और बांई नासिका के द्वारा धीरे धीरे वायु को भीतर खींचिए। अब दाहिने हाथ की अनामिका और कनिष्ठका अंगुलियां द्वारा बांये नासा-द्वार को बंद कर दीजिए। फिर स्वांस को जितनी देर रोक सकें भीतर रोके रहिए। फिर

दाहिने अंगुष्ठ को हटा लीजिए और बहुत धीरे धीरे स्वांस बाहिर निकालिए। इसी प्रकार पुनः दाहिने नासा-द्वार के द्वारा वायु को अन्दर खींचिए; जितनी देर रोक सकें अन्दर रोके रखिए फिर बांये द्वार से धीरे धीरे बाहिर निकाल दें। यह सारा क्रम एक प्राणायाम कहलाता है। इस प्रकार २० प्राणायाम प्रातः और २० सायंकाल में कीजिए। धीरे धीरे स्वांस रोकने के समय को सावधानी सहित बढ़ाइए; साथ ही प्राणायामों की संख्या को भी बढ़ाने का प्रयत्न कीजिए। जब आपको अच्छा अभ्यास हो जाय तो आप दिन में तीन या चार बार प्राणायाम कर सकते तथा प्राणायामों की संख्या भी एक बैठक में ८० तक बढ़ा सकते हैं

नोटः—हाथ के अंगुष्ठ के पास वाली अंगुली को तर्जनी, उसके पास वाली यानी बिचली अंगुली को मध्यमा उसके पास वाली को अनामिका तथा उसके पास वाली अंगुली को कनिष्ठका कहते हैं।

(१३) भस्त्रिका प्राणायाम

आसन से बैठ जाइये। शरीर को सीधा खड़ा रखिये। मुंह बंद कर लीजिए। धौंकनी की नाईं बीस बार तक खूब जोर जोर से पूरक और रेचक कीजिए। बीस पूरे होने पर फिर गहरी स्वांस लीजिए और धीरे धीरे बाहर निकालिये। यह एक चक्र है। थोड़ा अवकाश लीजिए और फिर दूसरा चक्र कीजिए। तीन चक्र प्रातः और तीन चक्र सायंकाल में कीजिये। यह बहुत शक्तिशाली अभ्यास है। ब्रह्मचर्य के लिए परम उपयोगी है। इस प्राणायाम को खड़े खड़े भी कर सकते हैं।

(१४) प्राणायाम के संबंध में साधारण संकेत

प्राणायाम के अभ्यास के पश्चात् तुरत स्नान नहीं करना चाहिये। आध घंटे तक ठहर कर फिर नहाना चाहिये। ग्रीष्म ऋतु में केवल एक ही बार प्रातःकाल में प्राणायाम करें। यदि मस्तिष्क में कुछ ताप मालूम हो तो नहाने के पहिले शिर पर ठंडा तेल मलिये।

पूरक और रेचक सदा धीरे धीरे करने चाहिये। पूरक करते समय कुछ भी शब्द नहीं होना चाहिये। भस्त्रिका में भी जो शब्द हो, वह तीव्र होना चाहिये। केवल नासिका द्वारा ही स्वांस लेना चाहिए। नये साधक को कुछ दिनों के लिये बिना कुम्भक का केवल पूरक और रेचक ही करना चाहिये।

प्राणायाम करते समय पूरक, कुम्भक और रेचक इस खूबी से करना चाहिये कि आपको किसी भी स्थिति में कुछ भी पीड़ा या स्वांसावरोधन न हो। रेचक का समय आपको आवश्यकता से अधिक नहीं बढ़ाना चाहिये। यदि आप ऐसा करते हैं तो आपका अगला पूरक शीघ्रता पूर्वक होगा और आपका लय या ताल भंग हो जायगा।

कुम्भक का समय शनैः शनैः बढ़ाइये। प्रथम सप्ताह में चार सेकेंड, दूसरे सप्ताह में ८ सेकेंड और तीसरे सप्ताह में १२ सेकेंड के लिये कुम्भक कीजिये; इसी प्रकार जितना हो सके, समय बढ़ाते जाइये।

प्राणायाम करते समय ॐ मंत्र का, गायत्री मंत्र का अथवा किसी भी अन्य मंत्र का मानसिक जप कीजिये। ऐसा भाव रखिये कि पूरक करते समय करुणा, क्षमा, प्रेम आदि सद्गुण आप में प्रवेश कर रहे हैं तथा रेचक करते समय आपके काम, क्रोध, द्वेष, लोभ आदि दुर्गुणों

का क्षय हो रहा है। पूरक करते समय आप ऐसी भावना कीजिये कि आप लौकिक प्राण से शक्ति प्राप्त कर रहे हैं तथा आपका सारा शरीर अगाध, स्वच्छ प्राण शक्ति से परिपूर्ण हो रहा है। विशेष अस्वस्थ अवस्था में अभ्यास बन्द कर दीजिये।

(१५) अन्य प्रकार

सत्संग, आहार संबन्धी नियम, मिताहार, सात्विक भोजन, व्रत, दृष्टि परिवर्तन आदि उपरोक्त सभी बातें, हठ-योग, भक्तियोग, राजयोग और ज्ञानयोग के सभी विद्यार्थियों के लिये सामान्य रूप से लागू हैं। ब्रह्मचर्य संबन्धी आवश्यक हठयौगिक अभ्यास पहिले बताये जा चुके हैं।

नवधा भक्ति (श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्म निवेदन) के अभ्यास के द्वारा भक्त अपनी अशुद्ध भावनाओं का दमन कर अपने मन को सगुण ब्रह्म पर एकाग्र कर सकता है। भगवान की लीला या कथा का सुनना या शास्त्रों का अध्ययन करना श्रवण भक्ति है। भगवान के नाम का निरन्तर जप करना तथा उसका निरन्तर स्मरण करना, स्मरण भक्ति कहलाती है। भगवान के यश का गान करना, कीर्तन है। पत्र-पुष्पादि भेंट चढ़ाना, अर्चन है। भगवान के चरण कमलों की पूजा करना, पादसेवन है। भगवान से मित्रता करना, सख्य है। भगवान की निस्वार्थ भाव से सेवा करना, दास्य है। आत्म समर्पण ही आत्म निवेदन है। व्रत, अनुष्ठान, प्रार्थनायें, मानसिक पूजा, सत्संग आदि के द्वारा भक्त काम, क्रोध व अन्य अशुद्ध वासनाओं से मुक्त होकर नित्य शान्ति, आनन्द और ज्ञान के परम धाम को प्राप्त करता है।

यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार के अभ्यास के द्वारा, राजयोगी कामवासना पर विजय प्राप्त कर अपनी यौगिक साधना में अग्रसर होता है।

आचारिक या धार्मिक पवित्रता के लिये यम और नियम आवश्यक हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह—ये यम कहलाते हैं। शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान—ये नियम हैं। मन, वचन और कर्म से किसी भी प्राणी को कष्ट नहीं देना, अहिंसा है। सच बोलना सत्य है। संग्रह या लोभ नहीं करना, अपरिग्रह है। अन्तर और बाह्य शुद्धि को शौच कहते हैं। प्राप्त वस्तु में तृप्ति मानना ही सन्तोष है। तपश्चर्या कर शरीर को कष्ट देना, तप है। अपने कर्म फलों को भगवान के अर्पण कर देना, ईश्वर प्रणिधान कहलाता है। इन्द्रियों को भोग-पदार्थों से हटाना, प्रत्याहार कहलाता है। इन्द्रियां मन से पृथक हैं। यदि मन को सदा विषयों से हटाकर लक्ष्य पर लगाया जाय तो प्रत्याहार आप ही होने लगेगा। ब्रह्मचर्य रक्षण के लिये प्रत्याहार बहुत सहायता प्रदान करता है। 'चित्तवृत्ति निरोध' इस उक्ति के द्वारा साधक वृत्ति हीन अवस्था को प्राप्त करता है। मन से किसी भी विचार को उत्पन्न नहीं होने देते।

ज्ञान योगी, वैराग्य, विवेक, शम, दम, तितिक्षा समाधान, उपरति, श्रद्धा, मुमुक्षत्व, श्रवण, मनन और निदिध्यासन के अभ्यास द्वारा पवित्र होता है। विषय-सुख-भोगों से उदासीन रहना, वैराग्य है। सत्य और असत्य, नित्य और अनित्य का विचार करते रहना ही विवेक है। मन की शान्ति को शम कहते हैं। त्याग उपरति है। सहन शीलता ही तितिक्षा है (शीत, उष्ण आदि सहन करना)

गुरु तथा शास्त्रों के वचनों में विश्वास रखना, श्रद्धा है। मन की सन्तुलित अवस्था, समाधान है। जीवन मरण के चक्र से मुक्त होने की तीव्र इच्छा को मुमुक्षुत्व कहते हैं। ॐ का जप तथा शुद्ध अलिंग आत्मा का ध्यान करने से मन में कुत्सित विचार उत्पन्न नहीं होंगे। सब वासनायें नष्ट हो जायेंगी। साधक अपने मन को सदा विचार में पूर्णतया निमग्न रखता है।

वासनाओं का क्षय करके, राग-द्वेष को मन से निकाल करके, अपनी आवश्यकताओं को कम करके तथा तितिक्षा का अभ्यास करके यदि आप अपनी इच्छा या संकल्प-शक्ति को शुद्ध दृढ़ और अडिग बना लेंगे तो आपका काम स्वयं भस्म हो जायगा। संकल्प-शक्ति काम का प्रबल शत्रु है।

अपने ध्यान के कमरे में अकेले बैठ जाइये। नेत्रों को बन्द कर लीजिये। उपर्युक्त नियमों को बार बार दुहराइये। अर्थ पर भी ध्यान जमाइये। इन्हीं विचारों में अपने मन और बुद्धि को डुबो दीजिये। आपके सारे नस-नस इन विचारों से स्पंदित होने चाहिये।

(१६) निश्चय कीजिये और ध्यान कीजिये

(१) मैं शुद्ध हूं ... ॐ

(२) मैं अलिंग आत्मा हूँ ... ॐ

(३) आत्मा काम तथा लिंग-रहित है ... ॐ ॐ ॐ

(४) काम मानसिक विकार है;
मैं इसका साक्षी हूँ ... ॐ ॐ ॐ

(५) मैं असंग हूँ ... ॐ ॐ ॐ

(६) मेरा संकल्प शुद्ध दृढ़ और अडिग है ॐ ॐ ॐ

(७) मैं पूर्णरूप से शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य में संस्थित हूँ ... ॐ ॐ ॐ

(८) मैं अब पवित्रता का अनुभव कर रहा हूँ
ॐ ॐ ॐ

किसी कागज पर छः बार लिखिये "ॐ पवित्रता !" इसको अपनी जेब में रखिये। दिन में कई बार पढ़िये। इसे आप अपने घर में किसी दीवाल पर चिपका सकते हैं अथवा इसे किसी प्रमुख स्थान पर रख सकते हैं जहां वह हर समय आपके देखने में आता रहे। "ॐ पवित्रता" इन शब्दों का मानसिक चित्र आपके सामने सदा घूमत रहे। ब्रह्मचारी संत महात्माओं तथा उनके शक्तिशाली कार्यों का सदा स्मरण करते रहिये। ब्रह्मचर्य रूपी पवित्र जीवन के लाभ तथा अपवित्र जीवन से उत्पन्न होने वाली हानियों तथा पापों पर विचार करते रहिये।

नित्य अनुभव करते रहिये "भगवान की कृपा से मैं हर तरह से दिन दिन श्रेष्ठतर होता जा रहा हूँ" इसे आत्म -संकेत कहते हैं। यह भी एक प्रभावशाली विधि है।

(१७) ठंडा हिप वाथ (कटि स्नान)

ठंडा हिप वाथ बल और तेज बढ़ाने वाला है। हिप-वाथ और बैठक-स्नान में विशेष अन्तर नहीं है। इस संबन्ध में विशेष जानकारी के लिये (Louis Kuhne) लुई कुन्हे की "जल चिकित्सा" शीर्षक पुस्तक देखें। ठंडा हिप वाथ जननेन्द्रिय और मूत्र संबन्धी नाड़ियों को मृदु आराम प्रदान कता है तथा रात्रि में होने वाले स्वप्न दोष को रोकने में यह एक रामवाण औषधि (प्रयोग) है। यह नाड़ी-मंडल को पुष्ट करने वाली एक महौ षधि है।

किसी नदी झील या तालाब में आध घंटे तक इस प्रकार खड़े रहिये कि पानी आपके नाभी तक ही रहे ऊपर न जाय। खड़े खड़े गायत्री या अन्य किसी भी मंत्र का

जप करते रहिये। पेट के नीचे वाले भाग को अंगोछे या किसी खद्दर के मोटे कपड़े से रगड़ते जाइये। ग्रीष्म ऋतु में यह स्नान प्रातः और सायंकाल में दो बार लेना चाहिये। यह स्नान घर पर भी किसी बड़े टब में सुखपूर्वक लिया जा सकता है। बूढ़े तथा रोग युक्त व्यक्ति गुनगुने पानी का प्रयोग कर सकते हैं। स्नान कर चुकने पर शरीर के गीले भाग को सूखे अंगोछे से पोंछ कर गर्म कपड़ा पहन लेना चाहिए। किसी नल या फोहारे के नीचे बैठ कर ठंडे पानी से स्नान ब्रह्मचर्य के अभ्यास के लिए अत्यन्त लाभदायक है।

वह इच्छा जो मन में सूक्ष्मरूप से छिपी हुई रहती है, उसे वासना कहते हैं। स्थूल रूप में वह इच्छा है। विषय पदार्थों को प्राप्त करने के लिए घनीभूत उत्कंठा (लालसा) को तृष्णा कहते हैं।

दसवां अध्याय

कहानियां और चरित्र

(१) जैमिनी ऋषि

एक बार व्यास मुनि अपने शिष्यों को वेदान्त की शिक्षा दे रहे थे। प्रसंग वश उन्होंने अपने प्रवचन में कहा कि नवयुवक ब्रह्मचारियों को पूर्णतया सावधान रहना चाहिए कि वे युवती स्त्रियों का संग कदापि न करें क्योंकि काम ऐसा प्रबल है कि सर्वतः सावधान रहने पर भी वे काम के शिकार बन सकते हैं। जैमिनी नाम का एक शिष्य—जो पूर्व मीमांसा का रचयिता था—कुछ धृष्ट था। उसने कहा "गुरु जी महाराज! आपका कथन असत्य है। कोई भी स्त्री मुझे आकर्षित नहीं कर सकती। मैं ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित हूँ।" कुछ दिनों के पश्चात् व्यास

मुनि ने कहा "मैं वाराणसी जा रहा हूँ और तीन महीने के पश्चात् आऊंगा। सावधान रहना, घमंड (अहंकार) न करना।" व्यास मुनि ने अपने योग बल से एक ऐसी सुन्दर युवती का रूप धारण कर लिया जो अपनी महीन रेशमी साड़ी, भोली भाली मुखाकृति तथा बांकी चितवन के द्वारा दर्शक गणों के मनों को आकर्षित करने वाली थी। सायंकाल का समय था, यह बाला एक वृक्ष के नीचे खड़ी थी। गगन में मेघ छाये हुये थे। धीरे धीरे वर्षा होने लगी। अकस्मात् जैमिनी उधर होकर जा रहे थे। उन्होंने उस रूपवती को देखा उनके हृदय में करुणा उत्पन्न हुई और उन्होंने उससे कहा "बहन जी! आप आइये और मेरे आश्रम में ठहरिये, मैं आपको रहने के लिये स्थान दूंगा।" बाला ने पूछा "क्या आप अकेले रहते हैं? वहां कोई अन्य स्त्री है?" जैमिनी ने उत्तर दिया "मैं अकेला हूँ। परन्तु मैं पूर्ण ब्रह्मचारी हूँ। मैं काम से प्रभावित नहीं हो सकता। मैं सब प्रकार के प्रलोभनों से मुक्त हूँ! आप वहां रह सकती हैं।" बाला ने कहा "एक तरुण कुमारी कन्या को ब्रह्मचारी के साथ रात्रि में अकेली रहना उचित नहीं है।" जैमिनी ने कहा "हे भगिनी! आप भयभीत न होइये। मैं प्रतिज्ञा कर कहता हूँ कि मैं पूर्ण ब्रह्मचारी हूँ।" इस पर उस बाला ने स्वीकार कर लिया और वह रात्रि में उसके आश्रम में ठहर गई। जैमिनी बाहर सो गया और वह स्त्री कमरे के भीतर सो रही थी। अर्द्ध रात्रि के समय जैमिनी काम के प्रभाव से पीड़ित होने लगा और उसके मन में काम-वासना उत्पन्न हो गई। प्रथमतः वह सर्वथा शुद्ध था। उसने कमरे का द्वार खटखटाया और कहा "अजी! बहिन जी, बाहिर हवा चल रही है,

मैं ठंडी हवा के झोंके सहन नहीं कर सकता मैं भीतर सोना चाहता हूँ।" उसने द्वार खोल दिया। जैमिनी भीतर आकर स्त्री से कुछ दूरी पर सो गया। स्त्री के अत्यन्त निकट होने तथा उसके कंकन व नूपरों की मधुर मधुर झनकार कानों में पड़ने से अब उसकी काम-वासना कुछ और अधिक प्रबल हो गई। तब वह उठा और उसे आलिंगन करने लगा। तत्काल लंबी दाढ़ी युक्त श्री व्यास मुनि अपने वास्तविक स्वरूप में प्रकट हो गये और कहने लगे "ओ वत्स! जैमिनी! अब तुम्हारे उस पूर्ण ब्रह्मचर्य का बल कहां गया? जब मैं उस समय ब्रह्मचर्य के विषय पर प्रवचन कर रहा था, तब तुमने क्या कहा था?" जैमिनी ने अतिशय लज्जा के कारण शिर नवा कर कहा "हे गुरुदेव! मैं अधर्मी हूँ। कृपया क्षमा कीजिये।" इस कहानी से यही शिक्षा मिलती है कि बलवती इन्द्रियों के प्रभाव तथा माया की शक्ति के द्वारा बड़े बड़े महा पुरुष भी धोखा खा जाते हैं। ब्रह्मचारियों को चाहिये कि वे प्रत्येक अवस्था में पूरे पूरे सावधान रहें।

(२) सुकदेव मुनि

चित्त की एकाग्रता की जांच

श्री शुकदेव जी ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने के हेतु राजा जनक के पास गये। राजा जनक ने उनकी धारणा (चित्त की एकाग्रता) शक्ति की परीक्षा लेनी चाही। उसने सुकदेव जी को बुलाकर कहा 'हे ऋषि राज! लीजिये यह एक पानी से भरा हुआ कटोरा है। इसे अपने मस्तक पर रख लीजिये और सारी मिथिला नगरी का चक्कर काट कर पुनः मेरे पास यहां आ जाइये, परन्तु ध्यान रहे कि पानी

की एक बूंद भी पृथ्वी पर नहीं गिरनी चाहिये।' राजा जनक ने उनके मार्ग में सुन्दर युवतियों के नाच, गान, वाद्य तथा नाना प्रकार के खेल, तमाशों की रचना करने का पहिले ही से प्रबन्ध कर दिया था ताकि उनका ध्यान किसी न किसी प्रकार से अवश्य विचलित हो जाय। सुख देव मुनि उस पानी के कटोरे को अपने शिर पर रक्खे हुए सारी नगरी में घूमकर पुनः ज्यों के त्यों राजा के पास लौट आये, पानी की एक बूंद भी गिरने न पाई।

राजा जनक ने पूछा "हे सुकदेव जी! क्या आपने रास्ते में नाच गान आदि देखे?" सुकदेव जी ने उत्तर दिया "हे मान्यवर! मैंने रास्ते में कुछ भी नहीं देखा क्योंकि मेरा सम्पूर्ण ध्यान पानी के कटोर पर था।"

दक्षिण भारत के सुप्रसिद्ध गृहस्थ ज्ञानी तिरुवल्लुवर ने भी अपनी पत्नी की परीक्षा इसी प्रकार से ली थी। यदि आप सुकदेव जी की भांति चित्त की एकाग्रता प्राप्त कर लेंगे तो ब्रह्मचर्य सदा करबद्ध होकर आपके गृह-द्वार पर खड़ा रहेगा।

(२) राजा ययाति

इसकी कथा आपको महाभारत—शान्ति पर्व में मिलेगी। यद्यपि राजा ययाति वृद्ध हो गया था, तथापि उसकी काम वासना अति प्रबल थी। उसने अपने पुत्र को बुला कर कहा "हे वत्स! मैं उत्कट अनुरागी हूँ। मैं छः नवयुवती कन्याओं से विवाह करना चाहता हूँ। मुझे तुम्हारा यौवन दो।" पुत्र ने पिता की आज्ञा स्वीकार कर ली और उसने अपना यौवन पिता को दे दिया। राजा ने कई वर्षों तक घाटियों, नालियों, बगीचों, समुद्र

तट तथा पर्वतों में उन नव विवाहिता पत्नियों के साथ खूब मनमानी क्रीड़ा, भोग विलासादि किये। अब भी वह अत्यन्त कामी और अशान्त था। उसके मन में तनिक भी शान्ति नहीं आई। अन्त में वह फूट फूट कर रोने लगा और अपने पुत्र को बुला कर दुख भरे शब्दों में कहने लगा "हे वत्स ! मैंने इन स्त्रियों के संग अहर्निश भोग विलास किया; मैंने अपना सारा जीवन ही नष्ट कर डाला है, परन्तु मेरी काम-वासना अभी तक नष्ट नहीं हुई है। जिस प्रकार अग्नि में घृत या तेल की आहूति देने से वह अग्नि अधिक प्रज्वलित होती है, ठीक उसी प्रकार से यह काम भोग-विलास के द्वारा अधिक प्रबल तथा उत्तेजित होता है। भोगों से कभी भी वासनाओं की तृप्ति नहीं हो सकती। तृष्णा और संस्कारों के बल के द्वारा, भोग मनुष्य के मन को और भी अधिक अशांत बना देता है। अब मैं प्रत्येक वस्तु का सर्वतः त्याग करता हूँ। अब मैं संन्यास लेकर बनों में भ्रमण कर ब्रह्मचर्य व ध्यान का अभ्यास करूंगा।" केवल तप, सत्य, ब्रह्मचर्य और ध्यान के द्वारा ही शांति और अमरत्व प्राप्त हो सकता है। श्रुतियों की घोषणा है कि मनुष्य केवल त्याग ही के द्वारा अमरत्व प्राप्त कर सकता है, न कि धन और कर्मों से।

(४) सुकरात और उसका शिष्य
(ब्रह्मचर्य संबंधी संभाषण)

सोक्रेटीज के एक शिष्य ने पूछा "हे पूज्य गुरुदेव ! मुझे यह बतलाइये कि गृहस्थी को कितना बार स्त्री-प्रसंग करना चाहिये।" सुकरात ने उत्तर दिया "जीवन भर में केवल एक बार।"

शिष्य ने कहा "हे देव ! सांसारिक मनुष्यों के लिये यह सर्वथा असंभव है। काम अति भयंकर और दुःखदाई है। संसार में अनेकानेक आकर्षण और प्रलोभन हैं। हैं। गृहस्थियों में इतनी शक्ति नहीं है कि ये प्रलोभनों को जीत सकें। उनकी इन्द्रियां बड़ी प्रबल और उत्तेजित हैं। मन में काम-वासना भरी रहती है। आप तो ज्ञानी और योगी हैं। आपकी इन्द्रियां आपके वश में हैं। कृपया गृहस्थियों के लिए कोई सुगम मार्ग बतलाइये। इस पर सुकरात ने कहा "गृहस्थी वर्ष में एक बार स्त्री-प्रसंग कर सकता है।" शिष्य ने फिर कहा "हे गुरुदेव ! वह भी उनके लिये एक कठिन कार्य है। इससे भी कोई सरल मार्ग बतलाये।" सुकरात ने कहा "अच्छा तो महीने में एक बार। यह अति सरल और अनुरूप है। क्यों ? अब तो तुम संतुष्ट हो न।" शिष्य ने कहा "हे गुरुवर्य ! यह भी असंभव है। गृहस्थियों के मन बड़े चंचल होते हैं। उनमें कामुक संस्कार और वासनायें पूर्णतः भरी रहती हैं। वे स्त्री-प्रसंग किये बिना एक दिन भी नहीं रह सकते। आपको उनकी मानसिक अवस्था का पता नहीं है।" इस पर सुकरात ने कहा "अच्छा तुम्हारा कहना ठीक है। अब एक काम करिये। (श्मशान) कब्रिस्तान में जाकर कब्र खोद डालिये और पुनः कफन भी पहले ही से खरीद रखिये। फिर आप अपनी इच्छानुसार भोग कर अपने आपको नष्ट कर सकते हो। यही मेरा अन्तिम उपदेश है।"

इस अन्तिम उपदेश ने शिष्य का हृदय विदीर्ण कर डाला। उसके अत्यन्त गहरी चोट लगी। उसने इस पर गंभीरता पूर्वक विचार किया और तदनुसार वह ब्रह्मचर्य

की आवश्यकता तथा उसके महत्व को समझ गया। ठीक उसी समय से उसने सोत्साह आध्यात्मिक साधना प्रारंभ कर दी। उसने जीवन पर्यन्त अखंडित ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने की दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली। उसने ऊर्ध्वरेता योगी बन कर आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लिया। वह तब से सुकरात के प्रिय शिष्यों में एक गिना जाने लगा।

(५) एक पिशाच (भूत) की कहानी

मन ही पिशाच है, जो नित्य अशांत रहता है। एक बार एक ब्राह्मण पंडित ने मंत्र–सिद्धि के द्वारा किसी पिशाच को बस में कर डाला। पिशाच ने पंडित से कहा "मैं प्रत्येक कार्य एक ही मिनट में कर सकता हूँ। मेरे पास अलौकिक शक्तियाँ हैं। आप मुझे नित्य विविध प्रकार के कार्य करने के लिये देते रहिये। यदि बिना काम के एक मिनट भी मुझे छोड़ा, तो याद रखिये मैं आप ही को तत्काल भक्षण कर जाऊँगा।" ब्राह्मण ने इस बात को स्वीकर कर लिया। उस पिशाच ने ब्राह्मण के लिये एक तालाब खोदा, हल चलाया औ थोड़े ही समय में विविध प्रकार के अनेक कार्य कर डाले। अब उस के पास कुछ भी कार्य शेष नहीं रहा जिसमें वह उस देव को लगा सके। देव ने ब्राह्मण को डाट कर कहा "अब मेरे लिये कुछ भी नहीं है; मैं आप ही को भक्षण करूँगा।" ब्राह्मण व्याकुल होकर असमंजस में पड़ गया। वह कुछ भी नहीं जान सका कि अब उसे क्या करना चाहिये। वह अपने गुरुजी के पास गया और सब हाल कह सुनाया। गुरुजी ने कहा "अपनी साधारण बुद्धि से काम लो। अपने घर के सामने एक लंबा, मजबूत लकड़ी का स्थंभ खड़ा करदो

और उस पर तिल्ली का तेल अथवा अन्य कोई भी चिकना पदार्थ लेप दो। फिर उस देव को उस स्थंभ पर अह-र्निश चढ़ने और उतरते रहने की आज्ञा दो।" शिष्य ने वैसा ही किया और तदनुसार उस पिशाच को तुरत वस में कर लिया। देव असहाय हो गया।

(६) शुद्ध और अशुद्ध मन

एक बार बनारस में हनुमान घाट पर दो कुमारिकायें, जो वहाँ स्नान कर रही थीं सहसा पानी में डूबने लगी। दो नव युवक जो वहीं पर खड़े थे तुरंत गंगा में कूद पड़े और उन कन्याओं को पानी से निकाल कर उनकी जान बचा दी। एक मनुष्य ने कन्या से विवाह करने की इच्छा प्रकट की दूसरे मनुष्य ने कहा "मैंने अपने कर्तव्य का पालन किया है। भगवान ने मुझे सेवा करने तथा अपने आप को समुन्नत करने का सुअवसर प्रदान किया है।" यह है चित्त शुद्धि। बाह्य कार्य—जान बचाने का—तो दोनों पुरुषों का एक ही है, परंतु उद्देश्य में भेद है। फल भी भिन्न होंगे।

—:०:—

परिशिष्ट

(१) ब्रह्मचारी का गीत

विवाह एक अभिशाप तथा आजन्म कारावास है; मैं उस अविवाहित परमानंद का प्रेमी हूँ जो धैर्य और शान्ति का देने वाला है।

ओ ! अनुरागी गृहस्थियों। आप इस बहुमूल्य वीर्य को क्यों नष्ट करते हैं !

रक्त की चालीस बूंदों से वीर्य की एक बूंद बनती है, सावधानीपूर्वक उसकी रक्षा कीजिये और उसे ओज में परिणत कीजिये।

क्या आप इस अशिष्ट कार्य को पुनः करते रहने में लज्जित नहीं होते !

ए मेरे प्यारे मित्रो ! अब जरा मेरी गाथा सुनिये।

मैं निःशंक नैष्ठिक ब्रह्मचारी हूँ।

मैंने बचपन ही से अखंड ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा ले रखी है।

मैं भीष्म, लक्ष्मण, सनक, सनंदन, सनतसुजात और सनत कुमार का वंशज हूँ।

मैं अखंड ब्रह्मचारी के नाम से भी प्रख्यात हूँ,

कोई कोई मुझे बाल ब्रह्मचारी भी कहते हैं,

मैं इन नामों की ओर ध्यान भी नहीं देता, क्योंकि वे असत्य हैं।

मैंने दर्शन, केलि, कीर्तन, गुह्यभाषण, संकल्प, अध्यवसाय और क्रिया-निवृत्ति इन आठ प्रकार के अवरोधों (विघ्नों) का परिहार किया है।

जब मैं रास्ते में चलता हूं तो सदा अपने पैर के अंगूठे की ओर ही देखता रहता हूँ।

मैं स्त्रियों को ओर काम-दृष्टि से नहीं झांकता,

मैं शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य में सुव्यवस्थित हूँ।

मैं पौरुष और शक्ति-शाली उर्ध्व रेता योगी हूं।

मैं शीर्षासन और सर्वांगासन भी किया करता हूँ।

मैं भगवत् चिंतन के लिये सिद्धासन पर बैठता हूँ।

मैं बंध और मुद्राओं में भी प्रवीण हूं।

मैं नौली और बज्रौली भी सरलता पूर्वक कर सकता हूँ। मैं अधिक समय के लिये अपने प्राण का अवरोध कर सकता हूँ।

मैं उसे तुरंत अपनी इच्छानुसार सहस्रार में ले जा सकता हूँ।

मैं नित्य अपने सच्चिदानंद स्वरूप में स्थित रहता हूँ।

मैं ज्ञान और जीवन की एकता का अनुभव करता हूँ।

मैं सर्व-प्रकार के प्रलोभनों से अजेय हूँ।

मैं अपनी महती इच्छा-शक्ति के द्वारा पर्वतों का उन्मूलन कर सकता हूँ;

मैं क्षण भर में समुद्रों का शोषण कर सकता हूँ;

मैं खेचरी मुद्रा द्वारा आकाश में उड़ सकता हूँ;

मैं अपनी अंगुलियों द्वारा सूर्य को भी स्पर्श कर सकता हूँ;

रिधियाँ और सिद्धियाँ तो अब मेरे चरणों में लुढ़कती हैं।

मैं गर्म कढ़ी और चटनियों का त्याग करता हूँ;

मैं दूध, फल, और गेहूँ की रोटी द्वारा अपना जीवन यापन करता हूँ;

मैंने चल-चित्रों, उपन्यासों तथा कुसंगति का सर्वथा त्याग कर दिया हैं;

मैं महात्माओं के संग में रहता हूं तथा जप, ध्यान करता हूँ;

मैं नित्य प्रातःकाल ब्राह्ममूहूर्त में तीन या साढ़े तीन बजे उठता हूँ;

और श्रद्धा, प्रेम और भाव के साथ भगवान का चिंतन करता हूँ;

मैं एकान्त में, हिमगिरि की कंदराओं में रहना पसंद करता हूँ;

गंगा तट पर वास करने से मेरे मन में ईश्वर-प्रेरणा का संचार होता हैं;

मैं सदा सर्वथा कर्म में संलग्न ही रहता हूँ;

कुत्सित विचारों को दूर रखने के लिये यह सर्वश्रेष्ठ साधन है;

आलस्य और मन की अस्थिरता—ये दो बड़े भारी विघ्न हैं;

प्राणायाम और कार्य-संलग्न-स्वभाव के द्वारा मार्ग नितान्त स्पष्ट रहता है।

मेरा शरीर कमल-पुष्प की भांति सुगंधित है;

मेरे नेत्र हीरक की भाँति प्रकाश मान हैं;

मेरा शरीर हल्का और मल त्याग अल्प हैं;

मेरी वाणी बुलंद (प्रबल) तथा मेरा स्वर कोकिल कंठ की भांति मधुर है;

ब्रह्मचर्य व्रत ही इन सब का कारण है,

आप लोग भी इस महाव्रत को क्यों नहीं धारण करते ?

(२) ब्रह्मचर्य के नुस्खे

(१) शिर्षासन .... ५ मिनट

सर्वांगासन .... १० ,,

व्रत (एकादशी अथवा हर दूसरे इतवार को)

जप .... १ घंटा

गीता का अध्ययन .... १ ,,

सगुण या निर्गुण ध्यान .... ३० मिनट

(इसे दो घंटों तक बढ़ाइये)

(२) सिद्धासन .... ३० मिनट

प्राणायाम .... ३० ,,

दूध और फल .... रात्रि में

उड्डियान बन्ध .... १० मिनट

(मन को पढ़ने, बगीचा लगाने, कीर्तन करने आ आदि कार्यों में सदा पूर्णतः लगाये रखना चाहिये)

(३) कीर्तन	....	३० मिनट
प्रार्थना	....	३० "
सत्संग	....	१ घंटा
ध्यान	....	३० मिनट से ३ घंटे
त्रिफला का पानी	...	प्रातःकाल में

(४) ॐ या भगवान कृष्ण के चित्र पर त्राटक करना ... १० मिनट

हरे राम कीर्तन और जप .... ३० मिनट

(बादाम और मिश्री-शर्बत, ग्रीष्म ऋतु में लेना चाहिए)

जप के लिये मन्त्र

विष्णु भक्तों के लिये ...	ॐ नमो नारायणाय
शिव भक्तों के लिये	ॐ नमः शिवाय
भगवान कृष्ण के भक्तों के लिये	ॐ नमो भगवते वासुदेवाय
भगवान राम के भक्तों के लिये	श्रीराम या श्री सीताराम
द्विजों (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों) के लिये	गायत्री मंत्र
निर्गुण उपासकों के लिये	ॐ या सोऽहम्

नोटः—आप उपर्युक्त चार वर्गों (समूहों) में से किसी भी एक वर्ग के विषयों का अभ्यास कर सकते हैं या वर्ग १ और ३ या ४ या १. २. ३. और ४ को अपने सुविधा के अनुसार मिला सकते हैं।

ब्रह्मचर्य माला

ब्रह्मचर्य सर्वश्रेष्ठ तप है। विशुद्ध ब्रह्मचारी मनुष्य नहीं अपितु साक्षात् देवता है। जो यत्न पूर्वक अपने वीर्य की रक्षा करता है, उस ब्रह्मचारी के लिये इस संसार में क्या अप्राप्य है? वीर्य की शान्ति रूपी शक्ति के द्वारा कोई भी ब्रह्मचारी मेरे समान बन सकता है। —शंकर

जो विद्यार्थी ब्रह्मचर्य के द्वारा भगवान के लोक को प्राप्त कर लेते हैं, फिर उन के लिये ही वह स्वर्ग है। वे किसी भी लोक में क्यों न हों, मुक्त हैं।

—छांदोग्य उपनिषद्

इंद्रिय-सुख के द्वारा, जीवन, कान्ति, बल, पौरुष, स्मरण शक्ति, धन, कीर्ति, पवित्रता तथा भक्ति, इन सब का सर्वथा नाश होता है।

—भगवान् श्रीकृष्ण

ब्राह्मण किसी भी नंगी स्त्री का दर्शन न करे

—मनु

भोजन में सावधानी रखना त्रिगुण मूल्यवान है, परंतु मैथुन से दूर रहना एक चौगुना महत्व शाली कार्य है। सन्यासी कभी किसी स्त्री की ओर काम दृष्टि से न देखे; यह नियम उसके लिये पहिले ही से चलता आ रहा है और आगे भी सदा चलता रहेगा।

—आत्रेय.

बुद्धिमान मनुष्य को चाहिये कि वह विवाह न करे; विवाहित जीवन को एक प्रकार का दमकते हुए अंगारों से परिपूर्ण खड्ड समझे। संयोग या संसर्ग से इंद्रिय जनित ज्ञान की उत्पत्ति होती है; इंद्रिय जनित ज्ञान से तत्संबंधी सुख को प्राप्त करने की अभिलाषा दृढ़ होती है; संसर्ग से दूर रहने पर जीवात्मा सब प्रकार के पापमय जीवन से मुक्त रहता है।

—बुद्ध

मनसे, वचन से और शरीर से, सर्व कार्यों में, सर्वदा, सर्वत्र मैथुन से मुक्त रहना ही ब्रह्मचर्य है। —याज्ञवल्क्य

धनवानों, नास्तिकों तथा शत्रुओं तथा काम के संबंधी वार्तालाप कभी श्रवण न कीजिये।

—नारद

शरीर से वीर्य-पात होने पर मृत्यु का शीघ्रागमन होता है; वीर्य की रक्षा करने से जीवन की रक्षा व आयु की वृद्धि होती है।

वीर्य-पतन से ही अकाल मृत्यु होती है, इस में संदेह नहीं; इस बात को ध्यान में रखते हुए योगी को चाहिये कि वह वीर्य की सदा रक्षा करे और पूर्ण पवित्रता का जीवन व्यापन करे।

—शिव संहिता

मैथुन संबंधी ये प्रवृत्तियाँ, सर्व प्रथम तो तरंगों की भांति ही प्रतीत होती हैं, परंतु आगे चलकर वे कुसंगति के कारण एक विशाल समुद्र का रूप धारण कर लेती हैं।

—नारद

वेद के जानने वाले विद्वान जिस को ॐ कार नाम से कहते हैं, और आसक्ति रहित सन्यासीगण जिस में प्रवेश करते हैं तथा जिस परम पद को चाहने वाले ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं, उस परम पद को मैं तेरे लिये संक्षेप में कहूँगा।

—गीता अध्याय ८, श्लो-२

जो पुरुष कर्मेंद्रियों को हठपूर्वक रोक कर, इंद्रियों के भोगों को मन से चिंतन करता रहता है वह मूढ़बुद्धि, मिथ्याचारी अर्थात् दम्भी कहा जाता है।

—गीता अध्याय ३, श्लोक ६.

शान्त चित्त, भय रहित, ब्रह्मचर्य के व्रत में स्थित, मन

को वश में करके मेरे में लगे हुए चित्तवाला, मेरे परायण हुआ स्थित होवे।

—गीता, अध्याय ६. श्लोक १४.

बुद्धि, विशेषतः स्मरणशक्ति की दुर्बलता, दुराचारियों की मानसिक दुर्बलता का लक्षण है।

—डाकर लुइस.

भीष्मपितामह धर्म-पुत्र युधिष्ठिर से कहते हैं "हे राजन्! जो मनुष्य आजन्म पूर्ण ब्रह्मचारी रहता है, उसके लिये, इस संसार में, कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है जो वह न प्राप्त कर सके। एक मनुष्य चारों वेदों का जानने वाला है, और दूसरा पूर्ण ब्रह्मचारी है; इन दोनों में ब्रह्मचारी ही श्रेष्ठ है।"

—महाभारत

(४) शाहंशाह की अँगूठी—एक सलाहकारी मित्र
(वैराग्य की वृद्धि कीजिये)

एक वार परसिया में एक राजा राज्य करता था.
जिसके पास एक राजकीय अंगूठी थी,
उस पर एक विवेकयुक्त अनोखा सिद्धान्त खुदा हुआ था.
ज्यों ही वह उसे अपने नेत्रों के सामने लेता
त्यों ही वह उसे तत्काल एक
यथोचित, समयानुकूल सम्मति देती,
वे थे पवित्र शब्द और वे ये हैं,—
"यह भी गुज़र जायगा"
ऊँटों के काफिले रेतीले मैदानों से होकर,
समरकंद से उसके लिये बहुमूल्य रत्न लाती थी;
नौका समुदाय के द्वारा समुद्रों की राह से.

उसके लिये अनमोल मोती आते थे;
परंतु वह इस धन-निधिको तुच्छ ही समझता,
तथा उसको अपनी न जान कर कुछ भी महत्व नहीं देता;
वह तो केवल यही कहता "यह धन किस काम का है?"
"यह भी गुजर जायगा।"
अपने राज्यगृह में भोग-विलासावस्था में,
असीम आनंद के अवसर पर भी,
जब उसके अतिथि तथा मित्रवर्ग,
तालियाँ बजा कर दिल्लगी उड़ाते
वह यही कहता "ए मेरे प्यारे मित्रों!
सुख (भोग) आते हैं, पर सदा के लिये नहीं,
"यह भी गुज़र जायगा।"
अनुपम सुंदर स्त्री जो कभी देखने में न आई हो,
उसकी विवाहिता राज-रानी थी,
विवाह की सुख- शैया पर लेटे हुए भी,
उसने धीरे से अपनी आत्मा से कहा:—
यद्यपि किसी भी राजा ने आजतक,
ऐसी सुंदरी युवति का आलिंगन नहीं किया है,
तथापि यह मृतक शरीर केवल मिट्टी है-
"यह भी गुजर जायगा"।
भीषण रणक्षेत्र में युद्ध करते हुए,
एक बार शत्रुके भाले से उसका ढाल बिंध गया;
उच्चस्वर से विलाप करते हुए उसके सिपाही,
उसके रुधिर सिक्त शरीर को डेरे पर ले आये,
पीड़ा की वेदना के कारण विलाप करते हुए,
उसने कहा "पीड़ा असह्य है"
परंतु, धैर्य के साथ, धीर धीरे,

"यह भी गुजर जायगा"।
आम रास्ते पर एक मीनार में,
जो प्रायः बीस गज ऊँची थी;
उसकी एक पत्थर की मूर्त्ति प्रतिष्ठित थीं
राजाने एक दिन अज्ञात छिपेवेश में,
जब देखा अपने अंकित नाम को
तो विचार किया "कीर्ति क्या है" ?
यश भी शनैः शनैः नष्ट होने वाला है:-
"यह भी गुजर जायगा"।
पक्षाघात से ग्रस्त, अशक्त, वृद्ध वह राजा,
स्वर्णद्वारों पर प्रतीक्षा करता हुवा,
अपने अंतिम स्वास द्वारा कहने लगा,
"जीवन तो समाप्त हुवा, पर मृत्यु क्या है ?"
तब उसके उत्तर में,
उसकी अंगूठी पर एक प्रकाश पड़ा,
वह दिव्य प्रकाश यही बताता गया,
"यह भी गुजर जायगा"। —थियोडोर टिल्टन

(५) क्या स्त्रियों के लिये ब्रह्मचर्य आवश्यक है ?

प्रश्नः-वीर्य की उत्पति तथा उसके क्षय संबंधी सिद्धान्त जो पुरुषों को लागू होते हैं ? क्या वे ही सिद्धान्त स्त्रियों को भी लागू होते हैं ? क्या वे भी वास्तव में उसी प्रकार प्रभावित होती हैं जिस प्रकार कि मनुष्य ?

उत्तरः—आप का प्रश्न महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है। हाँ, मनुष्य की भाँति, मैथुन से स्त्री का शरीर शून्य होता है तथा उसकी शक्ति भी क्षीण होती है। नाड़ी मंडल पर भी उसका प्रभाव वास्तव में बहुत तीव्र पड़ता है। स्त्रियों के अंडाशयों (जो पुरुषों के तत्स्थानी होते हैं) में वीर्य

की भाँति, एक प्रकार की बहुमूल्य प्राण या जीव-शक्ति उत्पन्न होकर परिपक्व होती है। इस जीवन-शक्ति का नाम रज है। यद्यपि यह रज वास्तव में स्त्री के शरीर से बाहिर तो नहीं आता (जैसे कि पुरुष का वीर्य) तथापि मिथुन-क्रिया के कारण वह अंडाशय को छोड गर्भाधान की प्रक्रिया में नियुक्त होता है। गर्भवती स्त्री को जो पीड़ा होती है वह कोई नहीं जान सकता, क्योंकि कहा है "प्रसूति की पीड़ा प्रसूति ही जाने"। इस शक्ति के बार बार क्षीण होने तथा प्रसव पीड़ा के कारण सुडौल और स्वस्थ स्त्रियां भी अस्थि-पंजर बन जाती हैं। इस से उन के बल, रूप, लावण्य, यौवन तथा उनकी मानसिक शक्ति पर अति विनाशकारी प्रभाव पड़ता है। आंतरिक शक्तियों के क्षीण होने से तथा नैत्र, में चमक नहीं रहती नेत्र-दृष्टि कम होजाती है।

विषय-भोग की इंद्रियजन्य तीव्र उत्तेजना के कारण नाड़ी मंडल प्रभावित थोता है तथा दुर्बलता आ जाती है स्त्रियों के शरीर अधिक कोमल और लचीले होने के कारण, उन पर प्रायः पुरुषों से भी अधिक बुरा प्रभाव पड़ता है उन्हें भी चाहिये कि वे अपनी बहुमूल्य शक्ति को क्षीण न होने दे।

अंडाशयों से स्रावित जो रजादि रस हैं वे स्त्रियों की शारीरिक और मानसिक पुष्टि के लिये अत्यंत आवश्यक हैं।

(६) उत्पत्ति अवरोध (जन्म-निरोध) की विधि

माहात्मा गांधी जी अपने "हरिजन" में लिखते हैं:-

आज हमारे समाज में ऐसी कोई भी बात नहीं है जो हमें जन्म-निरोध की विधि की ओर प्रवृत्त करे। हमारी प्रारंभिक शिक्षा ही उसकी विरोधी है। आजकल माता

पिताओं का मुख्य कर्तव्य यही होता है कि वे अपने बच्चों का जैसे तैसे ही विवाह कर दें ताकि वे शशकों की भांति संतानोत्पत्ति कर कुल वृद्धि करते रहें। यदि वे कन्याए हैं तो शीघ्राति शीघ्र विवाह दी जाती हैं चाहे उन की धार्मिक शिक्षा कैसी ही क्यों न हो। आजकल की विवाहोत्सव-विधि एक दीर्घ संताप है जिस में केवल अच्छे भोजन तथा निरर्थक व्यापार के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। गृहस्थी का जीवन भूत पूर्व जीवन ही के आधार पर निर्धारित है। वह आत्म भोग-विलास का विस्तार है। छुट्टियाँ तथा आनंदोपभोगों के सामाजिक त्योहार भी ऐसे बनाये गये हैं जिन में विषयी जीवन-यापन करने में निरत होने की अधिकाधिक संभावना रहती है। शिक्षा ही ऐसी दी जाती है जो मनुष्य को पशु जीवन की ओर ले जाने में सहायता प्रदान करती है। अधिकतम अर्वाचीन शास्त्र-ज्ञान-प्रणाली के अनुसार विषय भोग करता कर्तव्य है तथा उस से परे रहना पाप है।

आत्मनिग्रह की विधि

इस में कोई आश्चर्य नहीं कि कामवासना पर विजय प्राप्त करना एक प्रकार का असंभव सा होगया है।

तब यदि आत्म-निग्रह के द्वारा जन्मनिरोध की विधि को एक श्रेष्ठ, युक्त और दोष रहित विधि मानले तो हमारे लिये अपने सामाजिक आदर्श तथा वातावरण में परिवर्तन करना आवश्यक होगा। इसके लिये एक मात्र सरल मार्ग यही है कि प्रत्येक व्यक्ति (जो आत्म नियंत्रण के सिद्धान्त में विश्वास रखता हो) अथक श्रद्धा के साथ प्रथम अपने आप में ही आरंभ करे ताकि आस पास के लोगों में उस का

प्रभाव पड़े। उनके लिये फिर विवाह संबंधी विचार (जिसके विषय में मैं पिछले सप्ताह में पूर्णतः प्रकाश डाल चुका हूँ) एक महत्व पूर्ण कार्य बन जायगा। इस युक्ति को उचित रीतिसे समझलेने पर पूर्णतः मानसिक परिवर्तन हो सकता है। इस को केवल कुछ इने गिने व्यक्ति विशेषों के लिये ही नहीं समझना चाहिये। यह नियम मनुष्य जाति के लिये प्रस्तुत किया गया है। इस नियम के भंग करने से सामाजिक स्थिति का पतन होकर, अनिच्छित संतान व नये रोगों की वृद्धि तथा धार्मिक जीवन का ह्रास होगा। यह निश्चय है कि गर्भावरोध के कृत्रिम विधान से जन-संख्या-वृद्धि में तो कुछ सीमा तक कमी होती है, परंतु धार्मिक अनर्थ जो उससे व्यक्तिगत तथा समाज को होता है, वह अगणनीय है। हाँ, यह बात तो अवश्य है कि जो मनुष्य काम वासना को संतुष्ट करना ही जीवन का उद्देश्य समझते हैं, उन के लिये तो जीवन का सर्वथा पट परिवर्तन हो जाता है उन के लिये विवाह एक धर्म-संस्कार नहीं रहता। इस का अर्थ तो हमारे बहुमूल्य सामाजिक सिद्धान्तों का मूल्य घटाना है। यह निश्चय है कि इस तर्क वितर्क से उन लोगों पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ेगा जो हमारे विवाह संबंधी पुराने सिद्धान्तों को मिथ्या समझते हैं। मेरा उक्त कथन केवल उन्हीं लोगों के लिये है जो कि स्त्री को भोग विलास की वस्तु न समझ कर उसको, पवित्र वंश-वर्धक मातृ रूप में गणना करते हैं।

अन्य उपाय निरथक

उपर्युक्त सिद्धान्त जो मैंने आपको बताया है वह मेरा तथा मेरे कुछ एक मित्रों का अनुभव सिद्ध है। इसका

विवाह के पुराने विचारों के अविष्कार से भी समर्थन होता है। जहाँ तक मेरा विचार है, विवाहित जीवन में ब्रह्मचर्य धारण करने से ब्रह्मचर्य अपनी स्वभाविक स्थिति को ग्रहण करेगा तथा विवाह की यथार्तता को भी सरल बना देगा। जन्म निरोध के अन्य उपाय सब निरर्थक हैं। एक बार जब स्त्री-पुरुषों के यह बात अच्छी प्रकार से समझ में आ गई कि भोग-इंद्रिय का मुख्य कार्य संतानोत्पत्ति ही है तो फिर वे अन्यथा प्रसंग कर अपने वीर्य तथा बहुमूल्य शारीरिक व मानसिक शक्ति को नष्ट करना एक प्रकार का पाप समझने लगेंगे। अब यह समझना सरल है कि हमारे प्राचीन वैज्ञानिकों ने वीर्य को इतना महत्व क्यों दिया है तथा क्यों उसको, समाज के हित के लिये ओज शक्ति में परिणत करने पर इतना जोर दिया है। उनकी यह घोषणा है कि जिसने अपनी जननेन्द्रिय पर पूर्णतः विजय प्राप्त की है, वही शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्ति को प्राप्त कर अन्य सब अप्राप्य सिद्धियों को प्राप्त करता है।

उत्कंठाओं के द्वारा अज्ञान पूर्वक काम के वशीभूत हो जाते हैं। मनुष्य को प्रभावित करने वाली सारी लालसाओं पर विजय प्राप्त करना ही सफलता प्राप्त करने का वास्तविक उद्योग है। जब कि साधारण पुरुष व स्त्री द्वारा ब्रह्मचर्य प्राप्त करना असंभव नहीं है तथापि इससे यह नहीं समझना चाहिये कि उसमें कुछ कम पुरुषार्थ की आवश्यकता है; नहीं नहीं, उस में तो उस से भी अधिक पुरुषार्थ की आवश्यकता है जो पुरुषार्थ कि एक साधारण विद्यार्थी किसी विज्ञान (विद्या) में पूर्णत्व प्राप्त करने के लिये निष्कपट हृदय से करता है। यहाँ, ब्रह्मचर्य की प्राप्ति से तात्पर्य है जीवन-विज्ञान पर प्रभुत्व प्राप्त करना।

—:o:—

ब्रह्मचर्य साधना

(द्वितीय भाग)

ब्रह्मचर्य

"यदि लैंगिक ग्रन्थियों का स्राव जारी है तो या तो उसको बाहर निकल जाना चाहिये अथवा शरीर में ही पच जाना चाहिये। वीर्य स्रावों के पाचन से तथा पुनः शरीर में मिल जानेसे रुधिर का पोषण होता है तथा मस्तिष्क शक्ति मजबूत होती है।" डा० डियो लिविस ने बतलाया कि इस तत्व का पाचन मन की शक्ति तथा बुद्धि की तीव्रता के लिये आवश्यक है। दूसरा लेखक डा० ई० पी० मिलर लिखते हैं वीर्य ग्रन्थियों के स्राव से चाहे वे

ऐच्छिक हों अथवा अनैच्छिक प्राण शक्ति का व्यय होता है। यह सर्व मान्य है कि रुधिर के सारे बहुमूल्य तत्व वीर्य में पाये जाते हैं। यदि यह सत्य है तो यह सिद्ध हो जाता है कि पवित्र जीवन मनुष्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है।"

कार्य सिद्धि करने के लिये ब्रह्मचर्य ही नींव है

पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। यह बहुत ही आवश्यक है। योग के अभ्यास से वीर्य ओजस् शक्ति में परिणत हो जाता है। ओजस् शक्ति की वृद्धि के द्वारा सारे जीव-कोष शक्ति तथा पोषण प्राप्त करते हैं। ब्रह्मचर्य, प्राणायाम, शीर्षासन तथा अन्य हठयौगिक क्रिया के द्वारा और ध्यान के द्वारा सारे शरीर का नव निर्माण होता है। हर जीव-कोष को नूतन बल, वीर्य तथा स्फूर्ति प्राप्त होते हैं। योगी को पूर्ण शरीर की प्राप्ति होती है। उसकी गति में आकर्षण तथा लावण्य रहता है। वह जब तक चाहे जी सकता है (इच्छा मृत्यु)। यही कारण है कि भगवान श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं—"तस्मात् योगी भवार्जुन—इसलिये हे अर्जुन तू योगी बनजा।"

ब्रह्मचर्य का महत्व

"ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत"—वेदों की यह घोषणा है कि ब्रह्मचर्य तथा तपस्या के द्वारा देवताओं ने मृत्यु पर भी विजय पाली है। हनुमान जी महावीर कैसे हो गये? ब्रह्मचर्य के अस्त्र के द्वारा ही उन्होंने अपूर्व शक्ति तथा बल की प्राप्ति की थी। पाण्डव तथा कौरवों के पितामह महान् भीष्म ने भी ब्रह्मचर्य के द्वारा ही मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। लक्ष्मण जी भी ब्रह्मचारी ही थे जिन्होंने

रावण के पुत्र तीनों लोकों के विजेता, अजेय, मेघनाद का संहार किया था। यहां तक कि भगवान राम भी मेघनाद का संहार न कर सके। ब्रह्मचर्य के द्वारा ही लक्ष्मण जी मेघनाद को पराजित कर सके थे। पृथ्वीराज की महानता तथा वीरता का कारण भी ब्रह्मचर्य ही था। इन तीनों लोकों में कोई भी वस्तु इस तरह की नहीं है जो कि ब्रह्मचर्य के बल से प्राप्त न की जा सकती हो। प्राचीन काल के मुनिगण ब्रह्मचर्य के मूल्य को भली प्रकार से जानते थे और यही कारण है कि उन लोगों ने अत्यन्त सुन्दर श्लोकों में ब्रह्मचर्य की स्तुति गाई है।

श्रुति घोषित करती है—"नायमात्मा बलहीनेन लभ्य- —यह आत्मा बल हीनों को प्राप्य नहीं है।" गीता में आप पायेंगे—यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यम् चरन्ति—जिसके लिये ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं" अध्याय ७–११। "त्रिविधम् नरकस्येदम् द्वारं नाशानमात्मनः काम क्रोधस्तथा लोभस्तस्मातेत्त्रयम् त्यजेत्—हे अर्जुन! नरक के तीन द्वार हैं, जो आत्मा के नाशक हैं: वे हैं काम, क्रोध तथा लोभ मनुष्य को इन तीनों का परित्याग करना चाहिए।" "जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपम् दुरासदम्" ब्रह्मचर्य के पालन के द्वारा इस महाशत्रु को मार डालिये।

योग दर्शन में भी ब्रह्मचर्य पर बहुत बल डाला गया है। देखिये संहिता क्या कहती है—"मरणम् विन्दु पातेन जीवनम् विन्दु धारणात्" शरीर से वीर्य पात होने पर मृत्यु निकट आती है तथा शरीर में इसके पच जाने से जीवन की रक्षा होती है तथा दीर्घायु प्राप्त होती है! अतः बड़ी सावधानी से इसकी रक्षा करनी चाहिये। "जायते म्रियते लोके विन्दुना नात्र संशय, एतत् ज्ञात्वा सदा [illegible]

विन्दु धारणम् आचरेत्—इसमें सन्देह नहीं कि लोग वी को धारण करके जीते तथा दीर्घायु प्राप्त करते हैं तथा वीर्य क्षय से अकाल मृत्यु को पाते हैं। ऐसा जानकर योगी को सदा अपने वीर्य की रक्षा करनी चाहिये। उसको अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये।"

योरप के विद्वान डाक्टर भी भारत के योगियों का समर्थन करते हैं। डा० लुई कहते हैं—"सारे शरीर विशेषज्ञ इस बात से सहमत हैं कि रुधिर के सर्वोत्तम अंश से वीर्य की उत्पत्ति होती है!" डा० निकोल का कहना है कि "यह औषधीय तथा शारीरिक सत्य है कि रुधिर के सर्वोत्तम अंश से प्रजनन तत्वों का निर्माण होता है। शुद्ध जीवन में इन तत्वों का पुनर्पाचन हो जाता है। यह रुधिर प्रणाली में पुनः पचकर सूक्ष्म मस्तिष्क, स्नायु तथा मांस पेशियों का निर्माण करता है। वीर्य के पुनः पच जाने से मनुष्य बली, वीर्यवान, उत्साही तथा वीर बनता है। इसके क्षय से वह पुरुषत्व हीन, दुर्बल, कमजोर, कामोत्तेजन की प्रवृत्ति, दुर्बल स्नायु; मृगी, अन्यान्य व्याधियां तथा मृत्यु का भी शिकार हो जाता है। प्रजनन अंगों के निरोध से मानसिक तथा आध्यात्मिक बल की प्राप्ति होती है।" सेंट पाल तथा सर आइज़क न्यूटन के नैतिक चरित्र की ओर इंगित करते हुये डाक्टर लुई कहते हैं—"बुद्धि की कमजोरी विशेष कर स्मृति की दुर्बलता इस बात को परिलक्षित करती है कि मनुष्य ने विषय परायणता के कारण मनः शक्ति का ह्रास कर डाला है।" चौबीस वर्षों तक का ब्रह्मचर्य अधम, छत्तीस वर्षों तक का ब्रह्मचर्य मध्यम है तथा अड़ता-लीस वर्षों तक का ब्रह्मचर्य उत्तम है। "पुरुषभाव चतु-र्विंशति वर्षाणि"—वेदों के अनुसार चौबीस वर्षों तक ब्रह्म-

चर्य का पालन करना चाहिये। ५५ या साठ वर्षों तक गृहस्थ धर्म का पालन करना चाहिये। "पंचाशोर्ध्वं वनं व्रजेत" पचास वर्ष की आयु के बाद आर्य को परमात्मा की खोज में तपोवन जाना चाहिये। ७५ वर्ष की आयु तक वाणप्रस्थ का जीवन बिताना चाहिये। तथा उसके बाद मृत्यु पर्यन्त भिक्षु अथवा संन्यास धारण करना चाहिये।

आजकल बच्चों के भी बच्चे होते हैं। बालविवाह द्वारा भौतिक विगठन तथा वीर्यनाश हो चला है। बुद्धि के अभिमानी मनुष्य को पक्षियों तथा जानवरों से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। सिंह, हाथी तथा अन्य शक्ति शाली जानवरों में मनुष्य से कहीं अधिक आत्म-संयम है। सिंह साल में एक बार ही मैथुन करते हैं। गर्भ धारण के पश्चात् स्त्री जाति के जानवर पुरुष जाति के जानवरों के तब तक पास में नहीं आने देते जब तक कि उनके बच्चे पुष्ट नहीं हो जाते। वे स्वयं भी स्वस्थ नहीं हो जातीं। मनुष्य ही प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करता है तथा फलतः अनेकानेक रोगों का शिकार बन जाता है। वह जानवरों से भी निचले स्तर में आ गिरा है। आहार, निद्रा, भय तथा मैथुन—ये तो जानवरों तथा मनुष्यों में समान हैं। मनुष्य अपनी विचार शक्ति के कारण ही जानवरों तथा अपने में भेद रखता है। यदि उसमें विचार शक्ति नहीं है तो वह भी जानवर ही है।

पश्चिम के प्रख्यात डा० बतलाते हैं कि वीर्य क्षय से विशेष कर युवावस्था में, बहुत से रोग पैदा होते हैं—शरीर में घाव, चेहरे पर फुंसियां, आंखों के चारों ओर नीली धारियां, दाढ़ी का अभाव, गड्ढी आंखें, पीला चेहरा,

रुधिर की कमी, स्मृति की कमी, नेत्र दृष्टि की कमी, मूत्र के साथ वीर्य का पतन, अण्डकोषों की वृद्धि, अण्डकोष में दर्द, दुर्बलता, निद्रा, आलस्य, उदासी, हृदय-कंप, स्वांस में कठिनाई, यक्ष्मा, पीठ तथा कमर आदि में दर्द, चंचल मन, विचार शक्ति की कमी, बुरे स्वप्न, स्वप्नदोष तथा मानसिक अशांति। यदि गृहस्थ जीवन में भी ब्रह्मचर्य का पालन करे तथा वंश के लिए ही मैथुन करे तो उसकी सन्तान स्वस्थ, बुद्धिमान, मजबूत, सुन्दर तथा आत्मत्यागी होगी। प्राचीन भारत के तपस्वी तथा संरक्षक जन विवाहित होने पर लोगों के समक्ष ब्रह्मचर्य का आदर्श रखते थे। किस तरह से गृहस्थाश्रम में ही ब्रह्मचर्य का पालन किया जा सकता है। हमारे पूर्वज उन ऋषियों का अनुगमन कर राष्ट्र-रक्षा के लिए ही सन्तानोत्पत्ति करते थे। जो लोग श्रीमद्भागवत् पढ़ते हैं उन्हें यह ज्ञान होगा कि किस तरह कर्दम ऋषि द्वारा देवहूति ने कपिल मुनि जैसे पुत्र को पाया था। पराशर ने मत्स्यगंधा से व्यास को जन्म दिया।

भारतीयों की औसत आयु २२ वर्ष की है जब कि योरप वासियों की ५० की है। मातृभूमि भारत के सभी शुभेच्छुओं को चाहिए कि वे इस चिन्ताजनक स्थिति का विचार कर इसका उचित उपचार करने में प्रयत्नशील हों। प्रचार कार्य के द्वारा विद्यार्थियों तथा गृहस्थियों में ब्रह्मचर्य को पुनः स्थापित करना चाहिए। भारत का भविष्य पूर्णतः ब्रह्मचर्य पर ही है। संन्यासियों तथा योगियों का कर्त्तव्य है कि वे लोगों को ब्रह्मचर्य की शिक्षा दें। आसन, प्राणायाम तथा आत्मज्ञान का प्रचार करें। इस परिस्थिति को सुधारने की ओर वे बहुत कुछ कर सकते हैं। क्योंकि उनके पास पर्याप्त समय है। उनको चाहिए

कि वे गुहाओं तथा कुटीरों से निकल लोक संग्रह के कार्यों में लग जायं। उन्हें मायावाद को थोड़ा कम कर देना चाहिये। अब उनके लिए 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' हो जाना चाहिए।

माता पिता, संरक्षक, शिक्षक तथा शिक्षक सबों का यह कर्त्तव्य है कि वे राष्ट्र निर्माण के लिये स्वयं ब्रह्मचर्य का पालन करें तथा अपने कुमार बच्चों को भी ब्रह्मचर्य का ज्ञान करावें। हमारे प्राचीन ऋषि तथा मुनियों ने ब्रह्मचर्य के महत्त्व पर बल दिया था। भगवान श्री कृष्ण ही कहते हैं "योग मार्ग पर चलने वाले को शान्त चित्त अभय तथा ब्रह्मचर्य में दृढ़ रहना चाहिए।" गीता (६-१४) पुनः वे जोर देकर कहते हैं : उन सबों को जो कि अपना लक्ष्य प्राप्त करना चाहते हैं ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहिए। (गीता ८-११) जब तक आप काम को वशीभूत कर ब्रह्मचर्य में स्थिर नहीं होंगे तब तक आपके लिए आध्यात्मिक मार्ग में प्रवेश पाना तथा आत्म-साक्षात्कार करना असंभव ही रहेगा। यदि हमारी मातृभूमि दूसरे राष्ट्रों की दृष्टि में ऊँचा स्थान पाना चाहती है तो उसके हर बच्चे, नर तथा नारी ब्रह्मचर्य का पाठ पढ़ें। इसके साथ ही साथ वे पूर्ण ब्रह्मचर्य का भी पालन करें। उनको चाहिए कि वे इस व्रत के महत्व को समझ लें। शिक्षा की कोई भी प्रणाली, जिसमें कि संस्कृत साहित्य का अध्ययन अनिवार्य नहीं है तथा जो ब्रह्मचर्य के सिद्धांतों पर आधारित नहीं हैं हिन्दुओं के लिए किसी काम की नहीं है तथा उसकी विफलता निश्चित ही है। जो लोग शिक्षा विभाग के निर्माता हैं वे इस अंग से पूरी तरह अनभिज्ञ ही हैं। यही कारण है कि आजकल शिक्षा में

बहुत से गलत प्रयोग भी हो रहे हैं।

ब्रह्मचर्य की परमावश्यकता

मनसा वाचा कर्मणा शुद्धता का व्रत ही ब्रह्मचर्य है जिससे मनुष्य आत्मसाक्षात्कार या ब्रह्म को प्राप्त करता है। यह केवल जननेन्द्रियों का ही निग्रह नहीं वरन् सभी इन्द्रियों का मन, कर्म तथा वचन से निग्रह है। पूर्ण ब्रह्मचर्य ही निर्वाण का द्वार है। पूर्ण ब्रह्मचर्य की कुंजी के द्वारा ही नित्य सुख का द्वार खुलता है। परम शान्ति के धाम का मार्ग ब्रह्मचर्य अथवा पूर्ण शुद्धता से आरम्भ होता है।

काम का गुलाम होकर मनुष्य ने अपने को पतन के गर्त्त में डाल दिया है। कितने खेद की बात है कि वह यंत्रवत् बन बैठा है! उसने विवेक बुद्धि को खो दिया है। वह गुलामी में जा गिरा है। कितनी दयनीय दशा है! यदि वह अपनी दिव्यावस्था को पुनर्प्राप्त करना चाहता है तो काम-वृत्ति का पूर्णतया रूपांतरण होना चाहिए। दिव्य विचारों तथा ध्यान के द्वारा काम की वृत्ति का रूपांतरण करना चाहिए। नित्य सुख की प्राप्ति के लिए काम-वृत्ति का रूपांतरण बहुत ही शक्तिशाली, प्रभावशाली तथा उपयुक्त तरीका है।

ब्रह्मचर्य तो योग की नींव है। जिस प्रकार कमजोर नींव पर खड़ी की गई इमारत एक न दिन अवश्य ही गिर जायगी उसी प्रकार आपने यदि पूर्ण ब्रह्मचर्य के ऊपर ध्यान की इमारत खड़ी नहीं की है तो निश्चय ही आपका पतन होगा। आप बारह वर्षों तक ध्यान का अभ्यास कर सकते हैं परन्तु फिर भी आपको समाधि में सफलता

नहीं मिल सकती—यदि आपने अपने हृदय की कामवासना को विनष्ट नहीं किया। आपको बड़ी सावधानी के साथ हृदय के हर कोने में इस दुष्ट काम शत्रु की खोज करनी होगी। जिस प्रकार से लोमड़ी झाड़ियों के पीछे छिप जाती है उसी प्रकार काम भी हृदय के कोने में छिपा रहता है। यदि आप सावधान रहें तो आप इसको पहचान सकते हैं। उग्र आत्म निरीक्षण अत्यन्त आवश्यक है। बल-शाली शत्रुओं को चारों ओर से आक्रमण के द्वारा ही आप जीत सकते हैं उसी प्रकार शक्तिशाली इन्द्रियों के पर विजय पाने के लिए आपको चारों ओर से—अन्दर से, बाहर से, ऊपर से, नीचे से आक्रमण करना होगा।

आप इस भ्रम में न पड़िये कि थोड़ा सात्त्विक भोजन, प्राणायाम का अभ्यास तथा थोड़ा जप के द्वारा आपने काम-वृत्ति का दमन कर लिया है और अधिक कुछ करने के लिए नहीं बचा है। किसी भी समय प्रलोभन अथवा मार आपको अपना शिकार बना सकते हैं। नित्य साव-धानी तथा उग्र साधना की आवश्यकता है। सीमित प्रयास के द्वारा आप पूर्ण ब्रह्मचर्य को नहीं पा सकते। जिस प्रकार शक्तिशाली शत्रु को मारने के लिए मशीनगन की आव-श्यकता है उसी प्रकार इस शक्तिशाली कामशत्रु को परास्त करने के लिए सतत तथा उग्र साधना की आवश्यकता है। ब्रह्मचर्य में अल्प सफलता के द्वारा मिथ्या तुष्टि न लाइये। थोड़ी सी ही सफलता में अभिमान से न फूलिये। यदि आपकी जांच की गई तो आप बुरी तरह से विफल होंगे। सदा अपने दोषों से अवगत रहिए। उनको विनष्ट करने के लिए सदा प्रयत्न शील रहिये। सर्वोच्च प्रयास की आव-श्यकता है। तभी आप इस दिशा में आशातीत सफलता

को प्राप्त कर सकते हैं।

जंगली बाघ, सिंह या हाथी को पालतू बना लेना आसान है। अजगर तथा सर्प के साथ खेलना आसान है। अग्नि को निगलना तथा सागर को सोख जाना आसान है। हिमालय को उखाड़ देना आसान है। संग्राम क्षेत्र में विजयी होना आसान है। परन्तु काम-वृत्ति का दमन करना कठिन है। ईश्वर, उसके नाम तथा उसकी कृपा में विश्वास रखिये। ईश्वरीय कृपा के बिना मन से काम-वृत्ति का पूरी तरह उन्मूलन नहीं हो सकता। यदि आपको ईश्वर में श्रद्धा है तो आपको सफलता अवश्य मिलेगी। तब आप पल मात्र में ही काम को विनष्ट कर सकते हैं। ईश्वर गूंगे को वाचाल बना देता है, पंगु को पर्वत पर चढ़ने लायक बना देता है। मात्र मानवी प्रयास ही पर्याप्त नहीं है। ईश्वरीय कृपा की आवश्यकता है। ईश्वर भी उनकी ही सहायता करता है जो स्वयं अपनी सहायता करते हैं। यदि आप पूर्ण आत्मार्पण कर दें तो स्वयं जगज्जननी आप के लिये साधना करेंगी।

इन्द्रिय बहुत ही उपद्रवी हैं। उपवास, आहार-संयम, प्राणायाम; जप, कीर्तन, ध्यान, 'मैं कौन हूं'? का विचार, प्रत्याहार, आसन, दम, बन्ध, मुद्रा, मनोनिग्रह, वासनाक्षय आदि कई तरीकों से उसका निग्रह करना चाहिये।

पेटू व्यक्ति कभी भी ब्रह्मचारी नहीं हो सकता। यदि आप ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहते हैं तो आपको चाहिए कि आप अपनी जिह्वा पर पूर्ण नियन्त्रण रखें। जिह्वा का जननेन्द्रिय से निकट सम्बन्ध है। जिह्वा ज्ञानेन्द्रिय है। यह जल तन्मात्रा के सात्विक अंश से उत्पन्न है। जननेन्द्रिय कर्मेन्द्रिय है। यह जल तन्मात्रा के राजसिक

अंश से पैदा होता है। उन दोनों का मूल एक ही है। यदि राजसिक अन्न के द्वारा जिह्वा उत्तेजित हुई तो साथ ही जननेन्द्रिय भी उत्तेजित हो जाती हैं। आहार में चुनाव तथा संयम रखना चाहिए। ब्रह्मचारी का भोजन सरस, पौष्टिक, मसाला रहित, अनुत्तेजक तथा अनुद्दीपक होना चाहिए। भोजन में संयम अत्यन्त आवश्यक है। अति भोजन अत्यन्त हानिकारक है। फल खाना लाभदायक होता है। आपको तभी खाना चाहिए जब कि आप वास्तव में भूखे हों। कभी कभी पेट आपको धोखा देगा। आपको झूठी भूख लगी होगी। जब आप खाने के लिए बैठेंगे तो आपको रुचि नहीं रहेगी। ब्रह्मचर्य के लिए आहार संयम तथा उपवास बहुत ही आवश्यक है। इनको कम न समझिये।

ब्रह्मचर्य का व्रत प्रलोभनों से आपकी रक्षा करेगा। यह काम को नष्ट करने के लिए शक्तिशाली अस्त्र है। यदि आप पूर्ण ब्रह्मचर्य का व्रत न ले लें तो मार आपको कभी भी प्रलोभन का शिकार बना सकता है। आपके अन्दर प्रलोभन पर संवरण करने की शक्ति नहीं रह जायगी। जो दुर्बल है वह व्रत लेने से डरता है। वह कहता है "मैं व्रत के अधीन क्यों रहूँ? मेरा संकल्प शक्तिशाली है। मैं किसी भी प्रलोभन का संवरण कर सकता हूँ। मैं उपासना कर रहा हूँ। मैं संकल्प बल का अर्जन कर रहा हूँ।" उसको बाद में पछताना पड़ता है। उसको इन्द्रियों के ऊपर वश नहीं रहता। वही मनुष्य झूठ मूठ का बहाना करता है जिसके हृदय में काम की सूक्ष्म वृत्ति बनी हुई है। आपको विवेक, वैराग्य तथा सन्मति होनी चाहिए। तभी आपका संन्यास स्थाई तथा शाश्वत रहेगा। यदि विवेक

तथा वैराग्य द्वारा आपका संन्यास उत्पन्न नहीं हुआ है तो आपका मन सदा उन वस्तुओं को प्राप्त करने की ताक में बैठा रहेगा जिनका कि उसने संन्यास नहीं किया है।

यदि आप कुछ दुर्बल हैं तो पहले एक महीने के लिए ब्रह्मचर्य का व्रत लीजिए। फिर उसको तीन महीने के लिए बढ़ा लीजिए। अब आपको कुछ ताकत मिल जायगी और आप उसको छः महीने तक के लिए बढ़ा लेंगे। धीरे धीरे आप व्रत को बढ़ाकर एक वर्ष, दो वर्ष तथा तीन वर्ष तक के लिए ले जायेंगे। अलग अलग सोइये। नित्य ही जप, कीर्तन तथा ध्यान का अभ्यास कीजिए। आप काम से घृणा करने लग जायेंगे। आप स्वतन्त्रता का अवर्णनीय सुख अनुभव करेंगे। आपकी स्त्री को भी नित्य, कीर्तन, जप पूजा तथा ध्यान करना चाहिए।

वह ब्रह्मचारी धन्य है जिसने आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत ले लिया हो। वह ब्रह्मचारी और अधिक धन्य है जो काम-वृत्ति के उन्मूलन के लिए सच्चाई के साथ प्रयत्नशील है। वह ब्रह्मचारी तो सब से अधिक धन्य है जिसने काम का दमन कर आत्म-साक्षात्कार को प्राप्त कर लिया है। वे तो इस पृथ्वी पर देवता ही हैं। उनके आशीर्वाद आप सबों को प्राप्त हों।

ब्रह्मचारियों को उपदेश

एक साधक कहता है "जैसे ही मैं ध्यान के लिए बैठता हूँ, मेरे मन से मल की परतें एक एक कर आती हैं। कभी कभी तो यह इतना शक्तिशाली होता है कि मैं यह नहीं जान ता कि मैं क्या करूं ? मैं सत्य तथा ब्रह्मचर्य में पूर्णतया स्थित नहीं हूँ। झूठ बोलने की पुरानी आदत अभी भी

मेरे मन में बैठी हुई है। काम मुझको अधिक कष्ट दे रहा है। स्त्री का विचार आते ही मेरा मन अधिक उद्विग्न हो जाता है। ज्यों विचार आता है त्यों ही काम के सारे संस्कार प्रगट हो जाते हैं। ज्यों ही ये विचार मेरे मन में आते हैं त्यों ही ध्यान तथा सारे दिन की शान्ति का अपहरण हो जाता है। मैं मन को समझाता हूँ, उसे डराता हूँ, धमकाता हूँ परन्तु कोई फल नहीं। मेरा मन उपद्रव कर बैठता है। मैं नहीं जानता कि काम को किस प्रकार से वशीभूत करूं। चिड़चिड़ापन, अभिमान, क्रोध, लोभ, घृणा, राग इत्यादि अब भी मेरे में बैठे हुए हैं। मेरी समझ में काम ही मेरा मुख्य शत्रु है। यह बहुत सबल ही है। मैं प्रार्थना करता हूँ कि कृपया इस शत्रु को नष्ट करने के आप कुछ उपाय बतलावें।"

जब चित्त से मल बल पूर्वक निकलने लगें तो उसको बलपूर्वक दबाइये नहीं। इष्ट मन्त्र का जप कीजिए। अपने दोषों का अधिक चिंतन न कीजिये। अन्तर्निरीक्षण के द्वारा अपने दोषों को जान लेना ही पर्याप्त है। दोषों पर आक्रमण न कीजिए। वे और भी प्रबल हो जायेंगे। "मुझमें बहुत दोष हैं" इस तरह का चिंतन न कीजिए। धनात्मक विचार का ऋणात्मक विचार के ऊपर सदा विजय होती है। सात्विक सद्गुणों का अर्जन कीजिये। प्रतिपक्ष भावना के द्वारा सारे दुर्गुणों को नष्ट किया जा सकता है। यही उचित तरीका है।

सतत ध्यान तथा आत्म चिंतन के द्वारा काम दूर हो जायगा। महिलाओं से दूर भागने की कोशिश न कीजिये। तब माया भी आपके पीछे पड़ जायगी। सभी रूपों में अपनी ही आत्मा को देखने की कोशिश कीजिए।

इस मन्त्र "ओ३म् सच्चिदानन्द आत्मा" का जप कीजिए। याद रखिये आत्मा-लिंग रहित है। इस मन्त्र के मानसिक जप के द्वारा आपको शक्ति मिलेगी।

अभ्यास के प्रारम्भ में आपको महिलाओं से तथा महिलाओं को पुरुषों से दूर रहना चाहिये। जब आप ब्रह्मचर्य में संस्थित होगये हैं तो सावधानी के साथ महिलाओं से मिलिये तथा अपने बल की जांच कीजिये। यदि आपका मन अब भी बहुत शुद्ध है, यदि मन में आकर्षण तथा उत्तेजन नहीं है, यदि लैंगिक विचार नहीं हैं, यदि उपरति, शम तथा दम के द्वारा मन काम नहीं करता तो आपने वास्तव में ही आध्यात्मिक बल का अर्जन कर लिया है, आपकी साधना में काफी उन्नति हुई है। अब आपको कोई भी डर नहीं है। अपने को जितेन्द्रिय योगी समझकर अपनी साधना को बन्द मत कर दीजिये। यदि आप साधना को बन्द कर देते है तो आपका पतन होगा। आप माहन् योगी तथा जीवन्मुक्त ही क्यों न हों, सांसारिक लोगों से मिलते समय बहुत सावधान रहिये।

आत्म साक्षात्कार के मार्ग पर चलने वाले साधकों को, जो गृहस्थाश्रम में हैं, तथा जिनकी आयु ५० वर्ष की है, उन्हें चाहिये कि वे ६ महीने के लिये एक बार अपने पति या पत्नी से सारा सम्पर्क दूर रखें। उनको पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। तभी वे इस जन्म में आत्म साक्षात्कार को प्राप्त कर सकते हैं। आध्यात्मिक मार्ग में अधूरी साधना को स्थान नहीं है।

ब्रह्मचारियों को पथ-प्रदर्शन

आप महीनों तथा वर्षों तक लैंगिक सम्बन्धों को रोक

सकते हैं, परंतु आपमें स्त्रियों के प्रति काम-वृत्ति तथा आकर्षण भी नहीं रहने चाहिये। स्त्रियों के साथ रहने पर भी आपके अन्दर बुरे विचार नहीं आने चाहिये। यदि इस दिशा में आपको सफलता मिल गई है तो आप पूर्ण ब्रह्मचर्य में संस्थित होगये हैं। आप खतरे के कटिबन्ध को पार कर गये हैं। स्त्रियों की ओर देखने में कोई हानि नहीं है परंतु दृष्टि में शुद्धता होनी चाहिये। आपमें आत्मभाव होना चाहिये। युवती स्त्री की ओर देखते समय ऐसा अनुभव कीजिये कि "हे मां जगज्जननी आपको नमस्कार है। आप सबों की मां हैं। मुझे प्रलोभन में न डालिये। मैंने माया के सारे रहस्यों का समझ लिया है।" इन नाम रूपों के परे सर्वशक्तिशाली करुणामय भगवान है। यह सब नश्वर है। ईश्वर सौन्दर्यों का सौन्दर्य है। वह अक्षय सौन्दर्य का स्वरूप है। वह सौन्दर्य का स्रोत है। सतत ध्यान के द्वारा मैं उस सौन्दर्यों के सौन्दर्य का साक्षात्कार करूंगा।" जब भी किसी सुन्दर रूप को आप देखें तो आपमें भक्ति तथा स्तुति की भावना जाग्रत होनी चाहिये। आपको उस रूप के स्रष्टा का स्मरण हो आना चाहिये। तब आप किसी भी प्रलोभन में न पड़ सकेंगे। यदि आप वेदान्त के साधक हैं तो ऐसा विचार कीजिये कि सब कुछ आत्मा ही है। नाम रूप भ्रामक हैं। वे माया के द्वारा उत्पन्न होते हैं। आत्मा के अतिरिक्त उनका अपना अलग अस्तित्व नहीं हैं।

साधकों को स्त्री सम्बन्धी बातें नहीं करनी चाहिये। उन्हें स्त्रियों के विषयमें सोचना भी नहीं चाहिये। बुरे विचारों के आने पर अपने मन में अपने इष्ट देवता की मूर्त्ति को लाइये। उस रूप से मंत्र का जप कीजिये। जानवरों के

मैथुन को देखकर यदि आपके मन में काम-वासना उत्पन्न हो तो आपमें अभी भी काम वासना बनी हुई है। कुछ लोग इतने कामुक तथा दुर्बल हैं कि स्त्री का विचार, दर्शन तथा स्पर्श के द्वारा ही उनका वीर्य-पतन हो जाता है। उनकी अवस्था दयनीय है।

उन्नत साधकों को भी सावधान रहना चाहिये। उन्हें भी स्त्रियों के साथ अधिक स्वतंत्रता नहीं रखनी चाहिये। उन्हें नहीं समझना चाहिये कि वे योग में निपुण हो गये हैं। एक प्रतिष्ठावान सन्त को भी पतित होना पड़ा था। वे महिलाओं के साथ रहते थे, उनकी बहुत सी महिला शिष्यायें थीं। उनसे पैर दबवाते थे। उनका पतन होगया।

दूसरा महात्मा जिनको कि उनके भक्त भगवान कृष्ण का अवतार मानते थे योग-भ्रष्ट बन गया। वह भी महिलाओं के साथ स्वतंत्रता रखते थे तथा पाप-कृत्य कर बैठे। कितना दुर्भाग्य है। कितनी कठिनाई से साधक साधना की सीढ़ी पर चढ़ते हैं और असावधानी के कारण अपनी सारी कमाई को खो देते हैं। जिह्वा का दमन कीजिये। तभी काम को वश में करना आसान हो सकेगा। स्वादिष्ट राजसिक अन्न कामोत्तेजक होते हैं। आप इस भाव के अर्जन में कि सारी स्त्रियां आपकी मां तथा बहनें हैं, कई बार असफल हो सकते हैं। परंतु कोई बात नहीं। संलग्नता पूर्वक अभ्यास करते जाइये। आप अन्ततः सफल होंगे। एक विद्यार्थी मेरे पास लिखता है "मलिन मांस तथा चमड़ा मुझको बहुत ही शुद्ध तथा सुन्दर प्रतीत होता है। मैं बहुत ही कामुक हूं। मैं मातृभाव अर्जन करने की कोशिश करता हूं। मैं स्त्री को देवी मानकर मानसिक

नमस्कार करता हूं। परंतु फिर भी मैं अत्यन्त कामुक हूं। अब मैं क्या करूं ?" स्पष्ट है कि उसके मन में वैराग्य तथा विवेक नाम मात्र को भी नहीं है। पुराने संस्कार तथा वासना अत्यन्त बलशाली हैं।

अस्थिपंजर तथा मुर्दा शरीर की स्मृति से आपको वैराग्य आवेगा। इस शरीर की उत्पत्ति मल से ही हुई है। यह मल से पूर्ण है तथा अन्त में यह भस्मीभूत हो जाता है। यदि आप यह याद रखें तो आपके मन में वैराग्य का प्रादुर्भाव होगा। संसार के दुखों का स्मरण कीजिये। विषयों की असत्यता तथा बन्धनों पर विचार कीजिये। किसी भी तरीके का अभ्यास कीजिये। पुराने संस्कार तथा वासना कितने ही बलशाली क्यों न हों नियमित ध्यान जप, प्रार्थना, सात्विक आहार, सत्संग, शीर्षासन, सर्वांगासन, स्वाध्याय, "मैं कौन हूं ?" का विचार तथा किसी पवित्र नदी के तट पर तीन महीनों तक एकान्तवास के अभ्यास के द्वारा वे विनष्ट हो जायेंगे। धनात्मक की विजय ऋणात्मक के ऊपर होती है। आपको कभी भी हिम्मत न हारनी चाहिये। ध्यान में निमग्न हो जाइये, मार को नष्ट कीजिये। संग्राम में विजयी बनिये। तेजस्वी योगी बनिये। आप शुद्ध आत्मा हैं।

हे विश्व राजन्। इसका अनुभव कीजिये।

पीड़ित नहीं होते।

२. ब्रह्मचारियों को पान सिगरेट, तम्बाकू, चाय नशा, काफी आदि का पूर्णतः परित्याग करना चाहिये। बीड़ी से निकोटिन जहर फैलता है, हृदय को हानि पहुंचती है, स्नायु सम्बन्धी रोग तथा नेत्र सम्बन्धी रोग होते रहते हैं।

३. जिस मनुष्य में लिंग-विचार गहरा गड़ा हुआ वह है करोड़ों वर्षों में भी वेदान्त को समझकर उसका साक्षात्कार नहीं कर सकता।

४. नारद भक्ति सूत्र में कहते हैं "ये वृत्तियां (कामुक) पहले तो लहरियों के रूप में उत्पन्न होती हैं परंतु कुसंगति के कारण सागर के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। सूत्र—४५।" अतः कुसंगति का त्याग कीजिये।

५. विपरीत लिंग वाले व्यक्ति को देखने पर उससे बात करने की इच्छा होगी। बात करने के बाद छूने की इच्छा होगी। अंततः मन मलिन हो जायगा।

६. अज्ञानियों के काम को दूर करने के लिये तथा ब्राह्मी स्थिति को पाने के लिये ब्रह्मचर्य से बढ़कर कोई भी महौषधि नहीं है।

७. दो प्रकार के ब्रह्मचारी पाये जाते हैं—नैष्ठिक: जो आजीवन ब्रह्मचारी रहता है तथा उपाकुर्वन: जो अध्ययन के उपरान्त गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है।

८. स्वप्नदोष होने पर प्रातः डुबकी लगाकर स्नान कीजिये। बीस बार प्राणायाम कीजिये। १०८ बार गायत्री मंत्र का जप कीजिये। सूर्य से प्रार्थना कीजिये "हे सूर्य, मेरी खोई शक्ति मुझको लौटा दो पुनर्मामैतु इन्द्रियम्।"

९. हे श्याम। आप नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं। आपने मन, वचन तथा कर्म से आजीवन ब्रह्मचर्य पालन का व्रत लिया है। सूर्य भी आपके सामने कम्पित होगा। ब्रह्मचर्य शक्ति के द्वारा आप सूर्य का भेदन करेंगे। आप महान् हैं।

१०. मक्खियां प्रदीप को फूल समझ कर उसी में अपनी जान को खो बैठती हैं। उसी प्रकार कामुक नर नारी शारीरिक सुन्दरता के द्वारा आकृष्ट होकर कामाग्नि में ही जल मरते हैं।

११. ध्वनि के द्वारा हिरण, स्पर्श के द्वारा हाथी, रूप के द्वारा पतिंगे, स्वाद के द्वारा मछली, गंध के कारण मक्खी फन्दे में आ पड़ती हैं। जब एक ही इन्द्रिय में इतनी शक्ति है तो सम्मिलित पांचों इन्द्रियों में कितनी शक्ति होगी।

जाती है। क्या आप इन विद्युत कणों से कुछ पा
पढ़ेंगे? क्या आप ब्रह्मचर्य का पालन कर आध्यात्मिक
शक्ति का अर्जन करेंगे। प्रकृति आपकी सबसे अच्छी
गुरु तथा पथ-प्रदर्शक है।

१४. अश्लील संगीत मन में बहुत ही बुरा तथा गहरा संस्कार डाल देता है। साधकों को ऐसे स्थानों से दूर रहना चाहिये जहां कि अनैतिक संगीत गाये जाते हो।

१५. अश्लील चित्र, अश्लील शब्द, प्रेम कहानियों वाला उपन्यास—इन सब के द्वारा कामोत्तेजन होता तथा मनुष्य के हृदय में कुत्सित वृत्तियां पैदा होती हैं। किन्तु भगवान कृष्ण या भगवान राम या भगवान बुद्ध के सुन्दर चित्र तथा सूरदास, तुलसीदास तथा त्यागराज के सुन्दर संगीत को सुनकर शुभ-वृत्तियां उत्पन्न होती हैं। प्रेमाश्रु बहते तथा मन भाव समाधि में मग्न जाता है क्या आप दोनों के भेदों को अच्छी प्रकार से समझ गये हैं?

१६. बालकपन में बच्चे तथा बच्चियों में लिंग सम्बन्धी अधिक विभेद नहीं होता। कुमारावस्था में आते ही उनमें बड़ा परिवर्त्तन हो जाता है। भावनायें, विचार, हावभाव, शरीर, बातें चेहरा तथा गति इन सबों में अन्तर हो जाता है।

१७. काशी के हनुमान घाट पर दो लड़कियां डूबने लगीं। दो युवकों ने तुरंत उनको बचा लिया। एक युवक ने लड़की से विवाह का प्रस्ताव किया। दूसरे ने कहा "मैंने तो अपना कर्त्तव्य कर दिया। ईश्वर ने मुझको सेवा करने का मौका प्रदान किया था।" उस

२०. जिस तरह खनिज द्रव्यों को शुद्ध करने के लिये उसे धौंकनी से फूंकते हैं ठीक उसी तरह प्राण के निरोध से इन्द्रियों को जला देते हैं। अतः नियमित प्राणायाम का अभ्यास कीजिये। यह महान् शोधक है।

ब्रह्मचर्य के लिये सहायक

मेरे पास अनेकानेक हतोत्साह, निराश युवकों की दयनीय कहानियों के पत्र आते हैं। साहित्य तथा फिल्म के क्षेत्र में हाल में बहुत ही अशलीलताओं का समावेश हुआ है। युवकों की दयनीय दशा में वृद्धि का यही कारण है। वीर्यनाश से उनके मन में बहुत भय उत्पन्न होता है। शरीर दुर्बल हो जाता है। याददाश्त कम हो जाती है। चेहरा कुरूप हो जाता है। तथा युवक अपनी दयनीय स्थिति को संभालने में असमर्थ होते हैं। यदि निम्नांकित उपदेशों में से कुछ का भी पालन किया जाय तो उससे जीवन के प्रति सम्यक् दृष्टिकोण का विकास होगा। तथा वह अनुशासित आध्यात्मिक जीवन व्यतीत कर सकता है।

यदि वीर्य पतन बारम्बार होता है तो चिन्ता न कीजिये।

कब्ज के विषय में एनिमा अत्यावश्यक है विरेचकों का प्रयोग अधिक लाभदायक नहीं है क्योंकि उसके द्वारा शरीर में गर्मी की वृद्धि होती है। शयन करने के पहले मल मूत्र का परित्याग कर लीजिये।

सदा कौपीन पहनिये।

सदाचार के नियमों का पालन कीजिये। सदा ईश्वर की याद रखिये। एक दिन के लिये उपवास कीजिये।

नींबू या नारंगी के रस को पानी में मिलाकर पीजिये। एक सप्ताह तक फल का आहार कीजिये। दूसरे सप्ताह में फल व दूध का तब तीसरे सप्ताह में दिन में अपना साधारण भोजन कीजिये। और रात्रि में फल तथा दूध का। जब तक कि आप अपने भोजन के पुराने तरीके पर न आ जायं एनिमा का प्रयोग करते रहिये।

ब्रह्मचर्य सुधा बड़ा लाभदायक आयुर्वेदिक औषधि है।

कम सोइये। बाईं करवट सोइये। पीठके बल या पेट के बल न सोइये। चार बजे प्रातः उठिये। आध्यात्मिक साधना में लग जाइये। उन सभी वस्तुओं का पूर्णतः परित्याग कीजिये जिनसे कामोत्तेजन हो।

रोग का पूर्ण निवारण १ से ६ महीने तक में हो सकता है। यदि रोग पुराना है तो निवारण भी अधिक समय में होगा। प्रकृति के कार्य धीमे हैं, परन्तु हैं पक्के। कामुक विचारों से आक्रान्त होने पर आपको उनके बदले दिव्य विचारों को प्रश्रय देना होगा।

निम्नांकित नियम उन सभी लोगों के लिये लागू हैं जो स्वप्नदोष या किसी भी बुरी आदत के शिकार बने हुये हैं।

१. सामान्य

१. कुसंगति, गपशप, ड्रामा, सिनेमा, उपन्यास का परित्याग कीजिये। विपरीत लिंग वाले से अधिक न मिलिये। यदि यह अनिवार्य हो तो दिव्य भाव रखिये।

२. अपनी आवश्यकताओं को अधिकाधिक कम रखिये। बारम्बार दर्पण में चेहरा न देखिये। अनुशासित तथा श्रमयुक्त जीवन बिताइये।

३. जानवरों तथा पशुओं के मैथुन को न देखिये।

४. अधिक साइकिल न चलाइये।

५. विलास एवं आराम का प्रेमी न बनिये। आलस्य को दूरकर सदा किसी न किसी उपयोगी काम में लगे रहिये। आपका मन सदा संलग्न रहे—आध्यात्मिक साहित्य के अध्ययन तथा अन्य शुभ कर्मों में। आलस्य में समय न गंवाइये।

६. जिस कार्य को आप करें वह आपके आनन्द का स्रोत हो। आप अपने काम में सुख का अनुभव कीजिये। उसे आप भार के रूप में न कीजिये। जब मन किसी कार्य को भार समझता है तो तब वह किसी अन्य वस्तु से सुख प्राप्त करना चाहता है। सदा सुख पूर्वक अनायास काम करते रहिये जिससे मन को पाप-कृत्यों की ओर जाने का मौका भी न मिले। ईश्वर के लिये काम कीजिये। तब सभी कार्य सुखप्रद हो जायेंगे। शारीरिक श्रम का कार्य भी कीजिये। परंतु अपने को थका न डालिये। कर्म को अपनी लीला बना डालिये। तब आप बिना किसी चिन्ता तथा शोक के काम करते रहेंगे।

७. आसन कीजिये। (शीर्षासन, सर्वांगासन तथा सिद्धासन) गहरी स्वास ले लीजिये भस्त्रिका प्राणायाम का अभ्यास कीजिये। मीलों तक टहलिये। खेल में भाग लीजिये।

८. सदा ठंडे जल के द्वारा स्नान कीजिये। सैन्ट तथा फैशन की वस्तुओं का प्रयोग न कीजिये। नृत्य तथा संगीत–पार्टियों में भाग न लीजिये। गाना न गाइये आप कीर्त्तन में भाग ले सकते हैं। परन्तु अपनी संगीत-कला का प्रदर्शन न कीजिये।

९. धूम्रपान मादक द्रव्य तथा आमिषाहार का परित्याग कीजिये।

१० चाय, काफी, खटाई, अधिक मिठाई तथा चीनी का त्याग कीजिये। कभी कभी (सप्ताह में एक बार) उपवास कीजिये। उस दिन जल भी न पीजिये। बिना अदरख डाले दूध भी न पीजिये। सुस्वादु भोजन, चटनी आदि का परित्याग कीजिये।

आवश्यकीय

यह दुर्बलता दूर होजायगी। इसके लिये उद्विग्न या चिन्ताग्रस्त न बनिये। चिन्ता के द्वारा आप और अधिक दुर्बल बन जायेंगे। भूत से शिक्षा लीजिये। तथा लाभ उठाइये। भविष्य की चिन्ता न कीजिये। अपने दृष्टिकोण को बदल डालिये। विचार का अभ्यास कीजिये। ब्रह्मचर्य के लाभ पर ध्यान कीजिये। हनुमान, भीष्म, तथा अन्य अखण्ड ब्रह्मचारियों के जीवन पर ध्यान दीजिये। विषय-परायण जीवन से होने वाली हानियां—स्वास्थ्य की हानि, लज्जा, रोग तथा मृत्यु पर विचार कीजिए। आप विश्व-पिता की सन्तान हैं। सारा सुख आपके अन्दर ही है। विषय वस्तु में लेश मात्र भी सुख नहीं है। अपने को शरीर से पृथक कीजिए। ईश्वर से तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित कीजिए। यदि आपका मन शुद्ध तथा स्वस्थ है तो आपका शरीर भी शुद्ध तथा स्वस्थ रहेगा। अतः भूत को भूल जाइए। नवीन, श्रेयस्कर धर्म तथा अध्यात्म के जीवन का अवलंबन कीजिए। दिव्य जीवन का आस्वादन करना सीखिए। अधिक साधना कीजिए। आप पूर्णतः परिवर्त्तित तथा दिव्य बन जायेंगे।

खतरे के समय

भूत की आदतों के फलस्वरूप यदि आप किसी खतरे में हो तो निम्नांकित उपदेशों का पालन कीजिए।

१. अकेले में न रहिए। दूसरों की संगति में रहिए।

२. जप तथा कीर्त्तन।

३. जोरों से कई बार ओ३म् का जप कीजिए।

४. कुछ दूर तक जोरों से दौड़िए। शीर्षासन कीजिए।

५. विचार कीजिए "यह कामना किसमें उठती है ?" मन तथा शरीर से अपने को पृथक कीजिए।

६. अपनी दैवी प्रकृति का निश्चय कीजिए। आप आत्मा हैं। मन आपका नौकर है। मन के कार्यों का साक्षी बनिए। कामनाओं को प्रारम्भ में ही कुचल डालिए। उनके प्रति झुकिए नहीं।

७. ईश्वर से प्रार्थना कीजिए। प्रेरणात्मक स्तोत्रों का पाठ कीजिए।

८. अपने भीतर ईश्वरकी स्थिति का भान कीजिए।

९. किसी प्रेरणात्मक आध्यात्मिक ग्रन्थ के अध्ययन में लग जाइए।

१० इससे आपको बल मिलेगा तथा आप पतन से बच जायेंगे।

ऊर्द्ध्वरेता योगी

मन, प्राण तथा वीर्य एक ही हैं। मन तथा प्राण में दूध तथा जल जैसा संबंध है। यदि मन को नियंत्रित कर लिया गया तो प्राण तथा वीर्य स्वयं निरुद्ध हो जाते हैं।

जो प्राण को नियंत्रित करता है वह मन तथा वीर्य की गति को भी नियंत्रित कर लेता है। यदि शुद्ध विचार, सर्वांगासन, शीर्षासन तथा प्राणायाम के अभ्यास से वीर्य को नियंत्रित कर उसे मस्तिष्क की ओर ऊर्द्ध प्रवाहित किया गया तो मन तथा प्राण स्वतः निरुद्ध हो जायंगे।

जिसने मन पर विजय पाली उसने प्राण को भी वशीभूत कर लिया। मन इन दो वस्तुओं—प्राण स्पंदन तथा वासना के द्वारा गतिशील बनता है। यदि इनमें से किसी एक को भी मार दिया गया तो दूसरा स्वतः मर जाता है। जहां मन को लीन किया जाता है वहीं प्राण भी निरुद्ध होता है, तथा जहां प्राण को स्थिर किया जाता है वहां मन लीन हो जाता है। मन तथा प्राण मनुष्य तथा उसकी छाया के समान निकट संबंध रखते हैं। यदि मन तथा प्राण नियंत्रित न किये तो सारे इन्द्रिय—ज्ञानेद्रिय तथा कर्मेन्द्रिय अपने व्यापारों में संलग्न रह गये।

वह अखण्ड ब्रह्मचारी जिसने बारह वर्षों तक वीर्य की एक बूंद भी गिरने न दिया है, बिना प्रयास के ही समाधि में प्रवेश करेगा। प्राण तथा मन उसके पूर्ण नियंत्रण में हैं। बालब्रह्मचर्य तथा अखंड ब्रह्मचर्य पर्यायवाची हैं। अखंडब्रह्मचारी की धारणाशक्ति, स्मृतिशक्ति तथा विचारशक्ति प्रबल होती है। अखंडब्रह्मचारी को मनन तथा निदिध्यासन की भी आवश्यकता नहीं है। यदि एक बार भी वह महावाक्य का श्रवण कर लेगा तो शीघ्र ही वह आत्मसाक्षात्कार या ब्रह्मानुभव प्राप्त कर लेगा। उसकी बुद्धि शुद्ध तथा उसकी समझ अत्यन्त ही स्पष्ट है। आप अखंड ब्रह्मचारी बन सकते हैं, यदि आप सच्चा प्रयास करें। केवल जटा रखने, कपाल तथा शरीर में क्षार लगाने से कोई

अखंड ब्रह्मचारी नहीं बनता। वह ब्रह्मचारी जिसने शरीर तथा इन्द्रियों का तो दमन कर लिया है परंतु सदा काम विचारों का चिंतन किया करता है, दंभी है। वह कभी भी भ्रष्टाचारी बन सकता है।

प्रतिक्रिया से आपको बहुत सावधान रहना होगा। जिन इन्द्रियों को आपने कुछ महीने या वर्ष तक नियंत्रण में रखा है वे उपद्रवी बन सकती हैं, यदि आपमें सावधानी नहीं रही तो समय मिलने पर वे उपद्रव करके आपको घसीट लाती हैं। कुछ लोग एक या दो वर्ष तक ब्रह्मचर्य का अभ्यास कर लेने के बाद और भी अधिक कामुक बन कर अत्यधिक शक्ति को विनष्ट कर डालते हैं।

यौगिक विज्ञान के अनुसार वीर्य सूक्ष्म रूप से समस्त शरीर में व्याप्त है। कामुक वृत्ति तथा कामोत्तेजन द्वारा उसे खींचा तथा स्थूल रूप में परिणत किया जाता है। ऊर्द्धवरेता बनने के लिए उस स्थूल वीर्य को जो पहले से बन चुका है रोकना ही भर पर्याप्त नहीं है, वरन् उसके निर्माण कार्य को रोकना तथा शरीर प्रणाली में विलीन करना भी आवश्यक है। सच्चे ऊर्द्धवरेता मनुष्य के शरीर पद्म के समान सुवासित होता है। जिसमें स्थूल वीर्य है वह बकरी के समान महंकता है। प्राणायाम के अभ्यास से वीर्य सूख जाता है। वीर्य शक्ति मस्तिष्क को उठती है। यह ओजस् शक्ति के रूप में स्पंदित होती है तथा अमृत के रूप में निकलती है।

उन योगियों की जै हो जो ऊर्द्धवरेता बन चुके हैं, तथा जो स्वरूप में निवास कर रहे हैं। हम सभी शम, दम, विवेक, विचार, वैराग्य, प्राणायाम, जप, ध्यान के अभ्यास से पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करें। हमारे हृदयों का अन्त-

वासी हमें इन्द्रियों तथा मन को वशीभूत करने के लिए शक्ति प्रदान करे। हम सभी श्री शंकर तथा ज्ञानदेव की भांति पूर्ण ऊर्द्धवरेता योगी बन जायें। उनके आशीर्वाद हम सबों को प्राप्त हो!

फैशन—भयंकर अभिशाप

ब्रह्मचारी फैशन से दूर रहे। उनके लाभ के लिए ही यह लेख दिया जा रहा है। लोग फैशन के लिए मर रहे हैं। नर नारी सभी फैशन के गुलाम बन चले हैं। गाउन या वस्त्र की काट छांट में जरा सी गलती हो जाने पर लन्दन अथवा पेरिस के दर्जियों पर कोर्ट में नुकसानी का मुकदमा पेश किया जाता है। लाहौर अथवा रावल पिंडी भी आजकल पेरिस बन चले हैं। आप शाम को वहां पर विविध प्रकार के फैशन को देख सकते हैं। अर्द्धनंगापन ही फैशन का रहस्य है। वे विज्ञान तथा स्वास्थ्य के नाम पर शरीर को खुला छोड़ते हैं। आधी छाती, आधे हाथ, आधे पैर जरूर ही खुले रहने चाहियें। यही फैशन है। अपने केश पर भी उनका पूर्ण नियन्त्रण है। यही उनकी सिद्धि है। हेयर ड्रेसिंग सैलून में जैसे चाहें अपने बालों को कटवाकर वे सुसज्जित कर सकते हैं। फैशन मनुष्य की कामुकता को उद्दीप्त करता है।

लाहौर में गरीब महिला भी मामूली फराक के लिए ५) रुपया सिलाई चार्ज देती है। वह इस बात की जरा परवा नहीं करती कि उसका पति किस प्रकार से इतने पैसों की व्यवस्था कर सकेगा। बिचारा पति! काम का गुलाम! दयनीय जीव! वह जहां तहां से उधार लेकर घूसखोरी के द्वारा किसी न किसी तरह अपनी स्त्री को प्रसन्न

करता है—बाहर से तो मुस्कराता है परन्तु अन्तः क्रोध की आग धधकती है। वह अपने अन्तःकरण मारता है। अपनी बुद्धि का दमन करता है। तब भ्रमित होकर इस संसार में विचरण करता है तथा अ बुरे कार्यों के फल स्वरूप वह भगन्दर आदि रोगों शिकार हो जाता है। तकलीफ होने पर वह रोता है- "मैं महान् पापी हूँ! मैं इस दुःख को सहन नहीं प सकता। मैंने अपने पूर्व जन्म में बहुत से पाप किये हैं हे प्रभु! क्षमा कर, रक्षा कर।" परंतु इसी जन्म में अपन भाग्य बदने के लिए वह रंचमात्र भी पुरुषार्थ करन नहीं चाहता।

फैशनेबल लोगों के वस्त्रों से छंटे हुए कपड़े के टुकड़ से, सारी दुनियां को ढंका जा सकता है। फैशन में अत्य धिक धन का अपव्यय होता है। मनुष्य को इस जगत में बहुत ही कम वस्त्र की आवश्यकता है। एक जोड़ा साधारण वस्त्र, चार रोटी तथा एक लोटा पानी। यदि फैशन के रुपयों को सत्कर्मों में लगाया जाय—दान, समाज सेवा, आदि—तो निश्चय ही मनुष्य दिव्य बन जायगा। वह नित्य शांति तथा सुख का भोग करेगा। परन्तु आप फैशने- बल लोगों में क्या देखते हैं? अशांति, दुःख, भय, निराशा, तथा पीला चेहरा। वे रेशमीकपड़े, तथा अपटूडेट पोशाकों में हो सकते हैं परन्तु उनके चेहरों में प्रसन्नता नहीं, कुरूपता है। शोक, लोभ, काम, तथा घृणा के कीड़ों ने उनके हृदयों को जर्जर बना डाला है।

यदि इंगलैण्ड के बैरन (जमींदार) को अपने बूट तथा हैट को उतारने के लिए कहिये, जिस समय वह हिंदू मन्दिर में प्रवेश कर रहा हो, तो वह अनुभव करता है

कि उसका व्यक्तित्व ही खो गया है। देखिए अभिमानी मनुष्य का कितना पाखंड ! चमड़े का छोटा टुकड़ा, कपड़े से ढंका एक कार्डबोर्ड— इन्हीं के कारण वह महान् बैरन हो जाता है और उसके अभाव में उसका अस्तित्व ही उड़ जाता है। उसमें बल नहीं है। नाड़ी शांत होने लग जाती हैं। वह उसी बल के साथ अब बातें नहीं कर सकता। यह जगत संकीर्ण हृदय तथा मंद बुद्धि वाले लोगों से भरा हुआ है। वे कल्पना करते हैं कि पगड़ी, फैशनेबल लम्बे कोट, हैट, तथा बूट से ही मनुष्य बड़ा आदमी बन जाता है। परन्तु वास्तव में आदमी वही है जो सरल है तथा जो अभिमान एवं राग-द्वेष से विमुक्त है।

पुरुषगण तथा महिलायें फैशनेबल वस्त्रों को क्यों पहनते हैं ? वे दूसरों की आंखों में बड़ा बनना चाहते हैं। वे सोचते हैं कि फैशनेबल वस्त्र पहनने से उनको सम्मान मिलेगा। स्त्री अपने पति की आंखों में सुन्दर बनना चाहती है। वह उसको आकृष्ट करना चाहती है। वेश्या सुन्दर फैशनेबल वस्त्रों को पहन कर अधिक ग्राहकों को आकृष्ट करना चाहती है। यह सब महामोह है। क्या फैशनेबल वस्त्र से सच्चा सौंदर्य मिल जायगा ? यह सब कृत्रिम सजावट है, विनश्वर चमक-दमक तथा झूठे सौंदर्य है। यदि आपके पास करुणा या सहानुभूति, प्रेम, भक्ति, तथा तितीक्षा जैसे सद्गुण हैं तो आप निश्चय ही सम्मान तथा आदर प्राप्त करेंगे। आप चिथड़ों में ही क्यों न हों आपके पास चिरन्तन सौंदर्य होगा। फैशन अभिशाप है। यह शांति का भयंकर शत्रु है। इससे काम लोभ तथा आसुरी वृत्तियों का विकास होता है। इससे मन सांसारिक वासनाओं से भर जाता है। इससे दरिद्रता बढ़ जाती

है। फैशन ने आपको भिखारियों का भिखारी बना डाला है। फैशन की कामना को मूलतः नष्ट कर डालिये। सरल वस्त्र पहनिये। उच्च विचार रखिये। फैशनेबल लोगों का साथ न कीजिये। उन सन्तों की याद रखिये जिनके जीवन सरल थे। तथा जो आज भी सरल जीवन यापन करते हैं। सरलता के द्वारा सदाचार आता है। इससे दिव्य विचार फैलते हैं। आप आवश्यक चिताओं से मुक्त हो जायेंगे। आप ध्यान तथा साधना में अधिक समय लगा सकेंगे।

सात्विक पुरुष अथवा स्त्री ही वास्तव में सुन्दर है। उसे बाह्य तथा कृत्रिम सजावट—सोने के आभूषण आदि की—आवश्यकता नहीं है। लाखों लाख व्यक्ति उनकी ओर स्वतः ही खिंच जाते हैं। चाहे वे गरीब वस्त्रों में ही क्यों न हों।

अपने वस्त्र में गांधी जी कितना सरल थे। रमण महर्षि कितने सरल थे। उनके पास कौपीन मात्र ही था। वे अपने साथ सूटकेस अथवा ट्रंक नहीं रखते थे। वे पक्षी के समान स्वतन्त्र थे। गंगोत्री के कृष्ण राम, ब्रह्मेन्द्र सरस्वती जैसे अवधूतों को तो कौपीन भी नहीं।

यह शरीर एक बड़े घाव के समान है। इसकी किसी भी वस्त्र के द्वारा पट्टी लगा देनी चाहिए। रेशमी-कोरदार, तथा अन्य फैशनेबल कपड़ों की आवश्यकता नहीं है। इस मलिन हाड़ मांस के शरीर को कला पूर्ण वस्त्रों से सजाना तो मूर्खता की हद है। क्या आपने अपनी मूर्खता पहचानी? उठिये! फैशन त्यागिये। शपथ लीजिये। मुझे पक्का वचन दीजिये कि आप इसी क्षण से सरल वस्त्र का ही प्रयोग करेंगे। आप नंगे आये थे। आप नंगे ही

जायेंगे। आपके फैशन के वस्त्र आप से छीन लिए जायेंगे। फिर अर्थोपार्जन कर फैशनेबल पोशाक बनाने के लिए आप इतना स्वार्थपूर्ण प्रयास क्यों कर रहे हैं। अपनी मूर्खता को पहचानिये। विवेक करना सीखिये। आत्म ज्ञान को प्राप्त कर शाश्वत शांति में विश्राम कीजिए।

हे फैशनेबल मनुष्य, हे फैशनेबल महिलायें! आप आत्म-हन्ता न बनें। आप इस पाखंडपूर्ण जीवन के लिए समय, शक्ति तथा आयु को क्यों बरबाद कर रहे हैं? यह भारी दंभ है। आपके हृदयों के प्रकोष्ठ में सौंदर्यों का सौंदर्य—अमर आत्मा विभासित हो रहा है। उस आत्मा के सौंदर्य की ही छाया यहां के सारे सौंदर्य हैं। अपने हृदय को शुद्ध बनाओ। अपने मन तथा इन्द्रियों को नियंत्रित करो। किसी कमरे में शांत होकर बैठ जाओ तथा अपने अमर मित्र आत्मा का ध्यान करो। इस आत्मा का साक्षात्कार करो। तभी आप सचमुच में सुन्दर हो सकेंगे। तभी आप सचमुच धनी हो जायेंगे। तभी आप महान् हो जायेंगे।

राग तथा उस पर विजय

राग

किसी भी प्रबल कामना को राग कहते हैं।

राग के द्वारा मन चलायमान हो जाता है।

किसी भी उग्र आवेग जैसे सांसारिक प्रेम, अभिमान, ईर्ष्या, लोभ इत्यादि विशेष कर लिंगात्मक आसक्ति को राग कहते हैं। कामुक भावना राग है। क्रोध का आवेश भी राग है।

राग वह आवेग है जिससे बुद्धि चलायमान हो जाती है। प्रबल कामना की वस्तु भी राग है। हम कहते हैं "संगीत राम के लिए राग बन गया है।"

यह शांति, भक्ति तथा ज्ञान का शत्रु है। यदि राग के ऊपर आप विजय न पावें तो इससे आपके सुख, स्वास्थ्य एवं शांति विनष्ट हो जायेंगे।

जो राग के वशीभूत है वह गुलामों का गुलाम है।

राग क्षणिक आवेश तथा उत्तेजना है। भोगोपरांत यह आपको दुर्बल बना डालता है।

राग उपद्रवी घोड़े के समान है। बुद्धिमानी, वैराग्य तथा विवेक के द्वारा इस पर शासन कीजिये तथा अधिकाधिक ज्ञानी बनते जाइये। राग से मुक्त बनिये। आप स्वतन्त्र हो जायेंगे।

अपने प्रबल राग को पहले नष्ट कीजिये। दूसरे प्रकार के राग सुगमतया नष्ट हो जायेंगे।

अधिनायक अथवा राजा लोगों पर शासन करता है परन्तु राग तो अधिनायक अथवा राजा पर ही शासन करता है। योगी ही राजा का अधिपति है। वही सदा सुखी, आनन्दपूर्ण तथा शांत है।

आपका उग्र राग ही आनन्द के असीम साम्राज्य के द्वार को बन्द कर देता है। इस राग को मारकर आनन्द के धाम में प्रवेश पाइये।

सब से प्रबल तो पाशविक राग है जिससे आप जगत के साथ बंधे हुए हैं।

ईश्वर साक्षात्कार के लिए राग रखिये। यह सभी सांसारिक रागों को नष्ट कर डालेगा।

राग-जय

साधारण व्यवहार में राग का अर्थ प्रबल कामुक प्रवृत्ति है। यह काम-तृप्ति के लिए सांसारिक तृष्णा है। बारंबार यौन-संबंध के द्वारा यह बहुत ही प्रबल होता जाता है।

रजोगुण के प्राधान्य होने पर मन में राग-वृत्ति उत्पन्न होती है। यह अविद्या का कार्य है। यह मन का विकार है। आत्मा सदा शुद्ध है। आत्मन् विमल या निर्मल है यह निर्विकार है। यह नित्य शुद्ध है। भगवान की लीला कायम रखने के लिये अविद्या शक्ति ने राग का रूप धारण कर लिया है। आप "चण्डी पाठ" या "दुर्गासप्तशती" में पायेंगे:—

"या देवी सर्व भूतेषु कामरूपेण संस्थिता,
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ॥
मैं उस देवी को नमस्कार करता हूँ जो कि सभी प्राणियों में कामरूप से संस्थित है"

छोटे बालकों तथा बालिकाओं में राग बीज रूप में रहता है। यह उनको परेशान नहीं करता। जिस प्रकार वृक्ष बीज में प्रसुप्त रहता है उसी प्रकार काम भी बच्चों में प्रसुप्त रहता है। वृद्धों में काम का राग दब जाता है। यह अधिक उपद्रव नहीं करता। युवकों तथा युवतियों के लिए ही यह काम अधिक उपद्रवी बन जाता है। पुरुष तथा स्त्रियां राग का गुलाम बन जाते हैं।

मांस, मछली, अंडे इत्यादि, राजसिक वस्त्र तथा राजसिक जीवन-यापन, इत्र, सिनेमा, उपन्यास-पठन, विषय-वार्ता, कुसंगति, मद्यपान, सभी प्रकार के उत्तेजक पदार्थ, बीड़ी, सिगरेट, आदि काम को उत्तेजित करते हैं।

तथाकथित शिक्षित जनों के लिये भी यह समझना बड़ा ही कठिन है कि आत्मा में ही इन्द्रियातीत सुख है जो कि विषयों पर आश्रित नहीं है। सुषुप्ति में सभी आत्म सुख का अनुभव करते हैं। रात्रि में सभी अपनी आत्मा में निवास करते हैं। वे इसकी प्रतीक्षा करते है। वे इसके बिना नहीं रह सकते। वे सुन्दर बिछावन तैयार करते हैं, इसी आत्मानन्द के लिए जहां पर कि इन्द्रियां काम नहीं करती तथा राग व द्वेष का गुजारा नहीं। हर सवेरे वे कहते हैं "रात्रि में गहरी नींद आई। मैंने बड़ा सुख अनुभव किया। मैं कुछ भी नहीं जानता था। मुझे जरा भी अशांति नहीं थी। मैं रात्रि में सोने के लिए गया तथा सबेरे प्रातः उठा सात बजे।" फिर भी मनुष्य इस अनुभव को भूल जाता है। माया की शक्ति प्रबल है। माया रहस्यमयी है। यह मनुष्य को अन्धकार के खड्डु में गिरा डालती है। मनुष्य प्रातः से ही दुबारा अपने विषयी जीवन आरम्भ करता है। इसका कोई अन्त नहीं।

कुछ अज्ञानी जन कहते हैं "काम को रोकना ठीक नहीं। हमें प्रकृति के विरुद्ध नहीं जाना चाहिए। ईश्वर ने सुन्दरी युवतियों का निर्माण क्यों किया? उनका सृष्टि में कुछ उपयोग तो होना ही चाहिए। हमें उपभोग करना चाहिये तथा सन्तति उत्पन्न करनी चाहिए। यदि सभी संन्यासी बनने लगें तथा अरण्य वास करना चाहें तो संसार का क्या होगा? यह तो नष्ट ही हो जायगा। काम को रोकने से रोग उत्पन्न हो जाते हैं। हमको चाहिए कि अधिकाधिक सन्तानों की उत्पत्ति करें। अधिक सन्तान के रहने से घर में सुख रहता है। यही जीवन का चरम लक्ष्य है। मैं वैराग्य, त्याग तथा निवृत्ति को पसन्द नहीं

करता।" यही उनका स्थूल दर्शन है। वे लोग चर्वाक तथा विरोचन की सन्तान हैं। अतिभोजन ही उनके जीवन का लक्ष्य है। इनके अनुयायी बहुत हैं। वे शैतान के मित्र हैं। उनका दर्शन कितना प्रशंसनीय है! अपनी सम्पत्ति, स्त्री, सन्तान के नष्ट होने पर, असाध्य बीमारियों के द्वारा पीड़ित होने पर वे कहेंगे "हे ईश्वर हमें इस भयानक बीमारी से मुक्ति दे। मेरे पापों को क्षमा कर। मैं महान् पापी हूँ।"

हर हालत में राग पर विजय पाना चाहिये। राग तथा काम को रोकने में बीमारियां उत्पन्न नहीं होतीं प्रत्युत अधिकाधिक सुख तथा आनन्द की प्राप्ति होती है। प्रकृति के विरुद्ध जाकर ही तो आप आत्मा को पा सकते हैं। आत्मा प्रकृति से परे है। जिस तरह नदी में मछली पानी की धारा के विरुद्ध तैरती है उसी तरह आपको संसार धारा के विरुद्ध चलना होगा। तभी आपको आत्म-साक्षात्कार की प्राप्ति हो सकती है। यदि आप अक्षय आत्मानन्द को पाना चाहते हैं तो राग पर विजय पाना होगा। यौन सुख तो कोई भी सुख नहीं। यह विपत्ति निराशा, थकावट तथा दुःख से परिपूर्ण है। यदि आप आत्मा अथवा योग विद्या को जान लें तो आप सुगमता के साथ राग पर विजय पा सकते हैं। आत्म सुख की प्राप्ति तभी होगी जब कि आप संसार के सभी सुखों को त्याग दें। यही ईश्वर आपसे अपेक्षा रखता है। ये सुन्दरी स्त्रियां तथा धन माया के ही निमित्त हैं। इनके द्वारा ही माया आपको अपने प्रलोभनों में फंसाना चाहती है। यदि आप एक सांसारी व्यक्ति—कुत्सित कामनाओं, निम्न विचारों से पूर्ण बना रहना चाहते हैं तो आप हर तरह से ऐसा कर सकते हैं।

आपको पूरी स्वतन्त्रता है कि आप तीन सौ पचास औरतों से शादी करलें तथा जितनी अधिक संतति चाहें पैदा कर सकते हैं। कोई भी आपको रोकता नहीं। परन्तु आपको बहुत ही शीघ्र यह पता चल जायगा कि संसार आपको तृप्ति नहीं दे सकता जैसा कि आप चाहते हैं। क्योंकि सभी विषय-पदार्थ देश, काल तथा कारणत्व से सीमित हैं। ये मृत्यु, रोग, वृद्धावस्था, चिंता, शोक, भय, क्षति; निराशा, विफलता, गर्मी, सर्दी, सर्पदंश, बिच्छू दंश, भूकंप से हमेशा आच्छन्न हैं। एक क्षण के लिए भी आप शांति को नहीं पा सकते। आपका मन काम तथा मल से परिपूर्ण है। आपकी बुद्धि विपरीत हो चली है। आप समझते नहीं। आप जगत के मिथ्या रूप को नहीं समझ सकते। काम को सफलता पूर्वक वशीभूत किया जा सकता है। इसके लिए शक्तिशाली साधन हैं। काम को वश में कर लेने के बाद आप आन्तरिक नित्य सुख का उपभोग करेंगे—जो आत्मा है। सभी संन्यासी नहीं बन सकते। वे कामुक हैं अतः वे संसार का त्याग नहीं कर सकते। उनके बन्धन विशाल हैं। वे अपने बच्चों सम्पत्ति तथा स्त्रियों से गुंथे हैं। आपका कथन पूर्णतः गलत है। यह असंभव है। क्या कभी आपने इतिहास के पन्नों में ऐसा देखा है कि सभी ने संन्यास ले लिया हो और यह जगत शून्य हो गया हो। फिर भी आप इस गलत विचार को क्यों रखते हैं? यह आपके मन की धूर्तबाजी है जिसके द्वारा आपके मूर्खतापूर्ण तर्क को सहारा मिलता है और काम-तृप्ति के शैतान-दर्शन की परिपुष्टि होती है। भविष्य में ऐसी बातें न कीजिए। इसके द्वारा आपकी मूर्खता तथा कामुकता का प्रदर्शन होता है। इस जगत की अधिक

चिंता न कीजिए। अपना काम संभालिये। ईश्वर सर्व शक्तिमान है। यदि ऐसा भी हो कि सबों के संन्यास लेने से सारा जगत शून्य पड़ जाय तो ईश्वर पल मात्र में ही करोड़ों मनुष्यों की सृष्टि कर सकता है। इसके लिए आपको परेशान होने की अवश्यकता नहीं है। अपने काम को निर्मूल करने की विधि आप ढूंढ निकालिए।

जगत की आबादी बराबर बढ़ती जारही है तथा लोगों में जरा भी धार्मिक भावना नहीं। राग का ही बोलबाला है। लोगों के मन कामुक विचारों से भरे हुये हैं। यह जगत फैशन, रिस्तरां, होटेल, भोजन, नृत्य तथ सिनेमा से ही भरा हुआ है। भोजन, पान तथा सन्तानोत्पादन-यही उनके जीवन का आरम्भ तथा अन्त है। लोगों की आबादी बढ़ने के अनुपात में अन्न की वृद्धि नहीं हो रही है। अकाल तथा विनाश की संभावना है। जगन्माता अधिक आबादी को बहा ले जाती है। लोग कृत्रिम साधनों के द्वारा जन्म-निरोध करना चाहते हैं। परन्तु वे सारे साधन मूर्खता से पूर्ण हैं। किसी को भी उसमें सफलता नहीं मिली है। एक शुक्रकीट में भी प्रबल शक्ति है। वीर्य की क्षति होती है। ब्रह्मचर्य के द्वारा इस शक्ति को ओजस् में बदल दिया जाता है। सारा जगत प्रबल कामोत्तेजन से परिपूर्ण है। तथाकथित शिक्षित जन भी इसके अपवाद नहीं हैं। सभी भ्रम में पड़े हैं तथा जगत में विपरीत बुद्धि के अनुसार ही वर्त्तते हैं। उनकी अवस्था दयनीय है। ईश्वर उनको उन्नत बनावे तथा उनकी आंखें आध्यात्मिक धामों की ओर लगावे। जन्म-निरोध के लिये आत्म-संयम तथा ब्रह्मचर्य ही एकमात्र प्रभावशाली साधन हैं।

बाल विवाह तथा अल्पावस्था में ही विवाह का हो

जाना समाज के लिए घातक है। बंगाल तथा मद्रास युवती विधवाओं से भरे पड़े हैं। बहुत से युवक जिनमें कि आध्यात्मिक जागरण हैं, दयनीय शब्दों में मुझको लिखते हैं—"प्रिय स्वामी जी, मेरा हृदय उन्नत आध्यत्मिक वस्तुओं के लिये उत्कंठित होता है। मेरे माता पिता को प्रसन्न करना था। उन लोगों ने मुझे कई प्रकार से धमकी दी थी। अब मैं रोता हूं। मैं क्या करूं?" आठ या दस साल की आयु में ही बालकों की शादी कर दी जाती है। जिस समय कि उनको विवाह के बारे में कुछ भी ज्ञान नहीं रहता। बच्चों के भी बच्चे उत्पन्न होते हैं। बच्ची मातायें हैं। अठारह वर्ष के एक लड़के के भी तीन लड़के हैं। कितनी दयनीय अवस्था है। दीर्घायु नहीं है। सभी अल्पायु हैं। अधिक सन्तानोत्पादन के कारण स्त्री का स्वास्थ्य खराब हो जाता है। इस तरह से अनेकानेक रोग पैदा होते हैं।

पचास रुपये मासिक वेतन पाने वाले किरानी के ६ बच्चे हैं। और हर दूसरे साल में एक बच्चे की वृद्धि होजाती है। वह कभी नहीं सोचता कि "मैं इतने बड़े परिवार का भरण पोषण किस प्रकार करूंगा? । मैं अपने पुत्रों को किस प्रकार शिक्षित करूंगा? मैं अपनी पुत्री के विवाह का प्रबन्ध किस प्रकार से करूंगा?" कामोत्तेजन में वह अनिष्ट कार्य को बारम्बार करता है। उसमें जरा भी आत्मसंयम नहीं। वह काम का पूर्ण गुलाम है। खरहों की भांति वह सन्तान पैदा करता है और वे बच्चे संसार में भिखारियों की संख्या बढ़ाते हैं। जानवरों में भी आत्मसंयम है। सिंह वर्ष में एक बार ही सिंहनी के पास जाता है मनुष्य ही स्वास्थ्य के नियमों को तोड़ता है।

प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करने के परिणामस्वरूप उसको भविष्य में भारी सजा भोगनी पड़ेगी।

पश्चिम से आपने फैशन तथा पोशाक सम्बन्धी बहुत सी आदतें सीखी हैं। आप नकल करने वाले जीव बन बैठे हैं। परन्तु पश्चिम में लोग तब तक विवाह नहीं करते जब तक कि पूरे परिवार को पालने में समर्थ न होजायं। उनमें अधिक आत्मसंयम है। वे पहले किसी अच्छे काम में लग जाने पर तथा अर्थोपार्जन कर लेने पर ही विवाह की चिन्ता करते हैं। यदि उनके पास पर्याप्त धन नहीं है तो वे आजीवन कुंआरे ही रह जाते हैं। वे इस संसार में भिखारियों की वृद्धि करना नहीं चाहते। जिसने मानव-दुख की विशालता को समझ लिया है वह स्त्री के गर्भ से एक बच्चा भी उत्पन्न करने का साहस कदापि नहीं करेगा।

कम वेतन प्राप्त करने वाला मनुष्य जिसे बड़े परिवार का पालन पोषण करना है उसे घूस लेने के लिये बाध्य होना पड़ता है। वह अपनी समझ खो बैठता है तथा अर्थोपार्जन के लिये कितना भी निकृष्ट कार्य को करने में हिचकता नहीं। ईश्वर की याद नहीं आती। वह राग का गुलाम होजाता है। वह अपनी पत्नी का गुलाम बन जाता है। उसकी मांगों की पूर्त्ति न कर सकने पर वह अपनी पत्नी के व्यंग वचनों को मन मारकर सहता रहता है। उसे कर्म, संस्कार तथा आन्तरिक मानसिक फैक्टरी के कार्य व्यापार का ज्ञान नहीं है। घूस लेना, दूसरों को ठगना, झूठ बोलना आदि की बुरी आदतें उसके चित्त में घुसी हुई हैं तथा भविष्य के हर शरीर में उन आदतों का समावेश हो जाता है। वह आने वाले

जन्मों में भी अपने बुरे संस्कारों को लाता है तथा उसी दगा तथा झूठ की आदत को शुरू करता है। जो व्यक्ति संस्कारों के इस अटल नियम को जानता है क्या वह कभी भी अशुभ कार्यों को कर सकता है ? बुरे कार्यों के द्वारा मनुष्य अपने मन को ही बिगाड़ता है तथा भावी जन्म में चोर या ठग बन जाता है। वह आसुरी स्वभाव से सम्पन्न बनता है। मनुष्य को अपने विचारों भावनाओं तथा कर्मों में बहुत ही सावधान रहना चाहिये। वह सदा अपने विचारों तथा कार्यों का निरीक्षण करे तथा दिव्य विचार, दिव्य भावना को प्रश्रय दे साथ ही दिव्य कार्यों को करे, क्रिया के अनुरूप ही प्रतिक्रिया भी होती है। इस नियम को याद रखना चाहिये। तब वह बुरे कार्यों को नहीं करेगा।

गीता में इस बात पर बल दिया गया है कि वही मनुष्य सुखी है जिसने अपनी राजसिक प्रकृति पर विजय पाई है। आप अपने महान् शत्रु राग पर आसानी से विजय पा सकते हैं यदि आप पूरे हृदय से धारणा तथा एकाग्रता के साथ आध्यात्मिक साधना में संलग्न हो जायं। इस जगत में कुछ भी असम्भव नहीं हैं। आहार की शुद्धता अत्यन्त आवश्यक है। दूध, फल, दाल, गेहूं आदि सात्विक आहार को ग्रहण कीजिये। अचार, चटनी, खटाई आदि गरम चटपटे पदार्थों का परित्याग कीजिये। सरल आहार कीजिये। विचार कीजिये। ओ३म् का जप कीजिये। आत्मा पर ध्यान कीजिये। विचार कीजिये कि "मैं कौन हूं ?"। याद रखिये आत्मा में वासना नहीं है। वासना मन में ही है। अलग अलग सोइये। चार बजे प्रातः उठिये। महामंत्र अथवा "ओ३म् नमः शिवाय"

अथवा "ओ३म् नमो नारायणाय" किसी भी मंत्र का जप अपनी इच्छा तथा रुचि के अनुसार कीजिये। सर्व शक्तिमान, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक आदि ईश्वरीय गुणों पर ध्यान कीजिये। नित्य गीता का एक अध्याय पढ़िये। मृत्यु भी क्यों न हो जाय पर झूठ न बोलिये। जब कभी काम प्रबल हो अथवा एकादशी के दिन उपवास कीजिये। उपन्यास पाठ तथा सिनेमा दर्शन का परित्याग कीजिये। हर मिनट को उपयोग में लाइये। प्राणायाम का अभ्यास कीजिये। काम-दृष्टि से स्त्रियों की ओर न देखिये। गलियों में टहलते समय अपने पैर के अंगूठे पर दृष्टि रखिये। तथा अपने इष्टदेव पर ध्यान लगाये रखिये। खाते समय, टहलते समय, ऑफिस में काम करते समय सदा गुरुमंत्र का जप करते रहिये। हर वस्तु में ईश्वर को देखिये। अपनी दैनिक डायरी को नित्य भरिये तथा उसका पालन कीजिये। तथा हर महीने के अन्त में मेरे अवलोकनर्थ भेज दीजिये। नोट-पुस्तक में अपने गुरुमंत्र को साफ रोज लिखिये तथा उस जप पुस्तक को भी मेरे पास भेज दीजिये।

यदि आप उपर्युक्त उपदेशों का अक्षरशः पालन करते हैं तो आप काम को वशीभूत करने में समर्थ रहेंगे। यदि आपको सफलता न मिले तो मेरी हंसी उड़ा सकते हैं। वह मनुष्य धन्य है जिसने काम को वशीभूत कर लिया है क्योंकि वह ईश्वर साक्षात्कार को प्राप्त करेगा। ऐसे महात्मा की जय हो।

शीर्षासन, सर्वांगासन तथा सिद्धासन का प्राणायाम के साथ क्रमशः अभ्यास कीजिये। काम पर विजय पाने के लिये येसभी सहायक हैं। रात्रि में अपने पेट को अति न भरिये। रात्रि के आहार हल्के होने चाहिये। कुछ फल

तथा आधा सेर दूध रात्रि के लिये उपयुक्त आहार है। इस आदर्श को रखिये। सरल जीवन उच्च विचार।

श्री शंकराचार्य के ग्रन्थ जैसे "भज गोविन्दम्" "मणिरत्नमाला" अथवा 'प्रश्नोत्तरी', 'विवेक चूड़ामणि' आदि का अध्ययन कीजिये। सावधानीपूर्वक भर्तृहरि के "वैराग्य शतक" को पढ़िये। वे सभी प्रेरणात्मक हैं। सदा आत्म विचार का अभ्यास कीजिये। सत्संग कीजिये। कथा, कीर्त्तन तथा दार्शनिक चर्चा में उपस्थित रहिये। किसी व्यक्ति के साथ अधिक नाता न जोड़िये अधिक हिलने से घृणा की उत्पत्ति होती है मित्रों की संख्या न बनाइये। उनसे हिलिये मिलिये नहीं। स्त्रियों से अधिक हिलने मिलने से अन्ततः आपका सर्वनाश हो जायगा। इस बात को कभी न भूलिये। मित्र ही आपके वास्तविक शत्रु हैं।

काम-दृष्टि से न देखिये। दिव्य भाव को बढ़ाइये। आप अनेक बार विफल होंगे। बारम्बार इस भाव का अभ्यास कीजिये। शरीर के विकारों पर विचार कीजिये। इससे वैराग्य की वृद्धि होगी।

काम-दृष्टि के लिये अपने को दण्डित कीजिये। रात्रि को भोजन करना त्याग दीजिये। बीस माला अधिक जप कीजिये। काम से घृणा कीजिये। स्त्रियों से घृणा न कीजिये। सदा लंगोट पहनिये। भगवान कृष्ण आपको साहस तथा बल प्रदान करें जिससे आप अध्यात्मिक मार्ग का अनुसरण कर जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर लें।

आत्म-संयम

अपने ऊपर संयम रखना ही आत्म संयम है। अपने आवेगों, रुचियों, काम-वासनाओं, इन्द्रियों तथा मन को

अपने अधीन रखने की शक्ति अथवा आदत ही आत्म-संयम है।

अपने को पहले वशीभूत करो। फिर आप दूसरों को वश में ला सकते हैं।

आत्म-संयम मन को शुद्ध बनाता, विचार शक्ति को मजबूत करता है तथा आपके आचरण को ऊपर उठाता है। यह आपको मुक्ति, शान्ति, सुख तथा आनन्द प्रदान करता है। यह आपकी संकल्प शक्ति को मजबूत बनाता है।

जो स्वयं पर विजय प्राप्त करता है, वह उस सेनापति, से बढ़कर है जो किसी देश पर विजय प्राप्त करता है।

आत्मसंयम वह कुञ्जी है जिससे नित्य सुख तथा अमृतत्व धाम का द्वार खुलता है।

अपने ऊपर विजय प्राप्त करने से बढ़कर अन्य कोई भी विजय नहीं है।

अपने इन्द्रियों तथा मन को नियन्त्रित करो। आप आत्मसाक्षात्कार करेंगे।

आत्मप्रभुत्व प्राप्त कीजिए। अपने ऊपर विजय प्राप्त पाइए। जब तक आपने ऐसा नहीं किया आप अपनी इन्द्रियों के गुलाम ही बने रहेंगे।

जो अपने काम का गुलाम है वह इस पृथ्वी पर सब से निकृष्ट गुलाम है जो अपने काम, इच्छा, तृष्णा तथा इन्द्रियों पर शासन करता है वह वास्तव में राजाओं का भी राजा है। वह आत्म-राज्य का सम्राट् है। उसके लिए राज्य तथा मुकुट आदि कुछ भी नहीं है। उसका साम्राज्य सर्वोत्तम है।

हर प्रलोभन को दबाने से, हर बुरे विचार का दमन करने से, हर कामना अथवा तृष्णा को नष्ट करने से,

हर कटु शब्द को रोके रखने से, हर बुरे कार्य को नियंत्रि
करने से शाश्वत शान्ति तथा सुख के लिए पथ प्रशस्
बनता है।

जो स्वयं पर हुकूमत तथा शासन करता है वह दूस
पर भी शासन तथा हुकूमत कर सकता है।

आत्मसंयम से कठिनाइयों को सहन करने की शक्ति
तथा आपत्तियों का सामना करने की ताकत मिलती है।

आत्मसंयम से सर्वोच्च पुण्य की प्राप्ति होती है। आत्म
संयम मनुष्य का नित्य कर्त्तव्य है। दान तथा वेदाध्ययन
से भी अधिक पुण्यकर है आत्म-संयम।

आत्मसंयम से आपकी शक्ति बढ़ती है। आत्मसंयम
बड़ा ही पवित्र है। आत्मसंयम से आप सारे पापों से
विशुद्ध हो जायेंगे। आप सच्चरित्र होंगे तथा शक्ति प्राप्त
करेंगे। आप परम कल्याण को प्राप्त करेंगे।

आत्मसंयम के समान कोई कर्त्तव्य नहीं है। आत्म-
संयम जगत में सर्वोच्च धर्म है। आत्मसंयम के द्वारा आप
इस जगत में तथा परलोक में सर्वोच्च सुख का भोग करेंगे।
आत्मसंयम से युक्त होकर आप महान् पुण्य प्राप्त करेंगे।

आत्मसंयमी व्यक्ति सुखपूर्वक उठता तथा इस संसार
में विचरण करता है। वह सदा प्रसन्न रहता है। आत्म-
संयम सब से महान् व्रत है।

आत्मसंयम रहित व्यक्ति सदा दुख भोगता है। वह
बहुत ही विपत्तियों को निमन्त्रित कर बैठता है। वे सभी
उसके ही दोषों के कारण उत्पन्न होते हैं। क्षमा, धैर्य,
अहंकार, निष्पक्षता, सत्य, इन्द्रिय दमन, कुशलता, तथा
भद्रता, शील, दृढ़ता, उदारता, अक्रोध, सन्तोष, मधुर
भाषण, दानशीलता, अद्वेष— इन सबों का समन्वय ही

आत्म संयम है।

गुरु के प्रति आदर तथा सबों के प्रति करुणा भी आत्मसंयम है। आत्मसंयमी व्यक्ति दूसरों की निन्दा नहीं करता। आत्मसंयमी व्यक्ति झूठ बोलना, अपहरण करना, निन्दा करना, काम, लोभ, मद, अभिमान, भय, द्वेष, अनादर, आदि का परित्याग करता है।

वह कभी भी कलंकित नहीं बनता। वह द्वेष से मुक्त रहता है।

आत्म संयम द्वारा ही ब्रह्म के उस अमर धाम की प्राप्ति हो सकती है जो हृदय गुहा में छिपा हुआ है।

आत्मसंयमी व्यक्ति सांसारिक सम्बन्धों तथा भावनाओं से उत्पन्न राग-पाशों से बद्ध नहीं होता।

जहां आत्मसंयमी व्यक्ति रहता है वहीं अरण्य है। वही पवित्र स्थान है। आत्मसंयमी के लिए अरण्य की क्या आवश्यकता है? जिसे आत्मसंयम नहीं उसके लिए भी अरण्यवास से क्या लाभ?

आत्मसंयमी व्यक्ति परलोक में महान् पुण्यसंस्कार प्राप्त करता है। वह इस जगत में सम्मान प्राप्त करता है तथा दूसरे जगत में उन्नत पथ पर आरूढ़ होता है। वह ब्रह्म पद को प्राप्त करता है वह मुक्ति प्राप्त करता है।

—:o:—

तीन आदर्श ब्रह्मचारी

श्री भीष्म

भीष्म का पहला नाम देवव्रत था। वे महार शान्तनु के लड़के थे। इनकी माता गंगादेवी थीं। वे देवता के अवतार थे। किसी श्रापवश उनको इस भू पर जन्म धारण करना पड़ा था।

एक बार महाराजा शान्तनु एक मछुआ-सरदार की लड़की सत्यवती पर आसक्त हो गए। वे उसके पि के पास शादी का प्रस्ताव लेकर गये। मछुआ सरदार कहा—"मैं अपनी लड़की देने के लिए तैयार हूँ पर आपको एक प्रतिज्ञा करनी होगी। मेरी लड़की से उत्प पुत्र को ही अपना उत्तराधिकार प्रदान करेंगे।"

अपने प्रिय पुत्र देवव्रत के रहते राजा यह प्रतिज्ञ नहीं कर सकते थे। वे खिन्न होकर लौट आये। और दुख रहने लगे। देवव्रत को यह बात मालूम हुई। अपने पित का दुख दूर करने के लिए स्वयं वे मछुआ-सरदार के पास गये। उस सरदार के समक्ष ही उन्होंने प्रतिज्ञा की "इस लड़की से उत्पन्न पुत्र ही इस राज्य का उत्तराधिकारी होगा। मैं इस राज्य का त्याग करता हूँ।"

सरदार ने कहा—मैं आपकी शिष्टता की स्तुति करता हूँ। परन्तु आपके पुत्र मेरी लड़की के पुत्र को बलपूर्वक राज्य से हटा सकते हैं।

देवव्रत ने कहा—हे सरदार सुनो! मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं आजीवन नैष्ठिक ब्रह्मचारी बना रहूँगा। जगत की सारी स्त्रियां मेरे लिए माता हैं। मैं हस्तिनापुर के राजा का परम भक्त बना रहूँगा। पुत्र रहित मृत्यु प्राप्त

करने पर भी मैं नित्य सुख तथा अमृतत्व को प्राप्त करूंगा।

स्वर्ग के देवताओं ने पुष्पवृष्टि की तथा कहा—"यह भीष्म प्रबल है।" तब से ही देवव्रत भीष्म कहलाये।

सत्यवती तथा शान्तनु के बीच विवाह हो गया। शान्तनु बहुत ही प्रसन्न हुए तथा उन्होंने अपने पुत्र को यह वरदान दिया—"ईश्वर सदा तुम्हारी रक्षा करे! जब तक तुमको जीवित रहने की इच्छा है तब तक मृत्यु तुम्हारे पास नहीं फटकेगी। मैं तुमको इच्छा-मृत्यु का वर देता हूँ"

भीष्म ने आदर्श ब्रह्मचर्य का जीवन बिताया। महाभारत के युद्ध में वे सब से बड़े योद्धा थे। वे एक दार्शनिक सलाहकार भी थे। वे गुरु, राजनीतिज्ञ तथा धर्म-मर्मज्ञ थे। वे आत्म संयम तथा तितीक्षा के अवतार थे। वे कई दिनों तक शरशैय्या पर पड़े रहे। उन्होंने युधिष्ठिर को राजनीति, धर्म, दर्शन, सामाजिक नीति तथा सदाचार आदि विषयों पर अनमोल उपदेश दिए। उनके उपदेश तथा उनके जीवन का आदर्श आज भी मानव इतिहास में जाज्वल्यामान है। वे आज भी प्रेरणा के स्रोत हैं।

उस भीष्म को मेरा नमस्कार है। हम सभी उनके आदर्शों को अपने जीवन में उतारें। श्री भीष्म जी की जै!

श्री हनुमान जी

श्री हनुमान जी माता अंजना के पुत्र थे। इनके पिता थे वायुदेव। बचपन से ही श्री हनुमान जी की वीरता समुद्र के समान असीम थी।

बचपन में ही वे सूर्यदेव को निगलने के लिए चल पड़े। सूर्य की तप्त किरणें हनुमान जी के शरीर पर पड़ती थीं परन्तु फिर भी वे आकाश की छाती को चीरते हुये

बढ़ते गये। इन्द्र ने क्रोधित होकर इन पर अपने वज्र का प्रहार किया जिसके कारण इनकी हड्डी टेढ़ी हो गई तब से ही यह हनुमान कहलाये।

वे नैष्ठिक ब्रह्मचारी थे। वे आंजनेय, महावीर तथा मारुति के नाम से प्रसिद्ध हैं। वे सब से महान् वीर हैं। वे सात चिरंजीवियों में से एक हैं। वे ब्रह्मचर्य के साकार रूप हैं। वे ज्ञानी शिरोमणि हैं।

हनुमान को अणिमा, लघिमा, गरिमा आदि सारी सिद्धियां प्राप्त थीं। श्री राम ने भी इनको ही सीता की खोज के लिए अपना दूत चुना।

समुद्र लांघ कर लंका पहुंचना सभी वानरों के लिये एक महान् समस्या थी। जाम्बवन्त के द्वारा प्रेरित होकर हनुमान लंका-यात्रा के लिए कटिबद्ध हो गये। उन्होंने सबों में आशा तथा साहस का संचार करते हुये ये शब्द कहे—"मैं उस वायु का पुत्र हूँ जो पर्वतों को ध्वस्त कर देता है। मैं मेरु पर्वत की सहस्र बार परिक्रमा कर सकता हूँ। मैं सारे समुद्र को सोख सकता हूँ। समुद्र को उलांघ सकता हूँ। मैं पर्वतों को ध्वस्त कर सकता हूँ तथा सूर्य और चन्द्रमा का अतिक्रमण कर सकता हूँ।"

इस प्रकार से गर्जन करते हुए हनुमान लंका को पधारे। रास्ते में नागों की जननी सुरसा ने उनके बल, वीर्य, कौशल तथा ज्ञान की परीक्षा की। हनुमान सफल निकले।

लंका में जाकर सीता को उन्होंने राम-अंगूठी दी। लंका-दहन किया तथा सन्देश लेकर वानरों को प्रसन्न करते हुए श्री राम के पास लौट आए। उन्होंने श्री सीता जी की चूड़ामणि श्री राम को प्रदान की।

रावण के साथ युद्ध के समय लक्ष्मण जी के लिये हनुमान जी हिमालय से संजीवनी बूटी लाये।

हनुमान श्रीराम के परम भक्त हैं। वे महान् कर्मयोगी हैं। उनका शरीर वज्र के समान दृढ़ है। वे नव व्याकरण के पंडित हैं।

श्री हनुमान हम सबों को अपना आशीर्वाद प्रदान करें।

श्री हनुमान जी को अनेकानेक प्रणाम।

श्री हनुमान जी की जै!

श्री लक्ष्मण

श्री लक्ष्मण जी महाराजा दशरथ के पुत्र थे। इनकी माता सुमित्रा थी। वे श्री राम के छोटे भाई थे। वे सदा श्री राम के सेवक, आज्ञाकारी तथा अनुगामी थे।

श्रीराम के वनवास का आदेश मिलने पर श्री लक्ष्मण ने अपनी माता, पत्नी तथा सब का त्याग कर दिया। वे श्रीराम तथा श्री सीता की सेवा में सदा तत्पर रहे।

चौदह वर्षों तक वनवास-काल में उन्होंने आदर्श ब्रह्मचारी का जीवन का पालन किया।

सुग्रीव ने सीता द्वारा गिराये गये आभूषणों को एवं वस्त्रों को श्रीराम को दिखाया था। श्री राम ने उनको श्री लक्ष्मण को दिखाया था तथा पूछा था "प्रिय लक्ष्मण सीता के इन आभूषणों को पहचानो। क्या वे सीता के ही हैं?"

लक्ष्मण ने कहा—"मैं कर्णाभूषण तथा बाजूबन्दों को तो नहीं पहचानता परन्तु मैं पैरों की पायल को पहचानता हूँ, क्योंकि मैं सदा उनके पैरों की ही पूजा करता था।"

लक्ष्मण के इन वाक्यों में ही उनकी दृष्टि का सारा रहस्य छिपा हुआ है। उनके लिए सारी स्त्रियां माता थीं। वे माता सीता के चरण की पूजा किया करते थे।

उनका भाव दिव्य था।

ब्रह्मचर्य के बल के कारण ही लक्ष्मण ने मेघनाद को मार डाला।

श्री लक्ष्मण वीर, दूरदर्शी, साहसी तथा आत्मावलंबी थे। वे अपने सिद्धांतों के पक्के थे! वे ठीक समय पर ठीक कार्य को किया करते थे। उन : भ्रातृ प्रेम अद्‌भुत था।

"अपने भाइयों के प्रति प्रेम रखिये। विश्व बन्धुत्व का विकास कीजिए। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कीजिए।"

श्री लक्ष्मण के पदचिन्हों का अनुगमन कीजिए।

श्री लक्ष्मण को अनेकानेक प्रणाम।

हम सभी उनकी कृपा को प्राप्त करें।

स्वास्थ्य तथा ब्रह्मचर्य

१. बहुत से युवक स्वप्नदोष तथा धातु क्षीणता के शिकार बने हुये हैं। इसके कई कारण होसकते हैं।— कब्ज, अति भोजन, उत्तेजक तथा वायुकारक पदार्थ, मलिन विचार, तथा अज्ञान के कारण किये गये दुष्कृत। इसके द्वारा उनके मन में एक प्रकार का भय उत्पन्न होजाता है। परन्तु निराश होने की कोई भी बात नहीं है। संयम (लघु सात्विक आहार) शिष्ट आदतें, स्वास्थ्य के नियमों का पालन, पूर्ण सदाचार तथा शुद्ध विचार के द्वारा इस रोग का पूर्णतः निवारण किया जा सकता है।

२. सर्वप्रथम ईश्वर-भक्ति के द्वारा अपने मन को शुद्ध बनाइये। जप तथा ध्यान का अभ्यास कीजिये।

आध्यात्मिक पुस्तकों का अध्ययन कीजिये। ईश्वर की प्रार्थना कीजिये। ब्रह्मचर्य का पालन कीजिये। स्त्रियों के साथ अनावश्यक रूप से न रहिये। उनमें केवल मातेश्वरी के ही दर्शन कीजिये। सबों के साथ आत्म-भाव रखिये। सिनेमा, अखबार, कुसंगति, बुरे गपशप आदि से दूर रहिये। मन तथा शरीर को किसी उपयोगी काम में लगाये रखिये। रोग की अधिक चिन्ता न कीजिये। यह भी गुजर जायगा। मन में जब बुरे विचार घुसें तो ईश्वर के नाम का जप कीजिये। उसकी प्रार्थना कीजिये। अनुभव कीजिये "ईश्वर की कृपा से अब मैं स्वस्थ हो रहा हूं।"

३. चार बजे प्रातः उठिये। जप तथा ध्यान कीजिये। दस बजे रात्रि को भी सोने से पहले जप तथा ध्यान कीजिये। सोने से पहले शौच कर लीजिये। बाईं करवट सोइये। तीव्र हालत में पीठ के बल तब तक सोइये जब तक कि पूरी तरह से चंगे नहीं हो जाते। शाम का भोजन हल्का होना चाहिये। शाम को भोजन जल्दी ही कर लेना चाहिये। यदि हो सके तो ७ बजे के अन्दर ही अन्दर भोजन कर लेना चाहिये। शाम को अधिकांश दूध तथा फल का आहार कीजिये। सूर्यास्त के बाद ठोस अथवा तरल किसी भी प्रकार का भोजन कीजिये। दूध पीते समय उसमें आदी का रस मिला दीजिये। अथवा दूध को कुचली हुई आदी के साथ मिला कर पीजिये।

४. सदा कौपीन अथवा लंगोटी पहनिये।

५. चाय, काफी तथा अन्य उत्तेजक पदार्थ जैसे मिर्च, अधिक नमक, गर्म वस्तुयें, मसाले, प्याज तथा लहसुन, अधिक मिठाई तथा अचार आदि का परित्याग कीजिये। हल्का तथा सात्विक आहार कीजिये। एकादशी

को उपवास कीजिये।

६. प्रातः काल ठंडे जल में गोता लगाकर स्नान कीजिये। यदि हो सके तो शायं भी भोजन के पहले ठंडे पानी से स्नान कर लीजिये।

७. मल-मूत्र के वेग को कभी न रोकिये।

८. सदाचार के नियमों का पालन कीजिये। निम्नांकित आसनों का अभ्यास कीजिये। शीर्षासन, सिद्धासन, पश्चिमोत्तासन, योग मुद्रा, भुजंगासन, उड्डियान बन्ध तथा नौली क्रिया का भी अभ्यास कीजिये। कुछ मिनटों के लिये गहरी सांस लेने का भी अभ्यास कीजिये। प्रातः सूर्यस्नान कीजिये। धूप में टहलिये। सूर्य नमस्कार कीजिये। दौड़िये, तैरिये, दस मिनट तक के लिये हिप-बाथ कीजिये (पानी के टब में कमर तक पानी रखकर उसमें बैठिये। पैर टब से बाहर रखिये। अथवा तालाब, भील, या नदी में नाभि तक पानी में रखकर स्नान कीजिये।)

९. आप निम्नांकित उपचार कर सकते हैं: एक दिन के लिये नीबू अथवा नारंगी के रस का सेवन करते हुये उपवास कीजिये। एक सताह तक के लिये केवल दूध तथा फल पर ही जीवन निर्वाह कीजिये। उपयु क्त उपचार के समय दूध तथा फल लेते समय एनिमा लेना आवश्यक है।

१०. औषधि "ब्रह्मचर्य सुधा" का सेवन कीजिये। अथवा सोने से पहले पाव भर दूध के साथ कुछ रत्ती भर, कपूर का सेवन कीजिये।

ईश्वरीय ज्योति आपके चेहरों से विभासित हो। ईश्वर आपको स्वास्थ्य दीर्घायु, शान्ति, सम्पत्ति तथा कैवल्य प्रदान करे।

ब्रह्मचर्य सम्बन्धी उपदेश

१. कामुक विचार तथा कामनाओं से मुक्ति ही ब्रह्मचर्य है। यह सभी इन्द्रियों का दमन तथा मन वचन एवं कर्म से भोग का त्याग है। यह नर तथा नारी दोनों के लिए है। ब्रह्मचर्य के द्वारा आप बल की प्राप्ति करेंगे जिससे जीवन के क्लेशों का अतिक्रमण कर सकेंगे। आपको स्वास्थ्य, दीर्घायु, वीर्य, मन की शान्ति, जीवन में सफलता, तितीक्षा शक्ति, तीक्ष्ण बुद्धि, स्मृति शक्ति, मन की धारणा शक्ति, इच्छा शक्ति, जीवन की कठिनाइयों का सामना करने के लिये प्रचुर बल, तथा दिव्य शक्ति की प्राप्ति होगी। आप ईश्वर की भक्ति तथा परम मुक्ति को प्राप्त करेंगे। आपको ब्रह्मचर्य की महिमा का साक्षात्कार करना चाहिये। आप जीवन में ब्रह्मचर्य का संकल्प ले लीजिये।

२. आहारः—अपने आहार में 'यमित बनिये। दूध, फल, गेंहूं (गीता अध्याय १७—८) जैसे सात्विक आहार का सेवन कीजिये। चटपटे पदार्थ लहसुन, प्याज, मांस, मछली, अलकोहल इत्यादि कामोद्दीपक हैं। उनका पूर्णतः परित्याग कीजिये। विलासपूर्ण भोजन का परित्याग कीजिये। सरल आहार कीजिये। मसाले, अचार, चाय तथा काफी आदि का पीना छोड़ दीजिये। धूम्रपान छोड़ दीजिये। उपवास के द्वारा ब्रह्मचर्य में सहायता मिलती है। समय समय पर उपवास लीजिये। एकादशी के दिन उपवास कीजिये। यदि यह सम्भव न हो तो दूध तथा फल का सेवन कीजिये। मिठाई खाने में थोड़ा सा संयम रखिये। अच्छा होगा कि आप चीनी का त्याग एकदम कर डालें। भूने हुये पदार्थों का सेवन करना भी त्याग दीजिये। ऐसे

भोजन न कीजिये जो पेट में जाकर कब्ज आदि को पैदा करते हों तथा शरीर में गर्मी पैदा करते हों। उत्तेजक आहारों का त्याग कीजिये। ताजे फल, मेवा, तथा दूध, तथा सात्विक भोजन ब्रह्मचर्य के अनुकूल हैं। अच्छा स्वास्थ्य रखने के लिए ही भोजन कीजिये। स्वाद के लिये कभी भी भोजन न कीजिए। धीरे धीरे खाइए तथा खूब चबाकर खाइए।

३. विचारः—विपरीत लिंग के विषयमें न सोचिए। लैंगिक विचारों को रोककर मन को दिव्य, शुद्ध तथा ईश्वरीय विचारों से पूर्णतः भर डालिए। मन को पूर्णतः 'लग्न रखिए। सदा ही अपने शरीर तथा मन को किसी न किसी उपयोगी काम में लगाए रखिए। दिलचस्पी लीजिए तथा अपने काम में सुख का अनुभव कीजिए। भीष्म, हनुमान आदि अखण्ड ब्रह्मचारियों का चिन्तन कीजिए तथा उनके द्वारा प्रेरणा ग्रहण कीजिए। अलिंग आत्मा से तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित कीजिए। आत्मा में लिंग नहीं, सदा जप कीजिए—"ओ३म् अखण्ड सच्चिदानन्द आत्मा"। विचार का अभ्यास कीजिए। अपने मन में यह बात अच्छी तरह से जमा लीजिए कि विषय भोग तथा लैंगिक सुख विषाक्त हैं, भ्रामक हैं, मिथ्या तथा दुखद हैं। ब्रह्मचर्य में कमी ही जीवन में बहुत से रोगों तथा क्लेशों का कारण बन जाता है। ऐसा भाव रखिए कि सभी स्त्रियां मातेश्वरी की ही स्वरूप हैं। उनको मानसिक नमस्कार कीजिए। मन ही मन उनको नमस्कार कीजिए तथा माता समझिए। मानसिक जप कीजिए "ओ३म् दुर्गायै नमः।" स्त्रियों के चरणों की ओर देखिए। थोड़ा मिलिए। जब बहुत आवश्यक हो तो बहुत अल्प

बोलिए। अनुभव कीजिए कि "ईश्वर की कृपा से मैं हर दिन अधिकाधिक शुद्ध बनता जा रहा हूं।" कामुक नेत्रों, बुरे विचारों से, स्त्रियों की ओर न देखिए। जब सौन्दर्य आकृष्ट करे तो आप ईश्वर का स्मरण कीजिए। जो कि सौन्दर्य का स्रष्टा है।

४. जब मन में अशुभ विचारों के बादल आने लगें, तो सद्ग्रन्थों का अध्ययन कीजिए। ईश्वर की प्रार्थना कीजिए तथा उसके नामों का उग्रता के साथ जप कीजिए। ऐसा भान कीजिये कि ईश्वर सदा आपके साथ ही है। इष्ट देवता की मूर्त्ति को अपनी आंखों के सामने लाइए। अपने दिव्य स्वरूप की याद कीजिए। अलिंग, शुद्ध आत्मा के साथ अपना तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित कीजिए। काम–वृत्ति का साक्षी मात्र बनिए। विचार कीजिए कि यह कामना किसकी है? कुछ प्राणायाम कर लीजिए। कम से कम शारीरिक ब्रह्मचर्य का तो पालन कीजिए ही यद्यपि मन पूर्णतः वश में न आवे। उपवास कीजिए। ठंडे जल से स्नान कीजिए। विवेक, इन्द्रियपरायण जीवन के क्लेशों का स्मरण कर बुरे विचारों को दूर भगा दीजिए। मन को मोड़ कर दूसरी दिशा की ओर लगा दीजिए। प्रेरणात्मक पुस्तकों को पढ़िये। बीस प्राणायाम कीजिए। कामुक विचार आ का शत्रु है। उसके साथ अपने तादात्म्य सम्बन्ध न रखिए। यह शीघ्र ही गुजर जायगा। उसके प्रति सदा उदासीन बनिए। मन को दिव्य विचारों से भर डालिए। शुद्धता का विचार कीजिए।

५. प्रातः ही ठंडे जल में डुबकी लगाकर स्नान कीजिए। यदि होसके तो शायं को भी स्नान कीजिए। १५ मिनट के लिए प्रति दिन हिप बाथ भी कीजिए।

६. ईश्वर की भक्ति तथा ईश्वरार्पण आपको ब्रह्मचर्य की साधना में सहायता देगा जप, कीर्त्तन, स्वाध्याय, प्रार्थना, सद्ग्रन्थों का अध्ययन—ये सब कामुक विचारों को विनष्ट कर डालेंगे। ईश्वर के प्रति गम्भीर भक्ति का विकास कीजिए। नित्य प्रति उसकी कृपा के लिए प्रार्थना कीजिये। ईश्वर के प्रेम में वृद्धि लाइये। तब निम्न विक्षेप स्वतः ही दूर हो जायेंगे। जितना भी संभव हो सके ईश्वर के नाम का जप कीजिये। प्रातः चार बजे उठकर जप तथा ध्यान का अभ्यास कीजिए। रात्रि को भी ऐसा कीजिए। ईश्वर की भक्ति के द्वारा आप आसानी से कामुक शक्ति को ओजस् में रूपांतरित कर सकते है।

७. सिनेमा, उपन्यास, अखबार, बेकार की गपशप तथा कुसंग का परित्याग कीजिए। केवल प्रेरणात्मक आध्यात्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय कीजिये। सत्संग कीजिये। आध्यात्मिक जीवन बिताइये। सदा कौपीन या लंगोटी को पहनिये। जब तक आप ब्रह्मचर्य में संस्थित न हों तब तक सतत प्रयास की आवश्यकता है। सदा सावधान रहिये। जब आप अपने संकल्प पालन में विफल हों स्वयं को दण्डित कीजिये। रात्रि का आहार त्यागिये। अधिकाधिक जप कीजिये—यही दंड है।

८. केवल शुभ वस्तुओं को ही देखिये। शुभ बातों का श्रवण कीजिये। केवल शुभ विचारों को ही मन में आने दीजिये। सारे गन्दे दृश्य, संगीत तथा वार्त्तालाप का त्याग कीजिये।

९. ब्रह्मचर्य के आठ खंडनों का परित्याग कीजिये।

(अ) दर्शन : (विपरीत लिंग के व्यक्ति को कामुक दृष्टि से देखना)।

(ब) स्पर्शन : विपरीत लिंग के व्यक्ति को छूने, आलिंगन करने तथा उसके निकट रहने की कामना करना।

(स) केलि : उसके साथ खेलना तथा विहार करना।

(द) कीर्त्तन : उसके गुणों का अपने मित्रों में बखान करना।

(च) गुह्य भाषण : गुप्त रूप से बातें करना।

(छ) संकल्प : कामुक विचार रखना।

(ज) अध्यवसाय : पुरुष स्त्री के साथ संभोग ज्ञान की तीव्र कामना।

(झ) क्रिया निवृत्ति : संभोग।

जो उपर्युक्त आदतों से पूरी तरह मुक्त है वही पूरा ब्रह्मचारी है। इनमें से किसी भी एक व्रत का खण्डन हो जाने पर ब्रह्मचर्य का खण्डन हो जाता है। सदा इस बात का स्मरण रखिये।

१०. गृहस्थों के लिए ब्रह्मचर्य : जो शीघ्र ही उन्नति करना चाहते हैं उनको वैवाहिक जीवन में भी ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। गृहस्थ लोगों को अपने सुखोपभोग में संयमित बनना चाहिए। अच्छे स्वास्थ्य इत्यादि की दृष्टि से भी इसकी आवश्यकता है। एक महीने के लिए ही ब्रह्मचर्य का व्रत ले लीलिए। तब उसको तीन महीने तक बढ़ा लोजिए। आपको कुछ शक्ति मिल जायगी। धीरे धीरे आप इसको बढ़ाते चले जाइए।

ब्रह्मचर्य के लिये कुछ नुस्खे

(क) शीर्षासन ५ मिनट

सर्वांगासन १० मि०

उपवास एकादशी के दिन, हर दूसरे रविवार।

	जप	१ घन्टा
	गीता स्वाध्याय	१ घन्टा
	ध्यान	३० मिनट
(ख)	सिद्धासन	२० मिनट
	प्राणायाम	३० मिनट
	दूध तथा फल	रात्रि
	उड्डियान बन्ध	तीन बार।

(मन को अध्ययन, फुलवारी लगाना, कीर्तन इत्यादि में पूर्णतः लगाये रखिये)

(ग)	कीर्तन	३० मिनट
	प्रार्थना	३० मिनट
	सत्संग	१ घन्टा
	त्रिफला जल	प्रातः
	ध्यान	३० मिनट से लेकर तीन घंटे तक
(घ)	ओ३म् या अपने इष्ट देवता पर त्राटक १० मिनट तक।	
	हरे राम भजन तथा जप	३० मिनट
	गर्मी में बादाम मिश्री शर्बत	प्रातः

साधक क से घ तक में किसी भी एक का अभ्यास कर सकते हैं। अथवा (क) को (ग) या (घ) से मिला सकते हैं। अथवा क, ख, ग, मिला कर अपने अधिकाधिक लाभ के लिए अभ्यास कर सकते हैं।

जप के लिये मंत्र

ओ३म् नमो भगवते वासुदेवाय — भगवान श्रीकृष्ण के भक्तों के लिये।

ओ३म् नमो नारायणाय — विष्णु।

ओ३म् नमः शिवाय — शिव।

श्री राम या श्री सीताराम — राम

गायत्री — ब्राह्मणों, क्षत्रियों, तथा वैश्यों के लिये।

ओ३म् या सोहम् — निर्गुण उपासकों के लिये।

प्रातः शुद्धता पर ध्यान कीजिए तथा दिन में उसका अभ्यास कीजिये। "शुद्धता मेरा लक्ष्य है" "शुद्धता ही परिपूर्णता है" "शुद्धता ही परम कल्याण है" "मैं शुद्ध स्वरूप हूँ"—ये सब शुद्धता के ऊपर ही ध्यान हैं।

ईश्वर की कृपा आप सबों को प्राप्त हो।

—:o:—

ब्रह्मचर्य संबंधी तीन प्रेरणात्मक पत्र

१—ब्रह्मचर्य का अभ्यास

ईश्वर की भक्ति का विकास कीजिये तथा उसकी कृपा प्राप्त कीजिये। उसके लिये अपनी पिपासा को बढ़ाइये। इससे सारे निम्न आकर्षण नष्ट हो जायेंगे।

विचार का अभ्यास कीजिये। विषय-जीवन से दुख, विपत्ति तथा रोग पैदा होते हैं। ब्रह्मचर्य के द्वारा अमृतत्व, शान्ति, बल, स्वास्थ्य, दीर्घायु, स्मरण शक्ति, संकल्प शक्ति आदि की प्राप्ति होती है। आत्मा सदा लिंग रहित है। इसको याद रखिये।

चार बजे प्रातः उठिये। ध्यान, जप, कीर्तन, प्रार्थना तथा गीता जैसे प्रेरणात्मक ग्रन्थों का स्वाध्याय कीजिये। मन को शुद्ध विचारों के द्वारा भर दीजिये।

सत्संग कीजिये। सिनेमा, उपन्यास तथा सारे प्रकार की कुसंगति का परित्याग कीजिये। शीर्षासन, सर्वांगासन, सिद्धासन, उड्डियान बन्ध का अभ्यास कीजिये। शरीर तथा मन को सदा किसी न किसी उपयोगी कार्य में लगाये रखिये। अपने कार्य में सदा दिलचस्पी लीजिये। सात्विक आहार कीजिये। मिताहार कीजिये। समय समय पर उपवास कीजिये। ऐसा भाव रखिये कि सारी स्त्रियां आपकी माता हैं। या जगन्माता की स्वरूप हैं। उनको मानसिक नमस्कार कीजिये। उनके साथ अधिक न मिलिये।

जब सौंदर्य मन को आकृष्ट करे तो उस ईश्वर की याद कीजिए जो कि उस सौंदर्य का स्रष्टा है। शुद्धता का चिंतन कीजिये।

सदा कौपीन या लंगोट पहनिये। भावना कीजिये "मैं नित्यप्रति अधिकाधिक शुद्ध बनता जा रहा हूँ।" भीष्म, हनुमान आदि अखंड ब्रह्मचारियों के जीवन की याद रखिये। आप बल तथा प्रेरणा को प्राप्त करेंगे।

सरल जीवन बिताइए। विलासिता का परित्याग कीजिए। जब तक आप ब्रह्मचर्य में संस्थित न हो जांय तब तक आपको सतत तथा उग्र प्रयास करने की आवश्यकता है।

ईश्वर आपको शुद्धता तथा भक्ति से परिपूर्ण बनावे।

आपका निजस्वरूप

—स्वामी शिवानन्द

२:—ब्रह्मचय का अभ्यास

ईश्वर-सन्तान,

यदि आप मन को ध्यान, जप, प्रार्थना, सद्ग्रन्थों के स्वाध्याय तथा विचार में लगाए रखें तो काम-वासना कमजोर पड़ जायगी। (जप आदि) नियमित साधना के द्वारा मन शुद्ध बन जाता है। विषयों का चिंतन न कीजिए। इन्द्रियों का दमन तथा मन शमन दोनों का अभ्यास एक ही साथ किया जाना चाहिये। मन पर दोनों ओर से आक्रमण करना चाहिए। बाहर से इन्द्रियों का दमन भीतर से कामनाओं का उन्मूलन। तब आपका मन शीघ्र ही वश में हो जायगा।

ब्रह्मचर्य के अभ्यास के द्वारा मनुष्य अपने चरम लक्ष्य को प्राप्त करता है। काम-वृत्ति अत्यन्त शक्तिशाली है। इसको वश में लाने के लिए उग्र साधना की आवश्यकता

है। जप, कीर्तन, ध्यान आदि के द्वारा काम-शक्ति को दिव्य ओजस् में परिणत करना होगा। काम-वृत्ति के संपूर्ण विनाश के लिए ईश्वर की कृपा का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए आपको समय लगेगा। धैर्य को बनाए रखिए। ध्यान से प्रचुर आध्यात्मिक शक्ति की प्राप्ति होती है। वह शक्ति काम-शक्ति को दिव्य ओजस् शक्ति में रूपांतरित कर डालती है। ब्रह्मचर्य के बिना आध्यात्मिक उन्नति तथा ईश्वर साक्षात्कार संभव नहीं है। अतः पूर्ण ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित होइये। पवित्रता के मार्ग में ब्रह्मचर्य प्रथम चरण है।

जप के अभ्यास के द्वारा ब्रह्मचर्य में सहायता मिलती है। मन में ईश्वर की मूर्ति के विराजमान रहने से काम का प्रवेश नहीं हो सकता। ईश्वर पर मन को एकाग्र करने से आप कामावेग से मुक्त हो जायेंगे। जितना अधिक आप ईश्वर का चिंतन करेंगे उतना ही आपका सांसारिक झुकाव कम होता जायगा। आत्मसंयम मन की शक्ति को दिव्य मार्ग में लगा देता है। मन को उन्नत वस्तुओं की ओर लगा दीजिए। जीवन में महान् आदर्श को रखिए।

ईश्वर आपको पूर्ण ब्रह्मचर्य का आशीर्वाद दे।

आपका आत्मस्वरूप

—स्वामी शिवानन्द

३:—काम का दमन

अमर ज्योति,

ईश्वरीय मार्ग पर चलने के लिए कठिन प्रयास कीजिए। यदि गिरें तो फिर उठ जाइए तथा संग्राम करते

जाइये। आप अन्ततः विजयी होंगे। बुरे विचारों की ओर जरा भी ध्यान न दीजिये। उन्हें मरा हुआ ही मानिए। उन्हें अपनी दृष्टि में सदा नीचे रखिए। विफलताओं को भूल जाइए। कामनायें तथा कुवृत्तियां यदि बनी रहें तो निराश न होइए। आप अपनी साधना में सदा नियमित हैं तो वे आप ही विलीन हो जायंगी।

मन में जब मलिन विचारों के बादल उमड़ने लगें तो गीता जैसे सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय कीजिए। ईश्वर से प्रार्थना कीजिए। उग्रतापूर्वक उसके नाम का जप कीजिए। कीर्त्तन कीजिए। ऐसा अनुभव कीजिए कि ईश्वर सदा आपके साथ ही है। कुछ प्राणायाम कीजिए। अथवा गहरा श्वास-प्रश्वास लीजिए। अलिंग शुद्ध आत्मा के साथ अपनी एकता स्थापित कीजिए। काम-वृत्ति का साक्षी बनिए। ठंडे जल में स्नान कीजिए। यदि मानसिक ब्रह्मचर्य में आप समर्थ न हों तो कम से कम शारीरिक ब्रह्मचर्य का तो पालन कीजिए ही। बुरे विचार आपके शत्रु हैं। उनके साथ तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित न कीजिए। उदासीन रहिए। वे गुजर जायेंगे। मन को शुद्ध दिव्य विचारों के द्वारा परिप्लावित कर डालिए। ईश्वर अथवा शुद्धता का चिंतन कीजिए। सावधान रहिए। तथा बुरे विकल्पों को आरम्भ में ही भगा डालिए। मन में ईश्वर की मूर्ति को लाइए। उसकी कृपा आपको सहायता देगी।

प्याज, लहसुन, तथा मांस का परित्याग कीजिए। उनके द्वारा कामोद्दीपन होता है। सदा याद रखिए "विषय सुख आते हैं तथा ठहरते नहीं हैं। मांस तो मिट्टी का

सर्वं ब्रह्मार्पणम्

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा

श्लोक

कायेन वाचा मनसेन्द्रियै-र्वा
बुद्धयात्मना वा प्रकृतेः स्वभावात् ।
करोमि य द्यत् सकलं परस्मै
नारायणायेति समर्पयामि ॥

अर्थ

ापने शरीर से, वाणी से, मन से, इन्द्रियों से, बुद्धि
अथवा प्रकृति के स्वभाव से जो कुछ करता हूँ, वह स
वरुप नारायण को समर्पण करता हूँ ।

—o—

लोका—स्समस्ता—स्सुखिनो भवन्तु
लोका—स्समस्ता—स्सुखिनो भवन्तु
लोका—स्समस्ता—स्सुखिनो भवन्तु
ओउम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः